रूसी वेश्यालय

यामा

(Yama the Pit का हिन्दी अनुवाद)

द्वितीय भाग

मूल : अलेक्जेंडर क्युप्रिन
अनुवाद : जैनेन्द्रकुमार

पूर्वोदय प्रकाशन
७, दरिया गंज, दिल्ली.

मूल्य : २.50 न० पैसे

उद्योगशाला प्रेस, किंग्सवे, दिल्ली में मुद्रित और पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली की ओर से दिलीपकुमार द्वारा प्रकाशित ।

दूसरा भाग

दस वर्ष बीत गए हैं, पर आज भी यामकासके निवासियोंको उस दुर्द्धर्ष वर्षकी याद है, जब एक-पर-एक अभागी, कराल, लहूसे लुहान घटनाएं हुईं. आरंभ छोटे-मोटे उपद्रवोंके सिलसिलेसे हुआ, अंत यह कि एक रोज सरकारने सबका खातमा ही कर डाला. ये जो यहां वेश्यावृत्तिके कानून सम्मत मानो मन्दिर-पर-मन्दिर बने हुए थे सो सब एक दिन ढह गए. और उसपर बसर करनेवाले जीव-जन्तु अस्पतालोंमें, कुछ जेलोंमें और कुछ बड़े-बड़े नगरोंके गली-कूंचोमें फैल गए. उन वेश्यालयोंकी मालिकनोंमेंसे दो-एक अब भी जीती हैं. वह जर्जर हो गई हैं, सठिया चली हैं और बड़े खिन्न, विषण्ण, और शंकित मनसे उस वर्षकी संहार लीलाकी याद करती हैं.

जैसे बोरेमेंसे आलू निकल पड़े, लगभग उसी भांति जाने कहांसे टंटे. बखेड़े, डाके, रोग, हत्या और आत्महत्याएं होने लगीं. पता न चला, आखिर बात क्या है. आप-ही-आप मानो स्पर्द्धामें ये उपद्रव एक-पर-एक बढ़ते चले गए, फैलते चले गए. जैसे उनकी फसलका ही यह मौका हो. जाड़के दिनोंमें लड़के बर्फको लोंधा बनाकर उसे जितना लुड़काते हैं उतना ही बड़ा वह होता जाता है. तब फिर बड़ी मुश्किलसे धकेलनेपर नीचे गिरता है. मगर सरका कि फिर धड़धड़ाता लुढ़कता ही चला जाता है ! वैसा ही यहां हुआ. बूढ़ी मालिकनों और रक्षिकाओंको अलबत्ता उसका पहलेसे कुछ पता न लगा, पर भीतर-ही-भीतर उस भयंकर वर्षमें घटने वाली दुस्सह विपदाओंका कुछ विलक्षण पूर्वाभास हो चला था.

वास्तवमें जहां कहीं जीवन सामुदायिक है पारिवारिक संबन्धोंके

कारण, समव्यवसायी होनेके कारण, अथवा जातीय एकता होनेके कारण जहां पारस्परिक सम्बन्धोंकी ग्रंथि मानो सामूहिक व्यक्तित्व खड़ा कर देती है, वहां ही यह देखा जाता है. घटनाएं घटती हैं तो मानो बन्द होना नहीं जानतीं. एक बीती कि उसके सिरपर दूसरी, फिर तीसरी, विपदाएं आती ही चली जाती हैं. घटनाओंके आकस्मिक विस्फोट, उनके व्यापक प्लावन, गतानुगतिकता, उनका तरतम सम्बन्ध, उनकी अविच्छिन्न लड़ीके रूपमें चलनेमें जो एक अज्ञेय नियम व्याप्त रहता है, हम जहां चाहें देख सकते हैं. पुराने लोगोंने जैसा कह रक्खा है, कुनबोंमें, बिरादरियोंमें यह नियम अधिकतर देखनेमें आता है. एक मरता है तो देखा गया है कुनबेका कुनबा, न कुछ समयमें कालके गालमें चला गया है. एक गया कि वहीं दूसरा, फिर तीसरा. कई मुहावरे इसी आशयके बन गए हैं. मठोंमें, सरकारी विभागोंमें, रेजीमेन्टोंमें, शिक्षालयों और संस्थाओंमें, जहां अनेक शताब्दियोंसे जीवन मंदगामिनी सरिताकी भांति सहज भावसे बहता रहा, दिन आता है कि एक साधारण-सी घटना घटती है, और बस उलट-पलट शुरू हो जाती है, लोग मरने लगते हैं, दिवाले पिटते हैं, बीमारियां आती हैं, और मालूम होता है जैसे उस समुदायके व्यक्तियोंने आपसमें षड्यन्त्र रचकर, यों ही जान देने और जान लेने, पागल हो जाने, चोरी करने या और ऐसे ही काम करनेकी ठान ली है. जगह-पर-जगह खाली होती हैं, और भरी जाती हैं नए; आदमी आते हैं, पुराने गायब हो जाते हैं. और साल दो-एकमें पता चलता है कि सभी नया हो गया है और पुराना कुछ भी नहीं रह गया है. बस, संस्थाकी इमारत नहीं गिरी तो नहीं गिरी, बाकी पूरा कायाकल्प हो गया है. और कौन जानता है कि हमारी सामाजिक संस्थाएं, सार्वजनिक संगठन जिस विराट नियमके आधीन हैं, नगर, साम्राज्य, जातियां, राष्ट्र और क्या मालूम सौर मंडल-ग्रह-नक्षत्र-युक्त विश्व उसी नियमके अधीन नहीं है? वैसा ही कुछ अनिर्दिष्ट दुर्भाग्य याम्सकायाकी बस्तीपर टूट कर पड़ा. बस्ती देखते-देखते लुट गई और उजड़ गई. उस जनरव संकुल यामाकी जगह आज एक शान्त, उजड़ा, बे-बस-सा खेड़ा रह गया है, जहां छोटे

छोटे किसान, कुछ तातार, कुछ गडरिये, आसपासके कस्साब खानोंमें काम करनेवाले कसाई, और कुछ इसी तरहके लोग रहते हैं. यहांके रहनेवालोंकी दरख्वास्तपर उसे गोल्युवावका नाम दे दिया गया है. गोल्युवाव मुकामी गिरजाघरका मुन्तज़िम था और पन्सारीकी दुकान करता था. इस भाग्यके प्रकोपकी पहली लहर यहां गर्मियोंके दिनोंमे आई. वार्षिक मेलेके दिन थे. इस साल मेलेमें खास रौनक थी. इस अभूतपूर्व समारोहके कई कारण थे. आदमी भी बहुत आए थे और उसमें रुपया भी लाखों इधरका उधर हो गया था. कारण यह था कि पास ही खांडकी फैक्टरी खुली थी और इस साल गेहूं, और खासकर गन्नेकी फसल खूब हुई थी. नहर खोदनेका और बिजलीकी ट्राली चलानेका काम भी चल रहा था. साथ सौ-पचास मील लम्बी एक सड़क भी बनाई जा रही थी. और सबसे बड़ी बात यह थी कि सारे कस्बेमें, सब बैंकरों, व्यवसाइयों, और जमीदारोंमें मकान बनवानेकी होड़ सवार हो गई थी. गांवके आस-पास झरबेरियोंकी तरह ईंटके भट्टे खड़े हो गए थे. एक विशाल कृषि प्रदर्शनीभी तब हुई थी. दो स्टीमर लाइन नई खुल गई थीं. एक पहले से थी ही. तीनोंमें सामान और मुसाफिरोंको ले जानेमें खूब बदा-बदी चलने लगी. होड़ इतनी बढ़ी कि मुसाफिरीका तीसरे दर्जेका किराया पांच रु० से उतरकर चार, तीन, दो, और यहां तक कि एक आने आ गया. अन्तमें यह सोचकर कि इस असमान लड़ाईमें काम कहीं बिल्कुल डूब ही न जाए, एक कम्पनीने तो तीसरे दर्जेके मुसाफिरोंको मुफ्त ही ले जाना शुरू कर दिया. फिर तो मुफ्त सवारीके साथ मुफ्त खाना भी दिया जाने लगा. लेकिन इस नगरका खास काम, नदीके मुहानेपर, इन्जीनियरिंगका था. सैकड़ों हजारों मजदूर जाने कहां-कहांसे उसके लिए आ गए और परमात्मा जाने कितना रुपया उसके लिये लग रहा था.

यह भी कह देना चाहिए कि इसी समय शहर रूसके सबसे प्रसिद्ध और धन-सम्पन्न एक मठके महन्तका अर्द्ध शताब्दि उत्सव मनाया जा रहा था. रूसके कौने-कौनेसे, साइबेरियासे, वहांसे जहां बारह महीने समुद्र जमा रहता है, और बिल्कुल काले सागर और कास्पीयन सागरसे वे

तादाद यात्री उक्त महन्तकी भू-गर्भस्थ अस्थि-खण्डके पूजा-महोत्सवके लिए यहां जमा हुए. यह कहना बस हो कि चालीस हजार आदमी मंदिर के बाड़ेमें रहते और भोजन पाते थे. और जिन्हें रातको वहां काफी जगह न मिलती वे लट्ठोंकी तरह मन्दिरके बड़े दालानों और गलियों-सीमें ही बराबर-बराबर पड़ जाते और रात काट देते थे.

इस सालका मौसम ऐसा था जैसे परियोंकी कहानीमें हो. बाहरके इतने लोग आए थे कि शहरकी आबादी चौगुनी हो गई थी. राज, बढ़ई, मिस्त्री, पेन्टर, परदेसी, इन्जीनियर, किसान, दुकानदार, दलाल, पत्तेबाज, सट्टेवाले, मल्लाह, और ठाली उचक्के, सैरबाज़, चोर सबके सब इकट्ठे होगये थे. सराय कोई खाली न थी कैसी हो. कमरोंके मुंह मांगे दाम मिलते थे. सट्टेका बाज़ार गर्म था. जुएकी दर ऐसी चढ़ गई थी कि कभी न हुई हो ! लाखों-लाख रुपया इस हाथसे उस हाथ पहुंच रहा था. घण्टोंमें अतुल सम्पत्ति बन जाती और उसी घण्टेमें बहुतेरे फर्म बैठ भी जाते. कलके रईस दिवालिये हो गए और मोहताज सेठ बन गए. रोज़का मज़दूर भी इस बहती सोनेकी गंगामें एक-आध डुबकी लगा लेने-का लालच नहीं रोक पाता था. झल्लीवाले, फेरीवाले, राज़, मट्टी ढोने-वाले, टोकरी बुननेवाले, ऐसे-ऐसे लोग अब भी याद करते हैं कि उन गर्मीके एक-एक दिनमें क्या-क्या माल कमाया था. गाड़ीसे तरबूज़ ढोकर लानेवाले हर ऐरे-ग़ैरेको चार-पांच रुपयेसे कम मज़दूरी नहीं मिलती थी. और यह सब बदतमीज़ परदेसी गवांर लोग सस्ता पैसा कमाकर शहर-की चकाचोंधके नशेसे मस्त और मत्त होकर रातकी सौंधी गर्मीमें मत-वालेबने. फूलोंकी महकसे भरकर, ये तीन लाख अतृप्त, स्खलित मनुष्य-रूप पशु अपनी सम्पूर्ण संचित तृष्णासे मांगते थे—"औरत ! औरत!"

एक महीनेके अन्दर-अन्दर भांति-भांतिके मनोरंजनके साधन उप स्थित हो गए, थियेटर, सरकस, कारनिवाल, नाच, स्वांग. बहुतेरे दारू-खाने खुल गए. खानेकी दुकानें, रेस्टोरां, काफे उठ खड़ हुए. जहां जगह मिली वहां ही शराबखाना, या काफे दिखाई देते. जहां चौरस्ता होता, वहीं नए-नए साइनबोर्ड, नई-नई दुकानें खुलतीं. साइनबोर्डपर

लिखा रहता, 'शराब!' लेकिन भीतर शरावके साथ-साथ अंगनाएं स्वयं भी प्रस्तुत रहती. ढली उम्रकी, एक-एक दुकानमें दो-दो तीन-तीन अपना काम चलातीं. बहुतेरे माता-पिताओंको अपने पुत्रोंके घृणित रोगोंके कारण उन दिनोंकी आज भी याद बनी है. जो बाहरसे आए, सेविकाएं मांगते थे. सो आसपासके गांवोंसे हजारों लड़कियां वहां आ-आकर जमा हो गईं. मांग बेहद थी, जरूरी था कि कीमत भी चढ़ जाती. सो बार-सासे रोड्जसे, ओडीसासे, रीगासे, मास्कोसे, सेन्टपीटर्स वगैसे, यहांतक कि विदेशोंसे, अनगिनत कामनियोंके झुण्डके झुण्ड वहां पहुंचने लगे. सीधी-साधी, अपढ़, मामूली सांचेकी देशी ही सब नहीं आईं थीं. पर चढ़े दामोंवाली, बढ़िया फ्रेंच, वीयनाकी, जर्मनीकी, हंगेरियाकी भी अभ्यस्त वनिताएं आई थीं. पैसेका दौर दौरा था. करोड़ों रुपया तरल होकर जीवनके सब विभागोंमें पहुंच रहा था और उन्हें गला रहा था. जैसे कि मानो सोनेका मीठा भीगा कोड़ा सारे नगरको तबाह कर पीट रहा था. जैसे कि सोनेके पानीकी बाढ़ नगरपर चढ़ आई हो और नगरवासी बह रहे हों; पिट रहे हों और मग्न हो. चोरी और हत्याओंकी संख्या आश्चर्य जनक द्रुत वेगसे बढ़ गई. पुलिस मौकोंपर बड़ी तादादमें इकट्ठी होती. पर भीड़के सामने उसके हौसले खो जाते और पैर उखड़ जाते. पर यह भी कह देना होगा कि मोटी घूसें खा-खाकर पुलिस अघाए अजगरको भांति हो गई थी जो डरावना तो है, पर ऊंघता रहता है और कुछ कर-धर नहीं सकता. आदमी हर बातके लिए, या बे-बात, मौतके घाट उतार दिए जाते. ऐसा भी होता कि चलते-चलते कुछ आदमी मिले, एकने पूछा, 'तुम्हारा नाम क्या है?' 'फेडरो' 'ओह, फेडरो, तो लो' और फेड-रोका पेट चाकूसे वहीं चाक कर दिया जाता. ऐसे चाकुओंका अपना अलग नाम ही पड़ गया था. और वहां वे छटे-छटे लोग भी थे जो सरनाम थे और जिनपर मानो इस नगरको गौरव था. दोनों भाई मिट्ठू और झण्डू, गूजर, बल्दू, फिद्दा बढ़ई, कप्तान मित्तरू, सेवल, दुर्जन दर्जी, शेरू और इसी तरहके और कई छटे गुण्डे वहां थे.

और दिन रात बड़ी-बड़ी सड़कोंपर बौखलाई जनता सड़कको घेरे

हुए खड़ीं रहती, चलती रहती, चिल्लाती रहती, 'वह आग लग गई ! वह मरा! यह हुआ,' आदि-आदि. यामकासमें तब क्या नहीं हो रहा था, या क्या हो रहा था, कहना असंभव है, अगरचे वेश्यालयोंकी मालकिनोंने अपने-अपने यहांकी कामनियोंकी संख्या दुगनी तिगुनी करली थी, और उनकी कीमतें बेहद बढ़ा दी थी; लेकिन फिर भी वे बिचारी इन मदमत्त विक्षिप्त लोगोंको नहीं भर सकीं जो टीनके टुकड़ोंकी तरह चांदी फेंकते आते और चांदी फेंकते जाते. ऐसा बहुधा होता था कि ड्राइंगरूममें भीड़की भीड़ आदमियोंकी इकट्ठी रहती, और एक-एक लड़कीके पीछे सात, आठ, और कभी दस-दस आदमी एक वक्त उम्मीदवारीमें रहते. एक उन्मत अमानुषी, घोर, क्रूर कलिकाल था वह.

और ठीक उसी समयसे यामकासके दुर्भाग्यका आरंभ होता है. इस दुर्भाग्यने उसे ख़त्म करके छोड़ा. और यामकासके साथ-साथ हमारी परिचित, पीत,प्रगल्भ, पीताक्षी वृद्धा अन्ना मरकानीके उस वह वेश्यालयको भी.

२

दक्खिनसे उत्तरको एक पेसेन्जर ट्रेन प्रसन्नतासे भागती हुई चली जा रही है. पके गेहूंके सुनहरे खेतों और वृक्षोंके कुन्जोंमेसे चांदीकी उजली नदियोंकी छातीपर छाए हुए लोहेके पुलोपरसे गड़गड़ाती, धुएंके उमड़ते हुए बादल छोड़ती, वह चली जा रही है. दूसरे दर्जेके एक डिब्बेकी खिड़कियां खुली हैं. गर्मी बहुत है और वहां हब्स है. धुएंसे लोगोंके गले खराब हो रहे हैं. रेल के सफर और गर्मीसे लोग थक रहे हैं. लेकिन एक आदमी है जो न थकना जानता है, न चुप होना. चपल है, पुष्ट देह, आनबानके कपड़े पहने है, बातूनी और मिलनसार. उसके साथ है एक स्त्री. दोनों संग-संग जा रहे हैं. प्रगट है (स्त्रीके कारण और भी स्पष्टतासे प्रगट है) कि दोनों नवविवाहित हैं. पुरुष तनिक कुछ प्रेम सम्बोधन अथवा संकेत करता है तो स्त्रीके चेहरेपर झट लाली दौड़

आती है. और जब वह आंख उठाकर उसकी ओर देखती है, उसकी आंखें तारे-सी चमक जाती हैं और तरल हो आती हैं. उसका चेहरा ऐसा सुन्दर है, जैसा प्रेम-मग्न तरुणी कुमारियोंका ही हो सकता है. कोमल, संपुटित गुलाबी ओठ हैं, जिनके चारों ओर अबोध कौमार्यकी छाया है, और आखें ऐसी-काली कि पुतलियोंका अन्तर वृत पहिचानना कठिन होता है.

तीन अपरिचित व्यक्तियोंकी उपस्थितिसे जैसे उस व्यक्तिको कुछ बाधा नहीं है. वह मिनट-मिनटमें स्त्रीसे बेहूदे संकेत करता और बेहूदे सम्बोधन करता है.

पतिकेसे निस्संकोच और निर्व्याज, और प्रेमीके जैसे साधिकार और लोलुप भावसे वह यह सब कर रहा था. मानो सारी दुनियांको वह कह रहा है—'देखो-देखो, हम कैसे खुश हैं. देखकर तुम भी खुश हो न ?' कभी वह उसकी जांघपर हाथ फेर उठता—स्त्रीकी पीन पुष्ट जंघाका आकार कपड़ेके भीतरसे मनोरम दृष्टिगोचर होता था. अभी उसके गालमें चुटकी भरता, अभी अपनी काली तनी मूंछोंकी नोकोंसे उसकी गर्दनपर गुदगुदाता....पर यद्यपि वह उल्लासमें मस्त और प्रफुल्लित दीख पड़ता था, फिर भी उसकी चलती हुई आखें, ओठोंके फैलाव, उसके साफ चेहरेकी लटकती चोकोर ठोढ़ी, जिसके बीचमें तनिक भी वक्र न दिखाई देता था—इनमें कुछ भाव था जो सन्दिग्ध, अनियन्त्रित और अस्थिर था.

इस प्रेमी युग्मके सामने तीन और यात्री बैठे थे. एक संक्षिप्त देह साफ, वृद्ध अवसर-प्राप्त जनरल थे. बाल बाकायदा बहे हुए थे, कुछ लच्छें कनपटी तक आ गए थे. दूसरा हट्टा-कट्टा जमींदार था. उसने अपना नया कालर गर्मीके कारण उतार कर रख दिया था फिर भी मिनट-मिनटपर हांफ रहा था और गीले रूमालसे रह-रहकर अपना मुंह पूंछता था. तीसरा एक नववयस्क फौजी अफसर था. उसे बातूनने बहुत जल्दी अवसर निकालकर अपने सहयात्रियोंको पता हो जाने दिया था कि उसका नाम सामंत यादोराम हीरासिंग है. उसकी बातोंका अन्त

न था. जैसे बन्द कमरेमें, गर्मियोके दिनोंमें कांचकी खिड़कीपर बैठी मक्खी भिन्न-भिन्न करती रहे तो आदमीको बुरा लगता है. वैसे ही लोग इसकी बातोंसे ऊबकर तंग आ रहे थे. पर फिर भी वह जानता था, लोगोंका दिल कैसे लगा लेना होता है. उसने जादूके खेल दिखाए ; हंसी की नई-नई कहानियां सुनाई. जब उसकी स्त्री प्लेटफार्मपर घूमने जाती तो वह ऐसी-ऐसी बातें करता कि जनरल गुप-छिप रसीली हंसी हंसते, जमीदार मानो हिनहिना उठता, जिसमें उसका पेट सुनिदिष्ट रूपमें आगे पीछे, ऊपर नीचे होता दीख पड़ता; और वह नया चिकना अफसर, अपनी विह्वलता और हंसी रोकनेमें असमर्थ होकर, एक ओर मुंह फेर-कर कि लोग देख न लें उत्कण्ठासे लाल हो हो रहता.

स्त्री स्निग्ध, मुग्ध भावसे हीरासिंगकी सेवा कर रही थी. अवसर निकाल निकालकर वह रुमालसे उसका मुह पोछती, पंखेसे हवा झलती, उसके कपड़ोंकी सलवटें ठीक करती. ऐसे समय उसका चेहरा गर्वसे और रससे निखर आता.

"क्या मैं पूछ सकता हूं," वृद्ध, क्षीण जनरलने ज़रा खांसते हुए पूछा, "क्या मैं पूछ सकता हूं, आप, आप क्या काम करते हैं?"

"आह, काम ?" सामंत यादोरामने अत्यन्त विपद सहृदयताके साथ कहा, "बताइए इन दिनों मुझ-सा बेचारा आदमी क्या करे? यही है कि घूम-घामकर कुछ बेच लेता हूं. और कुछ दलाली कर लेता हूं. इन दिनों तो ज़रा उससे छुट्टी है. जी...हां...हि . हि . . हि ! आप लोग खुद समझते हैं. अभी गौना हुआ है—सरसुती लजानेकी क्या बात है. हमेशा तो यह दिन आते नहीं. लेकिन इसके बाद मेरे लिये तो वही घूमना बदा है और वही कसके काम करना. हम फिर सरसुतीके साथ लौटेंगे. सरसुतीके सम्बन्धियोंसे ज़रा मिले जुलेंगे. और फिर मैं रहूंगा और मेरा काम. पहले सफरमें तो मैं स्त्रीको साथ रखनेकी सोचता हूं. देखिये ना, नया ब्याह है, साथ-साथ थोड़ी सैर भी न हुई तो क्या बात रही. और, मैं और भी दो इगंलिश फर्मोंका एजेण्ट हूं. आइए, ज़रा देखनेकी तक-लीफ गवारा करें तो—"

एक छोटे खुशनुमा कपड़ेके बक्समेंसे उसने जल्दीसे कुछ नमनेकी गत्तेवाली किताबें निकालीं. और कुशल दुकानदारकी भांति एक सिरा पकड़कर उन्हें खोलना शुरू किया. एकपर एक करवटें लेती हुई, उन किताबोंकी जिल्द खुलती हुई लटक आई और जाकर रेलके फर्शपर लगीं. "देखिए, क्या नायाब नमूने हैं. बाहर बहुत कम ऐसे बेचे जाते हैं. यह देखिए, यह इंगलिश माल है, और यह रशियन. ज़रा मुकाबला कीजिए. जी-हां, छूकर देखिए, आज़माकर देखिए. आप खुद देख सकते हैं, भला किसी भी तरह देशी चीज़ विलायती तक पहुंच सकती है? और इंगलिश माल देखिए. इसका नाम उन्नति है, इसका नाम सफाई है, इसका नाम कला है. यह निरी निराधार बात नहीं है कि सारा यूरोप हमें जंगली कहता है...सो बस जनाब, जरा इधर-उधर रिश्तेदारियोंमें जाएंगे, कुछ देखे-दाखेंगे, कुछ रईसोंसे भी मिलना है. इसी तरह जरा चले-फिरे, घूमे-घामे, फिर बालगाके रास्ते ज़ादिट्ज़िन और फिर काले सागर होते हुए, अपने वहीं वापस ओडेसा."

"खासी सैर रहेगी !" नए अफसरने सलज्ज कहा.

"हां, साहब, खूब खासी !" सामंत यादोराग सोल्लास सम्मत हो बोला, "लेकिन साहब, फूल बे-कांटे कब होते हैं ? व्यापारीका काम हंसी नहीं है. दस तरहकी दस बातें आनी चाहिएं. उतनी, मैं कहूं मालकी परख नहीं चाहिए, जितनी आदमीकी परख. एक आदमी आर्डर देना नहीं चाहता, लेकिन अब तुम हो कि हार न मानो. अपनी बात कहे जाओ. ऐसे कहो और इतना कहो कि आखिर तुम्हारी बातमें उसे अपना नफा दीखने ही लगे और उससे बिना मुंडे रहा ही न जाए. और मैं हमेशा साफ काम करता हूं. धोके-धड़ीका काम मैं कभी न करूं, चाहे कोई मुझे लाखों दे. कहीं जाकर पूछिए, किसी स्टोरमें, जहां कपड़ेका काम या रेशमकी लच्छियोंका, या बटनोंका--मैं इन दोनों फरमोंका भी एजेण्ट हूं—आप पूछिए, सामन्त यादोराम कौन है ? हर कोई जवाब देगा, ओह, सामंत यादोराम. वह आदमी क्या है, खरा सोना है. इमानदार हो तो ऐसा हो. ऐसा पक्का और ऐसा खरा जैसे हीरा !"

देखते-देखते हीरासिंगने बड़े-बड़े पैकेट निकाल लिए और खोल-खाल कर, भांति-भांतिकी लच्छियां और तरह-तरहके रंगके बटन दिखाने लगा. "अजी, जब कहीं एक जगह बहुतसे एजेन्ट हो जाते हैं. तब काम ज़रा बेमज़ा हो जाता है. दाम तो सब खिंच चुकते हैं और मांग पूरी हो जाती है. मुश्किल तो तब है—तब कुछ बस ही नहीं चल सकता. कोई तुम्हारी बात सुनता नहीं, सब दूरसे हाथ हिला देते हैं. लेकिन और और हैं, मैं मैं हूं. मेरा नाम हीरासिंग है. मैं व्यापारीको ऐसा लूं कि मदारी भी क्या अपने बन्दरको लेता होगा. पर बात बिलकुल बदमजा हो जाती है जब एक ही लाइनके दो एजेन्ट एक जगह पड़ जाएं. फिर उनमें कोई ऐसा उल्लू हुआ कि जो न खुद जाने और दूसरेका काम भी बिगाड़ कर रख दे, तब तो कुछ पूछिए मत. ऐसे समय तो सभी तरकीवें खेलनी होती हैं. या तो उसे ऐसा पिलाया कि पीकर बेसुध हो जाए, अंटाचित. नहीं तो कहीं इधर-उधर ठिकाने लगा दिया. सीधा खेल नहीं है साहब. और फिर मेरी एक लाइन और भी है. नकली आंख और नकली दांतकी जरूरत हो तो मुझे कहिए. पर उसमें कुछ बचत ज़्यादा नहीं है. मैं उसे छोड़नेकी सोचता हूं. कभी सोचता हूं यह सारा ही झगड़ा छोड़ दूं. मैं जानता हूं, जब जवानी हो, तन्दुरुस्ती हो, तब तुम कहीं भी तितलीकी तरहसे उड़ते रह सकते हो. पर जब ब्याह कर लिया है तो बच्चे भी होंगे, कुनबा बढ़ेगा..."

उसने स्त्रीके घुटनेपर कई बार थपका. स्त्री लाल पड़ जाती और असाधारण सुन्दर लगने लगती.

"जी हां, कुनबा क्योंकि हम यहूदी हैं. और परमात्माने हम यहूदियोंको जब और बदकिस्मती दी है तब सबके बदलेमें यह बख्शीश दी है कि कम बच्चे न हों तब तुम्हें अपना एक काम भी चाहिएगा. एक जगह जमकर बैठना भी पड़ेगा. तुम्हारा अपना घर हो, अपना फरनीचर, अपनी रसोई,अपने सोनेके कमरे. हैं ना रायसाहब ?"

"हां-आं...जरूर-जरूर." जनरलने कृपा पूर्वक उत्तर दिया.

"जी हां, जी हां. और सो ही सरसुतीके साथ-साथ मैंने कुछ दहेज

भी लिया. यही कुछ थोड़ी-सी रकम. लेकिन साहब, आप लोग जिसकी तरफ निगाह भी न करें, मेरे लिए तो वह भी दौलत है. पर यह भी कह दूं, अपनी कमाईसे भी मैंने कुछ बचाया है. और मेरी फर्मोंमें मेरी क्रेडिट है. परमात्माने चाहा तो रोटी-दालकी फिक्र हमें न होगी. तीज त्यौहारको, परमात्माका शुक्र है, कुछ चुपड़ी भी खा सकेंगे."

"चुपड़ी ! वाह, चुपड़ी ही क्यों साहब, उससे भी ज्यादा !" मालगुजार ललचाए स्वरमें बोला.

"और हम भी अपना एक फर्म खोल लेंगे. 'हीरासिंग एण्ड संस' है न मुझे आशा है आप लोग हमें ही अपने आर्डर देंगे. कभी आप नाम देखें 'हीरासिंग एण्ड सन्स' तो फौरन याद कीजिएगा कि आपको गाड़ीमें एक आदमी मिला था जो बेचारा प्रेमसे और खुशीसे ऐसा मतवाला हो रहा था, कि क्या बताऊं—"

"जरूर, जरूर !" मालगुजारने कहा.

और सामंत यादोराम तुरंत उसकी ओर मुड़कर बोला, "पर मैं दलाली भी करता हूं. जायदाद बेचनी हो या जायदाद खरीदनी हो, या रेहन रखनी हो, मुझे याद फर्माइए. मुझसे अच्छा आपको कोई न मिलेगा. और मैं सस्ता भी खासा पड़ूंगा. जरूरत हुई तो इस खादिमको याद कीजिएगा" यह कहकर आदाब अर्ज किया और अपने नामके कार्ड निकालकर एक मालगुजारकी तरफ बढ़ाया और एक एक और पड़ोसियों-को भी दिया.

जमींदारने भी जेबमें हाथ डाला और एक कार्ड खींचकर निकाला.

"जनाब इमामहसन बेग" सामंत यादोरामने जोरसे पढ़ा. "बहुत, बहुत खुशी हुई. आपकी महरबानी है. जरूरतके वक्त इस गुलामको..."

"क्यों नहीं. भला मुमकिन है..." जमींदारने कुछ सोचते हुए कहा, "क्यों नहीं. खुशक़िस्मतीने ही हमें इस तरह ला मिलाया है. अभी एक मकानकी बिक्रीके सिलसिलेमें जा रहा हूं...तो आप चाहें...कभी तशरीफ़ लाइएगा. मैं ग्राण्ड होटलमें ठहरता हूं. शायद हमारी आपकी कुछ बात बन जाए."

"ओह, जरूर बन जाएगी. मैं अभीसे कह सकता हूं जनाब इमाम-हसन साहब" हीरासिंगने प्रफुल्लताके साथ कहा. और अपनी उंग-लियोंके सिरेसे जरा-जरा उसके घूटनेको थपथपाया. "जरूर साहब, आप यकीन रखिए, हीरासिंग जिस कामको ले लेगा उसके लिए आप हमेशा उसे याद कीजिएगा."

आध घण्टे बाद सामंत यादोराम और वह नया तरुण अफसर डिब्बे की पटरीपर खड़े साथ-साथ सिगरेट पी रहे थे.

हीरासिंगने पूछा, "क्या जनाब अकसर इधर आया करते हैं ?"

"जी नहीं, पहली बार जा रहा हूं. हमारा दस्ता शरनाबोवमें रहता है. मेरी पैदाइश मास्कोकी है."

"ओह हो, तो आप इतनी दूर कैसे चले आ रहे हैं ?"

"बस कुछ बात ही ऐसी हुई. जब मैं निकला तो और कहीं जगह खाली ही नहीं थी."

"पर साहब, शरनाबोव भी कोई जगह है. खासा भिट कहिए. आसपास उस जैसी खराब बस्ती और नहीं."

"हां, पर किया क्या जाए ?"

"तो क्या यह मतलब जनाबका कि आप वहां जरा सैर और लुत्फ के लिए जा रहे हैं ?"

"जी हां. दो तीन रोज ठहरनेका ख्याल है. असलमें तो मैं मास्को जा रहा हूं. दो महीनेकी छुट्टी मिल गई है. सोचा, रास्तेका यह शहर भी देखता चलूं. सुनते हैं, बड़ी खुशनुमा जगह है."

"अजी आप कहते क्या हैं ? खुशनुमा कि गजबकी खुशनुमा. जनाब विलायती शहरोंकी टक्करकी है. वह सड़कें, बिजलीकी रोशनी, बिज-लीकी ट्राम, थिएटर—एक बार देखिए तो पता चले. कमालकी सैर-गाहे हैं. देखें तो आप अपनी राल चाटने लगें. आपकी नई उम्र है और मैं आपको सलाह दूंगा कि 'आनन्द-विलास' जरूर देखें. तिबोली भी जरूर जाएं, और पास ही जो टापू है उसकी सैर करना कभी न भूलें. वह खास ही जगह है. क्या-क्या नाजनीन..."

अफसर लाल पड़ गया. उसने आखें फेरीं, सकम्प स्वरमें पूछा, "जी, हां! मैंने सुना भी है कि वल्लाह, वहांकी औरतें ऐसी खूब सूरत हैं—"

"खूब सूरत ! अजी खूदा न करे, सच पूछिए तो खूबसूरत औरत वहां एक नहीं है—."

"तो फिर ?"

"फिर क्या ? म्यां, खूब सूरती चीज क्या है...पर, गज़बकी नमकीन होती हैं वे. देखिए ना, कहां-कहांका खून उनकी नसलमे मिला है, पोलिश, दखिनी, यहूदी...तुम जवान हो. मुझे तुम्हारी ज़वानीपर रश्क़ होता है. तुम अकेले हो, और आज़ाद. मेरे दिन होते तो, दोस्त, मैं भी कुछ अपनेको दिखाता. सबसे बढ़कर तो यह चीज़, कि उन्होंने खूनकी वह रवानी और इश्ककी वह तेज़ी पाई है, कि वाह! गोया, जलती शमा हों .. और भी कुछ पता है ?..." हीरासिंगने भेद भरे स्वरमें धीमेसे पूछा.

"क्या?" कंटकित, भीत अफसरने पूछा. "पूछते हो, 'क्या? मुझे यह उन्होंने बताया है जिन्होंने सब शहर छानमारे हैं. जनाब क्या पैरिस, क्या लन्दन, जो नई-नई रतिकी रीतें यहांकी कामिनी जानती हैं वह तुम्हें और कहीं न मिलेंगी. यही तो उनकी खास बात है. क्या-क्या नई तरकीबें उन्हें सूझती हैं कि किसीका ख्याल भी वहांतक न पहुंचे. तसव्वुर करता हूं तो जी में नशा चढ़ जाता है."

अफसरका दम वहींका वहीं रह गया. दबे स्वरसे बोला, "सच ?"

"सच नहीं तो झूठ! लेकिन——लेकिन तुम खुद समझ सकते हो, इशारा काफी होता है. तुममें नया खून है. पर भाई, कभी हम भी अकेले थे. और, तुम जानो, ज़रा ऐसा वैसा काम किससे नहीं हो जाता. अब बात और है...अब तो नसोंमें लहू धीमा हो गया है. और कुनबा साथ बन्ध गया है. पर उन दिनोंकी यादगारें तो कुछ अबभी साथ रखते हैं. ठहरो, मैं तुम्हें अभी दिखाता हूं. पर ज़रा होशियारीसे देखना."

हीरासिंगने झिझककर दाएं-वाएं देखा और जेबसे एक लम्बा छोटा खूबसूरत खरीता-सा निकाला जिनमें बढ़िया ताश रखे जाते हैं और चुपकेसे अफसरके हाथोंमें थमा दिया.

"यह लो, देखो. पर ज़रा होशियारीसे देखना."

अफसर एक-एककर उन कार्डोंको देखने लगा. उनमें अत्यन्त असम्भव और वीभत्स रति-क्रियाओंकी, तरह-तरहके आसनोंकी, इकरंगी और तिरंगी तसवीरें थीं. वे उस समयके चित्र थे जब आदमीका शरीर पशुसे भी पामर और निर्लज्ज हो जाता है. बीच-बीचमें हीरासिंग अफसरके कन्धों परसे उन चित्रोंको देखता हुआ कोहनी मार-मारकर कहता, "न कहोगे ! देखा ? और यह असल पैरिस और वियेना वालियां हैं."

अफसरने आरंभसे अंततक उस संग्रहकी एक-एक तसवीर देखी. जब उसने उन तसवीरोंका बक्स लौटाया, उसके हाथ कांप रहे थे, माथे और कनपटीपर पसीना आ गया था. आंखोंमें तृष्णाकी ओस थी और संगमरमरसे श्वेत गालोंपर लाली.

"पर एक बात है." हीरासिंगने एकदम सोल्लास कहा, "मेरे लिए तो अब सब एकसा है. मैं तो अब, तुम जानते हो, मेरे तो, कहो, दिन बीत गए. बहार गई और पंख जल गए....जो पहले मैं पूजता था, लौ-पर पतंगेकी तरह जिसपर जा जाकर मरता था—सब जला चुका. अब बहुत दिनोंसे देखता था कि कोई मिले और मौका हो, तो यह सब उसे दे दूं. इनसे मुझे कोई खास पैसे-वैसेकी चाह नहीं है. कहो, तुम्हें चाहिए ?"

"हां...मैं...नहीं...अच्छा, लाओ."

"जरूर, जरूर. आपसे मुलाकात हुई है और हम लोग दोस्त ही गए हैं. मैं बस फी कार्ड पचास पैसेके हिसाबसे दे दूंगा. क्या ? महंगे हैं ? तो क्या बात है, आप ही कहिए. खुदा आपका भला करे. आप मुसाफिर हैं, और मैं आपको लूटना नहीं चाहता. चलिए, मैं आपको तीसमें दे दूंगा. क्या, यह भी महंगा है ? तो आइए, पच्चीस पैसे ही सही. बस आइए, हाथ मिलाइए, ज्यादा नहीं. झुकनेकी हद है. ओह, आप भी अजीब जिद्द पकड़े हैं. बीस ? अच्छा, बीस ही सही. पीछे आप मुझे धन्यवाद देंगे. और देखिए मैं जब के—पहुंचता हूं, हमेशा हरमिटेज होटलमें उतरता हूं. बिल्कुल सवेरे, या शामको आठके बाद, मैं वहीं मिला करता हूं. मिलनेमें

कोई दिक्कत नहीं है. और देखिए, मैं ऐसी-ऐसियोंको जानता हूं कि जिनमें एक एक नायाब हैं, मानिंद परी. कहो तो मैं तुम्हें ले चलूँगा. जी नहीं, पैसे की बात नहीं है. पैसेकी क्या हस्ती है. नहीं, तुम्हारे सरीखें जवान, खूबसूरत, तन्दुरस्त मर्दोंके लिए तो वह प्यासीं रहती है. तुम पर तो वह योंही लट्टू हो रहेंगी. नहीं, किसी तरह कुछ पैसेकी जरूरत नहीं है. यही क्यों, तुम्हारी खातिर तो वह खुशीसे अपनी तरफसे कुछ शराब या नाशतेका खर्च कर देगी. तो याद रखिएगा हरमिटेज, हीरासिंग. वह न सही, यो भी याद रखिएगा. हो सकता है कि मैं आपके किसी काम आऊं. और ये कार्ड बस ऐसी चीज हैं कि कभी तुम इन्हें अलग मत करना. एक एकके तीन तीन रुपए मिल सकते हैं. पैसेवाले बड़े बूढ़े लोग अक्सर इनकी खोजमें रहते हैं. तीन रुपए क्या, ज्यादा भी मिल जाए तो अचरज नहीं. और सुनो..."हीरासिंगने झुककर एक आंख चलाई और कानमें कहा, "औरतें भी इन कार्डोंपर मरती हैं. और तुम जवान हो, और खूबसूरत, जाने अभी कितनियोंसे तुम्हें काम पड़ेगा."

पैसे लिये और एक-एक गिनकर उन्हें संभाला. उसके बाद बड़े तपाकसे हाथ बढ़ाकर अफसरका हाथ हिलाया. उस अफसरकी आंखें ऊपरको नहीं उठती थीं. फिर उसे वहीं पटरीपर छोड़कर वह डिब्बेमें पीछे चला गया, ऐसे कि जैसे कुछ हुआ ही न हो.

वह असाधारण वाचाल आदमी था. चलते-चलते एक छोटी-सी तीन सालकी लड़कीके आगे ठहर गया. उसे वह देरसे और दूरसे ताक रहा था और उसकी तरफ तरह-तरहकी सूरतें बना रहा था. जाकर उसके सामने वह पंजोंके बल बैठ गया, तरह-तरहको बोलियां बोलने लगा और विचित्र बोलीमें पूछा, "मैं पूछता हूं, अमाली बच्ची कआं जा लई ऐ. ओ-ओ इत्ती बड़ी बच्ची अकेले जा लई ऐ. अम्मा छात नई ऐ? टिकट अपना आप लिया? और अकेली जा लई ऐ? अले कैछी वद-माछ लड़की है. लड़कीकी अम्मा कआं ऐ?"

इसी ससय एक सुन्दर, ऊंचे कदकी, आत्मविश्वस्त महिला दूसरे डिब्बेसे निकलकर आई और बोली, "बच्चेसे दूर रहो. अनजाने बच्चे

को छेड़ना—यहभी तहजीव है !"

हीरासिह चौंककर एकदम उठ खड़ा हुआ और लबलबाने लगा, "अजी में रुक नहीं सका. कैसी सुन्दर-प्यारी भोली बच्ची है. पूरी खिलौना. मैं, श्रीमती, खुदभी पिता हूं. मेरे भी बच्चे हैं...खुशीके मारे मुझसे रहा न गया."

परन्तु महिलाने लड़कीको हाथसे थामा, और घूमकर अपनी जगह चली गई. हीरासिंह वहीं खड़ा-खड़ा अपनी क्षमा याचना बकता रहा.

दिनके चौबीस घण्टोंमें वह कई बार तीसरे दर्जेके दो डिब्बोंमें आया गया. उनमें एक गाड़ीके बिल्कुल आगे था,और दूसरा बिल्कुल पीछे. एक डिब्बेमें तीन सुन्दर स्त्रियां बैठी थीं, और एक काली दाड़ीवाला रूखा-सा आदमी. हीरासिंह और वह किसी विचित्र भाषामें कुछ विचित्र बातें करते थे और स्त्रियाँ उसकी ओर विचित्र सशंक भावसे देखतीं थीं. जैसे मानो उससे कुछ पूछना चाहती हैं, पर साहस नहीं होता. बस एक बार कोई दोपहर चढ़े उनमेंसे एक पूछ बैठी, "तो यह सच है जो तुमने उस जगहके बारेमें कहा. सब सच है?...तुम जानो मेरे जीमें खटका है."

"आह, आनंदी, तुम्हारा मतलब क्या है ? मैंने कहा है तो सच ही हो सकता है. मैं वही बात कहता हूं जो सोनेसी खरी होती है. सुनो, लेजू—" और डाढ़ीवाले पुरुषकी ओर मुड़कर उसने कहा, "अभी एक स्टेशन आएगा. अगर चाहिए तो लड़कियोंको पूरी-वूरी खरीद देना. यहां पच्चीस मिनट गाड़ी ठहरती है."

"मैं तो पूरी नहीं लूँगी." हिचकिचाते हुए एक लड़की बोली.

"मेरी प्यारी बेला, जो जी चाहे लेना. मैं खुद स्टेशनपर उतरकर जो कहोगी ला दूँगा. लेजू, तुम्हे भी तंग होनेकी जरूरत नहीं है. मैं खुद ही सब कर दूंगा."

दूसरे डिब्बेमें कोई दर्जन डेढ़-दर्जन औरतें थीं. उनके ऊपर एक मोटी ताजी बड़ी-बड़ी भौंहोंवाली एक औरत थी. उसकी लटकती हुई थैलीनुमा ठोढ़ी और कुरतेके नीचे डुलती उसकी छातियाँ और पेट रेलके चलते वक्त ऐसे हिलते थे कि क्या कहें. न इस अधेड़ औरतको, न शेष

तरुणियोंको अपने व्यवसायके बारेमें किसी तरहकी दुविधा या सन्देह था. औरतें बैंचोंपर लेट रही थीं, शराब पी रही थीं, बक रही थी, सिगरेट पी रही थीं. डिब्बेमें बैठा हुआ नर वर्ग इन मादाओंसे कभी-कभी छेड़-छाड़ भी कर लेता था. तब ये भी चीख-चिल्लाकर खुले मुंह ईटका जवाब पत्थरसे देती थीं. जवान लोग उन्हें कभी सिगरेट और दारु पेश कर देते थे.

हीरासिंग यहां कुछ और ही बन जाता था. वह रौब-दोबके साथ पेश आता, लापरवाह हो जाता और कृपापूर्वक बात करता था. दूसरी तरफ उसकी प्रजाजन ये औरते जो बात करतीं अत्यन्त दीन और विनीत स्वर-में. रोमानियाकी, पोलैंडकी, यहूदी, और रूसकी स्त्रियोंके इस विचित्र समूहको उसने एकबार एक निगाह देखा. उसने मालूम कर लिया कि कोई गड़बड़ नहीं है. उसने यहां भी पूरियोंके लिए कहा, फिर उसे वापिस ले लिया. जैसे रेलगाड़ियोंमें अपने ढोर ले जानेवाले होते हैं जो बीचमें स्टेशनों पर आकर जरा उनकी चारे पानीकी देखभाल कर लेते हैं, इस जगह यह व्यक्ति ठीक वैसा ही बन जाता था. इस निरीक्षणके बाद वह अपनी जगह लौट आता और अपनी स्त्रीके साथ पहले जैसा ही खिलवाड़ करने लगता और उसके मुंहसे वैसी ही अनर्गल किस्से कहानियां झड़ने लगती.

कहीं गाड़ी ज्यादा देर ठहरती. तब वह अपने उस मालकी जरा पड़ताल करने पहुँच जाता. पर अपने पड़ोसियोंसे कहता, "देखिए, मेरे लिए जैसे एक चीज, वैसे दूसरी. स्वादमें मुझे स्वाद नहीं. पर मैं अपने पेटका क्या बनाऊँ. जाने स्टेशन पर क्या-क्या गंद भरा खाना मिलता है. पहले अपने तीन चार रुपए उसपर गंवाओ, फिर बीमार पड़ो, और ऊपरसे फिर सौ रुपए डाक्टरपर खर्च करो. तब फिर ऐसे बनो जैसे थे. लेकिन क्यों, सरसुती ?" पत्नीकी ओर मुड़कर कहता, "स्टेशनपर बाहर चलकर कुछ खाओगी, या कहो डिब्बेमें यहीं तुम्हारे पास कुछ भिजवा दूँ ? बोलो, क्या मंगवा भेजूँ ?"

पतिकी इस चिन्तापर पत्नी कृतज्ञ आह्लादसे अरुण पड़ जाती. तरल आखोंसे उसे देखती और मने कर देती—"ओ जी नहीं, तुम्हारी कृपा है,

मुझे भूख नहीं है. मैं अघाई हूं."

तब हीरासिंगने रेलमें चलने वाले उपहार-गृहके मैनेजरसे कह कर तरह तरहका खानेका सामान मंगा भेजा. बिना शीघ्रताके पूरी भूखसे उन्हें खाया, पत्नीको अनुरोध पूर्वक भांति-भांतिके व्यंजन चखाए, उसे छेड़ा और फिर बाकी बचे सामानको संभाल कर अलग रख दिया.

दूर इंजनके आगे शहरकी छतें और मीनारें सुनहरी धूपसे रंगी हुई दीखने लगीं. इतनेमें ही एक कण्डक्टर आया और उसने हीरासिंगको कुछ संकेत किया. हीरासिंग झट पीछे-पीछे चलकर पटरीपर आया.

कण्डक्टरने कहा, "अभी—अभी इन्सपेक्टर आनेवाले हैं. सो जरा अपनी स्त्रीके साथ आकर यहां खड़े हो जाइए."

"अच्छा, अच्छा, अच्छा."

"और वह रकम भी दिलवाइए जो ठहरी थी."

"आपका क्या निकलता है ?"

"वही जो ठहरा था. अतिरिक्त खर्चका आधा, दो रुपए अस्सी पैसे."

"क्या ?" हीरासिंग अकस्मात उबल कर बोला, "क्या ? दो रुपए अस्सी पैसे ? समझा होगा किसी गबदूसे पाला पड़ा है. यह लो एक रुपया और खुदासे ख़ैर मनाओ."

"माफ कीजिए जनाब, यह बेजा है. हमारा आपका यह नहीं ठहरा था ?"

"ठहरा था! ठहरा था...अठन्नी और लो अच्छा और चम्पत होओ. और एक कौड़ी न मिलेगी. क्या? गुस्ताखी! अच्छा, आने दो इन्सपेक्टर को. मैं कहूंगा, यह आदमी बिना टिकट लोगोंको सफर कराता है. यह न समझना उस्ताद कि किसी हल्केसे पाला पड़ा है."

कण्डक्टरकी आंख खुली. वह बेहद गरम हो आया. "बदमाश कहीं का" वह चिल्लाया. "चाहिए कि तुम जैसे आदमीको पकड़कर रेलके नीचे डाल दिया जाए."

लेकिन हीरासिंग मुर्गेकी तरह उसपर टूट पड़ा. "क्या ? रेलके

नीचे ! जानते हो, ऐली धमकीपर क्या किया जाता है ? यह मारनेकी धमकी ! मैं अभी रेलकी जंजीर खींचता हूं और हल्ला मचाता हूं." और ऐसी तत्परतासे जंजीरकी तरफको हाथ बढ़ाया कि कण्डक्टरने सहमकर उसे रोक लिया और थूककर बोला, "जा, खाले मेरे पैसे, उचक्के, चोर."

हीरासिंहने पत्नीको बाहर बुलाया, कहा, "सरसुती, आओ, जरा यहां खड़े हों. यहांसे दृश्य कैसा सुहावना दीखता है. आह, कैसा सुन्दर, जैसे तस्वीर."

सरसुती आज्ञानुगामिनी पीछे-पीछे चली. नये-नये कपड़े, जो शायद पहली बार उसने पहने थे, उन्हें हाथसे ऊपर उठाए थी कि कहीं छू न जाएं. वह सामने दूर सान्ध्य अरुण-प्रभासे गिरजों की चोटियां और शहरकी मीनारें उद्दीप्त दीखती थीं. ऊपर पहाड़ी पर भवन मानो इस स्वर्गकी और जादूकी दुनियांमें तैरते हुए मालूम होते थे. घने वृक्षोंकी पांतें पहाड़ीसे उतरकर नीचे तक चली आरही थीं. एक ओर उतुंग नग्न सीधा स्तम्भ-सा वह पर्वत दुर्ग पदस्थ जलराशिके तटपर खड़ा जाने क्या सोचता था. इस नग्न प्रशस्त प्रस्तर तलपर कहीं-कहीं वृक्षोंकी हरी पांति ऐसीं लगती थीं जैसे सप्राण देहमे रक्तबाहिनी शिराएं. परी देश-सा सुन्दर यह प्राचीन नगर जान पड़ता था आप-ही-आप रेलसे मिलनेके लिए बांह खोले आगे बढ़ा आरहा है.

ट्रेन ठहरी. हीरासिंहने तीन कुलियोंको सामान ले चलनेके लिए कहकर स्त्रीको पीछे पीछे आनेको कहा. पर वह खुद दरवाजे पर अपनी दोनों जमातोंको ठीक बाहर निकल जाने देनेके लिए ठहरा रहा. उन दर्जनसे ऊपर कामिनियोंकी सरदारनी उस अधेड़नकी ओर उसने कहा "याद रखना मेडम बर्मन, होटल अमेरिका, इवेनिव कोस्का.'

और उस काली डाढ़ीवाले आदमीको कहा, "भूलना नहीं, लेजू, लड़कियोंको अच्छी तरह खाना खिलाना. शामको सिनेमा दिखाना. रात को ग्यारह बजे मेरी बाट देखना. तब हम बात करेंगे. लेकिन और कोई मुझे पूछे, तो पता जानते ही हो, हरमीटेज. फौरन फौन कर देना.

किसी वजहसे वहां न हूं तो रीमान काफेमें दौड़ आना. या सामनेकी हिबरू भोजनशालामें. वहीं कुछ खा पी रहा हूंगा. अच्छा ? अब चलो."

३

हीरासिंहकी यह सब बातें-गप्प थीं, और झूठ. कपड़ोंके नमूने, रेशम की लच्छियां, बटन, नकली पोत और चश्मे, और—सब उसके असली पेशेको ढकनेके साधन थे. पेशा था बुर्दाफरोशी. यह सही है कि दस साल हुए कभी वह एक तरहकी देसी दारुका एजेण्ट बनकर घूमा करता था. इस तरह खूब घूमने फिरनेसे उसकी जबान चल पड़ी. कतरनीकी तरह अपनी जुबानसे वह यहां-वहांकी सब बातें जल्दी-जल्दीं कतरता रह सकता था. जुबानमें लगाम न थी. इस तरहके सौदागर-खूब बातें बनाना सीख जाते हैं. उस एजेण्टीने ही उसे एक दिन इस पेशेके किनारे लगा दिया. कहीं जारहा था कि एकवार दर्जीकी एक जवान लड़की इसके प्रेम पाशमें फंस गई. वह यों अभी पुलिसके रजिस्टरोंमें दर्ज नहीं हुई थी, पर अपनी देहके और प्रेमके दानमें बहुत संयमशील और सिद्धान्तवादी भी न थी. हीरासिंग अभी नई उम्रका कच्चा और रंगीन जवान था. इस छोकरीको वह अपने साथ-साथ ले चला. उसके मनमें बड़ा उछाह था, बहुत रंग. छः महीने होते-होते वह उस लड़कीसे बेहद ऊब गया. वह इस चपल गति, तत्पर और चुस्त आदमीके गलेमें जैसे भारी पत्थर बन रही. तिसपर सन्देह और डाहके कारण उनमें बहुतेरे झगड़े होने लगे, रोना पीटना मचने लगा...बहुत दिनों तक स्त्री पुरुषोंके साथ-साथ रहनेसे जो होता है, वही सब यहां हुआ. धीरे धीरे वह उसे पीटने भी लगा. पहले तो लड़की चोट खाकर बड़ी उफनी. पर दूसरी बारसे चुप हो गई और सध चली. प्रेम ग्रस्त रमणियां अपने प्रेम संबन्धमें मध्यम मार्ग नहीं जाना करतीं. या तो वे झूठी, मायावी, छली अपने काले दिल और अन्धेरे माथेमें सब भांतिके तिरियाचरितोंके विचारोंसे भरी रहतीं हैं. नहीं तो असीम आत्मोत्सर्ग, अगाध श्रद्धासे भरी ऐसी भोली निरीह बन जातीं हैं

कि न उन्हें आत्मवञ्चनाकी शंका होती है, न आत्मसम्मानकी चिन्ता. यह दर्जिन दूसरी काठी की थी और हीरासिंगको इसमें बहुत दिक्कत न हुई कि फुसलाकर उससे गलीमें पेशा कमवाए. जिस पहली शामको उसकी यह आज्ञानुवर्तिनी प्रेमिका पहले पांच रुपए कमाकर लाई और उसे दिए, तबसे हीरासिंगके जी में उसके प्रति विषम तीक्ष्ण घृणा व्याप गई. उसके बाद जो-जो औरत उसके हाथ पड़ी, और सेंकड़ोंही उसके हाथमेंसे निकलीं थी, उन सबके प्रति, स्त्री मात्रके प्रति, उसमें यह मानवोचित दर्प और ग्लानि घर करके बैठ गई. वह स्त्रीको बुरी तरह छेड़ता था, मानो सुई चुभा-चुभाकर उनके नैतिक भावको खण्ड-खण्ड होते देखनेमें उसे रस मिलता था. उसे उनके भावोंके कोमल अंशको खोज-खोजकर पाने और मानो उन्हें कुचलकर दलित करनेमें विशेष आनन्द आता था. औरत विचारी चुप रहती, आह भरती, रोती, उसके सामने घुटनों बैठकर हथेली चूमती. नारीका यह नीरव, असहाय अवलोचित दैन्य हीरासिंको और भड़काता था. वह उसे दूर खदेड़ देता. वह नहीं जाती तो बाहर गलीमें धक्का देदेता. पर दो-एक घण्टे स्त्री विचारी सर्दीमें ठिठुरती, मेंहमें भीगती, और फिर लौट आती. आखिरकार एक मनचले दोस्तने सलाह दी कि अपनी स्त्रीको जाकर चकलेमें क्यों नहीं बेच देते. बस यहींसे उसे अपने जीवनके पेशेका सूत्र मिला.

सच यह है, हीरासिंग के चित्तको भरोसा न था कि इस काममें कोई खास नफा या कामयाबी होगी. पर काम ऐसा बैठा कि क्या कहें.

एक चकलेकी मालकिन (यह खारकवकी बात है) उसके प्रस्तावमें बड़ी खुशीसे साझी हो गई. वह कभीसे सामन्त यादोरामको जानती थी. अच्छा पियानो बजाता था, नाचता गजबका था और अपने खुशदिल मजाकसे जितने होते सबको हंसा डालता था. तिसपर सबसे बड़ा गुण यह था कि निर्लज्ज दक्षता के साथ वह जिसको चाहता मिलकर लुभाकर उसीको फ़ंसा लेता था. बस बात यहीं आकर अटकती थी कि आखिर कैसे समझा-बुझाकर उससे पिण्ड छुड़ाया जाए. कुछ हो, वह छोड़नाही नहीं चाहती थी. आत्मघातकी धमकी देती थी. कहती थी, अपनी आखें

जला लूँगी, पुलिसमें जाकर रिपोर्ट कर दूंगी. और उसे सच ही सामंत या!दोरामकी कुछ करतूतोंका पता था कि जिससे हजरतको आसानीसे फांसी मिल सकती थी. इसपर हीरासिंगने तरकीब बदली. वह तुरन्त अत्यन्त स्नेहशील प्रेमी बन गया, कोमल चिन्ताशील मित्र, सतर्क अभि-भावक. फिर एक दिन उसने ऐसा भाव बनाया कि जाने क्या घोर संकट उसपर नहीं आ पड़ा है. स्त्री पूछती और वह चुप रहता. बहुत देरमें एक-आध शब्द कहता, तो मानो वह भी मुंहसे निकल ही गया है इस भावसे. कहता, "ओह, मुझसे बीते जीवनमें एक भारी दुष्कर्म हो गया है."

बस फिर झूठके लच्छेके लच्छे उसके मुँहसे निकलते आते. कहता, पुलिस उसके पीछे है, ओह, जेलसे अब वह नहीं बचेगा. क्या पता सख्त जेल हो, या फाँसी. कुछ महीनोंके लिए यहांसे भाग सके, यही उपाय है. असल बात यह थी कि हजारोंके फायदेकी कोई घात उसके मनके गहरे-में थी. दर्जिन बेचारी बहकाँवेमें आ गई. उसके मनमें वह करुण सम-वेदनाका वह भाव जाग उठा, जो किस स्त्रीमें नहीं है. मातृत्व किस स्त्रीमें नहीं है ? अब यह समझाना उसे कोई मुश्किल न था कि उसके साथ-साथ चलनेमें बड़ी बाधाएं हैं, बड़ा खतरा है. यहां रहकर इन संकटके दिनोंको काट दे तो क्या ही अच्छा न हो. मैं,' जरा विपत टली कि थोड़े दिनोंमें लौट आता ही हूं. इसके बाद तो किसी एकान्त स्थानमें रहनेके बहाने, जहां पुलिस जासूसोंकी पहुंच न हो, उसे चकलोंमें लेजाकर रख देना उसके लिए न-कुछ बराबर बात थी. एक सवेरे हीरासिंगने उसे जरा ठीक होनेको कहा. कपड़े जरा पहन ले, बाल बाह ले, पाउडर वाउडर भी जरा लगाले. बस, तब वह उसे अपनी जान पहचान वालीके यहां लेकर पहुंच गया. बात पक्की पहलेसे थी. और वह सुन्दरी थी और युवती. बस उसी दिन पुलिसमें उसका टिकट बदलकर पीला मिल गया. हीरासिंगने रोते-रोते आलिंगन और स्नेह पूर्वक उससे विदा ली, और मालकिनके कमरेमें पहुंचकर अपने पचास रुपए सम्भाले. मांगे उसने दो सौ थे, पर उसे इन पचासपर बहुत खेद न हुआ, क्योंकि असल बात यह थी कि उसे एक भेद मिल गया था. अब क्या था. अब सफलता

उसके हाथ थी.

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि लड़की आखिर दम तक चकलेके चंगुलमें रही. हीरासिंग उसे ऐसा भूला कि साल बाद उसे उसकी सूरत भी न याद आती थी. पर क्या पता...शायद याद आती भी हो....अब वह दक्षिणी रूसके सबसे बडे नारी-मांसके व्यापारियोंमेंसे है. कुस्तुन-तुनियांसे अरजन्टाइन तक उसका लेन-देन है. झुण्ड-की-झुण्ड लड़कियों को उडेसाके चकलोंसे कीवेके चकलोंमें ले जाता है. कीवे वालियोंकी खारकव और खारकव वालियोंको फिर उडेसा. जो माल वासी हो जाता है, गदरा जाता है, उसमें दूसरे और तीसरे दर्जेके मालको यह आदमी यूरोपके और शहरोंमें ठीक ठिकाने लगा देता है. यहांका माल वहां, और वहांका यहाँ. इस तरह करते रहनेमें सब तरहकी चीज खप जाती है. जिसकी एक जगह मांग नहीं रही, कहीं-न-कहीं दूसरी जगह उसका ठौर ठिकाना लगाकर वह अपना पैसा सीधा कर लेता है. दूर-दूर उसका कारोबार फैला है, और कई बड़े-बड़े नामवाले सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त महानु-भावोंसे भी उसका व्यवहार खाता है. लेफ्टीनेन्ट गवर्नर, फौजके करनल, बड़े-बड़े एडवोकेट, प्रसिद्ध डाक्टर, रईस, जमींदार, व्यापारी, सभीमें उसकी गाहकी है. धरतीके भीतरकी दुनियां उसकी ऐसी परिचित है, जैसे ज्योतिषीको तारों भरा आसमान. उसकी स्मरण शक्ति विलक्षण है. बिना नोटबुक हजारों नाम, पते, हुलिए, गोत आदि उसे याद हैं. अपने थोक ग्राहकोंकी रुचियोंका पूरा-पूरा पता उसे रहता है. कुछको एकदम तीखी काम-कला-विचक्षण चाहियें, कुछ अछूती अक्षत बालाओंके मुंह मांगे दाम देनेको तैयार रहते हैं. कुछके लिए कच्ची उमरकी अविकसित अर्धखिली कलियोंकोही तोड़कर ले आनेकी जरूरत है. आखिरी बात बहुत मुश्किल और खतरनाक है. पर यहां दावभी गहरा लगता है. एक सौदेमें दसियों हजार सीधे हैं. संस्था सञ्चालिकाओंकी सब भांतिकी रुचि-कुरुचिको उसे पूरा करना होता है. कभी-कभी तो अप्राकृतिक गर्हणीय वैषयिक तृष्णाओंकी तृप्तिकेलिए उसे मन चाहा माल जुटाना होता है. पर यह कह देना चाहिए कि ऐसे सौदे वह कम हाथमें लेता है.

तभी लेता है जब नफा पूरा हो. दो तीन बार जेलमें भी उसे रहना पड़ा है, पर यह सौदा भी टोटेका नहीं हुआ. उसका साहस, उसकी शक्ति और उसकी सूझ इससे कम नहीं हुई. बल्कि हर जेलके अनुभवसे और पुष्ट, दुर्दान्त, सम्पूर्ण और कठोर ही होती गई. अनुभवके साथ उसके दुस्साहस पूर्ण कार्यकी इस व्यावसायिक दुनियामें चातुर्य्यकी शिक्षा भी उसे जेल प्रवासमें मिलती रही.

इस कालमें उसने पन्द्रह बार नए नए व्याह किए और हर बार खासी रकम दहेजमें पाई. दहेजकी रकम हाथमें आई कि हजरत वहांसे उड़ चलते थे. फिर सूध लगी और किसी चकलेमें या किसी और जगह जाकर अपनी पत्नीको वेच दिया और एक अच्छी रकम खड़ी करली. यह भी होता था कि लड़कीके संवन्धी पुलिसमें पहुंचते और पुलिस खोज खबर करती, पर अगर पुलिस इधर सुरजीतकी तलाशमें होती तो उधर वह महाशय राजेन्द्रपाल बने हुए शहर शहर और गांव-गांव घूम रहे होते थे. याददाश्त उसकी बहुत अच्छी थी, फिर भी उसको अपने सब नामोकी याद नहीं थी. यही नहीं कि उसे याद न रहा हो कि किस साल वह पृथवीनाथ था और किस साल बैकुंठ. यह तक था कि उसे अपना असली नाम भी फर्जी लगने लगा था.

यह वर्णणीय है कि उसे अपने इस पेशेमें न कुछ नियम विरुद्ध मालूम होता था, न घृण्य. उसे लगता जैसे आटा दाल साग भाजीका व्यापार न किया, यह करलिया. अपने निजके ढंगपर वह धार्मिक था. अवकाश मिलता तो हर इतवार सोमवारको वह गिरजे पहुंचता. उत्सब पर्वके दिनों जहां भी होता वहीं उनको मानता और पालन करता. उसकी मां थी, और एक कुबड़ी बहन. वह उन्हें बराबर, कभी कम कभी ज्यादह, खर्च भेजता रहता था. कुर्ससे उड़ेसा और बासासे समारा जहां कहीं पहुंचता, नियमित नहीं तो अक्सर वहांसे वह उनकेलिए अच्छी-अच्छी रकमें भेजता रहता. एक बेंकमें उसने अच्छा द्रव्य संचितकर रखा था और उसे बराबर बढाता रहता था. व्याजको हाथ न लगाता था. पर कृपणता या नदीदापन उसके पास नहीं फटका. हाथका वह सदा खुला था. इस ओर

जैसे इस कामके खतरे, इसके मजे और इसके लिए आवश्यक चातुर्यके कारण वह आकृष्ट हुआ था. स्त्रियोंके प्रति वह उदासीन था. यद्यपि उनकी परख और उनके मूल्यकी उसे पूरी पहचान थी. उस हलवाईकी-सी दशा उसकी थी जो मिठाई बनाता है, पर खानेकी तबियत जिसमें तनिक नहीं होती. स्त्रीको बहकाना, फुसलाना, जी चाहा जो उससे करा लेना इसमें उसे कुछ यत्न नहीं करना पड़ता था. स्त्री मानो आपही आप उसके पास आ जाती और उसके हाथोंमें आज्ञाकारिणी, अनुगामिनी, चुप-चुपानी कठपुतली बनकर रह जाती. उनके प्रति उसके व्यवहारमें एक प्रकारकी कठिन, अपरिहार्य, विश्वस्त आत्म-विश्वासकी भावना आगई थी. असंदिग्धरूपमें जैसे उसे मालूम रहता था कि उसके सामने स्त्रियोंको ऐसे दबक रहना ही है जैसे अनुभवी उस्ताद साईसकी निगाह, आवाज और इशारेपर बिदका घोड़ा दबक रहता है.

वह बहुत कम शराप पीता था. वह भी कोई साथ हुआ तभी. खाने-की तरफसे उदासीन था. पर जैसे हरेकमें कोई-न-कोई त्रुटि होती है, उस में भी थी. अपने कपड़ोंका वह बहुत खयाल रखता था. अपनी सज्ज पर कुछ कम खर्च वह नहीं करता था. तरह-तरहके फैशनके कालर कोट, घड़ी, चैन, अंगूठी, इनमें उसका मन बहलता था.

डिपोसे वह सीधा हरमिटेज गया. होटलके कुली झटपट आकर उसका सामान उठा ले चले. पीछे-पीछे पत्नीकी बाहोंमें बांह डाले वह भी चला. दोनोंकी आनबान निराली थी. पर हीरासिंगका तो पूछनाही क्या है. हाथमें मूठदार छड़ी जिसकी मूठ चांदीकी एक नग्नस्त्रीकी बनी थी, इंग्लिश ओवरकोट, बिल्कुल अप-टू-डेट.

"आप यहां बिना इज़ाजत नहीं ठहर सकते" ऊपरसे एक स्थूलकाय दरवानने कहा.

"ऑह जोख, फिर वही बिना इज़ाजतके!" हीरासिंहने प्रसन्नतापूर्वक कहा और उसके कन्धोंपर थपथपाया, "इजाजतके क्या माने हैं ? भा किसकी बिना इजाजतके ? हमेशा तुम यही कह दिया करते हो "बिना इजांजतके." मैं कुल तीन दिन रहूंगा. नवाब इफ्तखारसे किरा

तभी लेता है जब नफा पूरा हो. दो तीन बार ज़ेलमें भी उसे रहना पड़ा है, पर यह सौदा भी टोटेका नहीं हुआ. उसका साहस, उसकी शक्ति और उसकी सूझ इससे कम नहीं हुई. बल्कि हर जेलके अनुभवसे और पुष्ट, दुर्दान्त, सम्पूर्ण और कठोर ही होती गई. अनुभवके साथ उसके दुस्साहस पूर्ण कार्यकी इस व्यावसायिक दुनियामें चातुर्य्यकी शिक्षा भी उसे जेल प्रवासमें मिलती रही.

इस कालमें उसने पन्द्रह बार नए नए व्याह किए और हर बार खासी रकम दहेजमें पाई. दहेजकी रकम हाथमें आई कि हजरत वहांसे उड़ चलते थे. फिर सूध लगी और किसी चकलेमें या किसी और जगह जाकर अपनी पत्नीको वेच दिया और एक अच्छी रकम खड़ी करली. यह भी होता था कि लड़कीके संबन्धी पुलिसमें पहुंचते और पुलिस खोज खबर करती, पर अगर पुलिस इधर सुरजीतकी तलाशमें होती तो उधर वह महाशय राजेन्द्रपाल बने हुए शहर शहर और गांव-गांव घूम रहे होते थे. याददाश्त उसकी बहुत अच्छी थी, फिर भी उसको अपने सब नामोकी याद नहीं थी. यही नहीं कि उसे याद न रहा हो कि किस साल वह पृथवीनाथ था और किस साल वैकुंठ. यह तक था कि उसे अपना असली नाम भी फर्जी लगने लगा था.

यह वर्णणीय है कि उसे अपने इस पेशेमें न कुछ नियम विरुद्ध मालूम होता था, न घृण्य. उसे लगता जैसे आटा दाल साग भाजीका व्यापार न किया, यह करलिया. अपने निजके ढंगपर वह धार्मिक था. अवकाश मिलता तो हर इतवार सोमवारको वह गिरजे पहुंचता. उत्सव पर्वके दिनों जहां भी होता वहीं उनको मानता और पालन करता. उसकी मां थी, और एक कुबड़ी बहन. वह उन्हें बराबर, कभी कम कभी ज्यादह, खर्च भेजता रहता था. कुर्संसे उड़ेसा और वासासे समारा जहां कहीं पहुंचता, नियमित नहीं तो अक्सर वहांसे वह उनकेलिए अच्छी-अच्छी रकमें भेजता रहता. एक बेंकमें उसने अच्छा द्रव्य संचितकर रखा था और उसे बराबर बढाता रहता था. व्याजको हाथ न लगाता था. पर कृपणता या नदीदापन उसके पास नहीं फटका. हाथका वह सदा खुला था. इस और

जैसे इस कामके खतरे, इसके मजे और इसके लिए आवश्यक चातुर्यके कारण वह आकृष्ट हुआ था. स्त्रियोंके प्रति वह उदासीन था. यद्यपि उनकी परख और उनके मूल्यकी उसे पूरी पहचान थी. उस हलवाईकी-सी दशा उसकी थी जो मिठाई बनाता है, पर खानेकी तबियत जिसमें तनिक नहीं होती. स्त्रीको बहकाना, फुसलाना, जी चाहा जो उससे करा लेना इसमें उसे कुछ यत्न नहीं करना पड़ता था. स्त्री मानो आपही आप उसके पास आ जाती और उसके हाथोंमें आज्ञाकारिणी, अनुगामिनी, चुप-चुपानी कठपुतली बनकर रह जाती. उनके प्रति उसके व्यवहारमें एक प्रकारकी कठिन, अपरिहार्य, विश्वस्त आत्म-विश्वासकी भावना आगई थी. असंग्धिरूपमें जैसे उसे मालूम रहता था कि उसके सामने स्त्रियोंको ऐसे दबक रहना ही है जैसे अनुभवी उस्ताद साईसकी निगाह, आवाज, और इशारेपर बिदका घोड़ा दबक रहता है.

वह बहुत कम शराप पीता था. वह भी कोई साथ हुआ तभी. खाने-की तरफसे उदासीन था. पर जैसे हरेकमें कोई-न-कोई त्रुटि होती है, उस-में भी थी. अपने कपड़ोंका वह बहुत खयाल रखता था. अपनी सज्जा पर कुछ कम खर्च वह नहीं करता था. तरह-तरहके फैशनके कालर, कोट, घड़ी, चैन, अंगूठी, इनमें उसका मन बहलता था.

डिपोसे वह सीधा हरमिटेज गया. होटलके कुली झटपट आकर उसका सामान उठा ले चले. पीछे-पीछे पत्नीकी बाहोंमें बांह डाले वह भी चला. दोनोंकी आनबान निराली थी. पर हीरासिंगका तो पूछनाही क्या है. हाथमें मूठदार छड़ी जिसकी मूठ चांदीकी एक नग्नस्त्रीकी बनी थी, इंग्लिश ओवरकोट, बिल्कुल अप-टू-डेट.

"आप यहां बिना इज़ाजत नहीं ठहर सकते" ऊपरसे एक स्थूलकाय दरवानने कहा.

"अँह जोख, फिर वही बिना इज़ाजतके!" हीरासिंहने प्रसन्नतापूर्वक कहा और उसके कन्धोंपर थपथपाया, "इजाजतके क्या माने हें? भाई किसकी बिना इजाजतके? हमेशा तुम यही कह दिया करते हो "बिना इजांजतके." में कुल तीन दिन रहूंगा. नवाब इफ्तखारसे किराए

विराएकी बातचीत पूरी हुई कि मैं चला जाऊंगा. खुदा तुम्हारा भला करे. अपने सब कमरोंमें तुम्हीं-तुम रहना. और जोख, देखो तो, अड़ेसासे क्या खिलोना तुम्हारे लिए लाया हूं कि बाग-बागहो जाओगे."

अभ्यस्त हाथोंसे झट उसने सोनेकी मुहर निकाली और उसके हाथोंमें थमाई और फिर वह देखते-देखते गायब हो गया.

ऊपर अपने बड़े कमरेमें जाकर पहली बात उसने यह की कि शानदार छः जोड़ी जूते निकालकर दरवाजेके बाहर रख दिए. घण्टी बजाई और घण्टी सुनकर जो आदमी आया उससे कहा, "देखो, फौरन यह साफ होने चाहिएँ, ऐसे चमकें कि आईना. तुम्हारा क्या नाम है, चंपत ? तो तुम तो मुझे जानते होगे ? अच्छा काम करोगे, तो तुम भी खुश होगे. तो सुना ? आईने जैसे चमकें."

४

होटल हरमिटेजमें हीरासिंग तीन दिन और रातसे ज्यादह न रहा. इस बीचमें कोई तीनसौ आदमीयोंसे वह मिला. वह क्या आया शहरमें एक जान आगई. नौकरी दिलानेवाले कम्पनियोंके लोग उसके पास नौकरीके लिए, और सस्ते होटलोंकी मालकिनें, पुराने घाग एजेण्ट और जिनके बाल इस औरतोंके पेशेमें पक गए है ऐसे बहुतेरे लोग उसके पास आए. खुद मालसे विशेष मतलबहो इसलिए नहीं, पर अपनी व्यावसायिक धाक रखनेके स्वादमें ही वह जितना खीचकर होता सौदा करता. वेचता तो बहुत नफा लेकर या खरीदता तो कमसे कम दाम लगाकर. सचमुच दस या पन्द्रह रुपये फी अदद कम या ज्यादह लेनेकी उसे बहुत चिन्ता न थी, पर यह विचार कि उसका प्रतिस्पर्धी समव्यवसायी पोखपाल ज्यादा रकम तो नहीं हथिया लेता है उसको चैतन्य, जागरुक, चौकन्ना रखता.

आनेके बाद अगले दिन वह मेजर फोटोग्राफरके यहां पहुंचा. वहां जाकर तरह-तरहकी स्थितियोंमें अपने साथ उसकी तस्वीरें खिचाई, उसमें हरएक निगेटिवके उसे तीन रुपये मिले. जिसमेसे एक रुपया उसने

लड़कीको दिया. उसके बाद बशीरनके पास पहुंचा.

वह एक औरत थी जिसकी उमर ढलगई थी और जो अब पेशा छोड़ बैठी थी. रूसके दक्षिणमें ऐसी औरतें मिलतीं हैं. अब वह इतनी कामवाली और पैसेवाली हो गई थी कि एक पति नामक जीवको पाल ले और साथ-साथ अपना कारोबार भी चलाती रहे. पति उसका एक सीधा सादा पोल था. हीरासिंग और बशीरन पुराने दोस्तोंकी भांति मिले. बातचीतमें मालूम होता था कि इन दोनोंमें न हया है, न डर, न ग्लानि, न हृदय.

"बीबी बशीरन,आज मैं तुम्हारे लिए माल लाया हूं माल. तीन औरतें हैं, एकसे एक बढ़कर. सब ताजी, लजीली, भरी. एक सुनहरी बालोंकी है, जरा सकोची. दूसरीके बड़ें काले लहराते बाल हैं, छोटी-सी है, पर तुम जानो बडी चुस्त, हर बातके लिए तैयार. तीसरी रहस्य मयी है, मुस्काती है पर बोलती नहीं. खूबसूरत ऐसी कि क्या कहूं. काममें खूब निकलेगी"

बशीरन शंकापूर्वक हीरासिंगको देखती हुई बोली, "हीरासिंग, मुझसे क्या दूनकी हाँक रहे हो ? क्या पहले जैसा खेल खेला चाहते हो ?"

"या खुदा ! मैं न हूं कि तुम्हें धोखादूं. और एक खूब पढ़ी लिखी भी मेरे हाथ लगी है. वह भी तुम्हारे लिए है. जो चाहो उसका बनाना. उसका ग्राहक मिलनेमें तुम्हें दिक्कत न होगी."

बशीरन वक्रतासे हंसी "फिर कोई नई दुलहन पकड़ लाए हो ?"

हीरासिंग हंसा. "पर वह बहुत बड़े घरानेकी है."

"तो मतलब हुआ, पुलिस-वुलिसके चक्करसे भी निबटना होगा."

"आह, या खुदा, तो मैं तुमसे रकम भी कौन बड़ी लेता हूं. बस एक हज़ारमें तीनों दे दूंगा."

"ठीक बात करो जी. पांच सौ. मैं झमेलेका सौदा नहीं रखती."

"देखो, बीबी बशीरन, यह पहला मौका नहीं है जो हमारे बीच सौदा पटा है. मैं तुम्हें ठगता नहीं. उसे अभी यहां ले आता हूं. एक बात याद रखना कि तुम मेरी चाची हो. समझी ? चाची ! वैसेही बातें करना.

मैं तीन दिनसे ज्यादा शहरमें नहीं ठहरुंगा."

बशीरन विशाल छाती, पेट और ठोड़ियोंको लेकर आनन्दसे हिली, "छोटी छोटी बातोंपर हम नहीं झगड़ेंगे. तुम मुझे नहीं ठगते तो मैं भी तुम्हें नहीं ठगती. मालकी मांग अब चढी हुई है. मिस्टर हीरासिंग शराब लीजिएगा ?"

"धन्यवाद, कृपा है."

"हम तुम पुराने दोस्त हैं. हीरासिंग, बताओ, तुम सालमें कितना कमा लेते हो ?"

"आह बीबी, क्या बताऊं ! यही कोई बाहर बीस हज़ारके बीचमें कुछ हो जाता है. यहांसे वहां आते जाते रहनेमें देखो न कितना खर्च पड़ता है ?"

"कुछ बचाते भी हो ?"

"अंह, क्या बचाता हूं. यही दो तीन हज़ार सालमें जमा कर लेता हूं."

"मैं समझती थी, दस बीस..."

हीरासिंग सावधान हो गया. समझ गया, उसका भेद लिया जारहा है. पूछा "क्या करोगी तुम जानकर. तुम्हें क्यों इसमें दिलचस्पी है ?"

बशीरनने बिजलीकी घण्टीका बटन दबाया, परिचारिकाको कुछ लानेका हुक्म दिया. पूछा, "आप शमशेरको जानते हैं ?"

हीरासिंग मानो उसपर टूटकर पड़ा, "शमशेरको कौन नहीं जानता. वह है आदमी. वह है जो दूकानदारी जानता है. भई गज़ब करता है !"

उसे ख्याल न रहा कि वह फंसता जारहा है और अपना भेद दे रहा है. आवेगपूर्वक बोलता रहा, "पता है, शमशेरने पारसाल क्या किया ? पोवनो, विलको, त्रिटोमीरसे तीस अदद माल वह अरजन्टाइन ले गया. हरेकके उसने हजार-हजार रुपए लिए. हजार-हजार ! जोड़ो तो, कुल तीस हजार होगए. और क्या समझती हो, शमशेर इसपर मान गया ? जहाजपर वापसीका खर्च निकालनेके लिए, इस रकमसे उसने बहुत-सी नीग्रो औरतें खरीद लीं. उनको यहां मास्को, पीटर्सबर्ग, कीएब, ओडेसा,

और खारकबमें ठीक ठिकाने लगा दिया. मैडम वह आदमी नहीं, बाज है, बाज. वह है आदमी जो व्यापार जानता है."

बशीरनने कोमलतासे अपना हाथ उसके घुटनेपर रक्खा, इसी क्षण-की उसे बाट थी, "इसीसे मैं कहती हूं, मिस्टर...भूल गई, अब क्या नाम है ?"

"हीरासिंग कहिए."

"तो मिस्टर हीरासिंग, मैं कहती हूं तुम्हारे पास कोई वैसी भी है जो अक्षत ही बिल्कुल कोरी, नवेली. ऐसियोंकी बड़ी मांग है. मैं खुला सौदा करती हूं. पैसेपर नहीं हाथ मीचूंगी. जो मांगोगे दूंगी. पर फैशन वैसि-योंका है, क्वारी, कच्ची. और सुनो हीरासिंग, जिस हालतमें तुम दोगे तुम्हारा माल वैसी ही हालतमें तुम्हें लौटा दूंगी. जरा मनचलोंकी दिल्लगी है, जो मेरी समझमें भी नहीं आती."

हीरासिंगने अपनी आंखें घुमाई, सिर खुजाया, बोला, "देखो, मेरी दुलहन है. करीब-करीब...तुम समझती तो हो ?"

"करीब-करीब क्यों ?"

"मुझे कहते लज्जा आती है. पर वह...अब कैसे बताऊं, वह अबतक दुलहन बनी नहीं है."

बशीरन खिलखिला पड़ी, "हीरासिंग, मुझे यह आशा न थी कि तुम ऐसे पक्के धूर्त निकलोगे. तुम्हारी दुलहन ही सही, मुझे एक बात है. पर यह क्या सच हैं कि तुम...बिल्कुल थमे रहे !"

हीरासिंहने गंभीरतासे कहा, "एक हजार."

"ऊंह, क्या ओछी बातें करते हो ! एक हजार सही. पर बताओ, वह काबू में भी आ जायगी?"

"काबूकी भली कही !" हीरासिंहने विश्वस्त भावसे कहा, "वही बात है कि. याद रखना, तुम मेरी चाची हो और अपनी पत्नीको लेकर तुम्हारे यहां आता हूं. सुनो तो, वह मुझसे प्रेम में फंसी है. मुझसे बिल्लीसी हिल गई है. अगर मैं उससे कहूं कि मेरी भलाईके लिए उसे ऐसा करना चाहिए, और यह, और वह, तो वह कुछ नहीं बोलेगी, वैसाही करेगी."

बस बात करनेको और कुछ न रह गया था. बशीरन एक कागज का पुर्जा लाई, उसपर मुश्किलसे अपना नाम, अपनी वल्दियत, वगैरह-वगैरह लिखा. प्रोमिजरी नोट बाकायदा नहीं था, पर इन चोरोंमें, इन ठगोंमें, अपनी बातकी एक आन होती है. ऐसे मामलोंमें इनमेंका एक कभी दूसरेको ठगेगा नहीं. ठगे तो उसे मौत ही मिले फिर चाहे वह जेलखानेमें हो, चकलेमें हो, कहीं हो.

इसके बाद तुरन्त कहींसे उनके प्यारे प्रीतम भी वहां पधारे. जवान, मंझोले कदके एक पोल थे, मूंछें ऊंची तनी थीं. सबने मिलकर सुरा-पान किया. यहां-वहांकी बात-चीत की. व्यवसायकी गिरी हालतपर ज़रा-कुछ बोलते बतलाते रहे. इसके बाद हीरासिहने अपने होटलके कमरेमें टेलीफोन किया और पत्नीको बुला लिया. आनेपर उसका अपनी चाची और चाचीके इन चचेरे भाईसे परिचय कराया. कहा, "कई गुप्त राजनैतिक कारणोंसे मुझे शहरसे बाहर जाना पड़ रहा है. मेरी प्रियतमा, मेरी रानी, मुझे क्षमा कर देगी. मैं, देखना, बहुत जल्दी ही आ जाऊंगा." कहकर उसने अपनी प्रियतमा पत्नीका चुम्बन लिया, आंसू गिराए, और बग्घीपर चढ़कर रवाना हो गया.

५

हीरासिंहके आते ही (परमात्मा जाने अबतक उसका नाम क्या बन गया था) मतलब, इस आदमीके आते ही याम्सकायाका हुलिया बदलने लगा. परिवर्तन पर परिवर्तन होने लगे. ट्रेपिल वाली जगहसे कमिनियां कुछ अन्नामरकानीके यहां आ गईं. अन्ना मरकानीके यहांसे एक रुपये वाले चकलोंमें, वहांसे निकलकर फिर आधे रुपये वालोंमें. यहां प्रमोशन नहीं होता, एक दर्जा नीचे ही उतरना होता है. प्रयेत्क स्थान विनिमयमें पांचसे सौ रुपये तकका नफा हीरासिंहको होता था. सच, इस आदमीमें बेहद शक्ति थी, वैसी जैसी इमात्राके जल प्रपातमें. दोपहरीमें अन्नामरकानीके यहां बैठा हुआ, सिगरेटसे धुआं उड़ाता, एकपर दूसरी

रक्खी टांगको हिलाता हुआ वह कह रहा था, "सवाल यह है...अब सोनाकी ऐसी जगह जरूरत क्या रह गई है. अब वह भली जगहके लायक नहीं रह गई. चलो, उसे नीचे वह चलने दो. सौ रुपये तुम्हेंभी बच जायेंगे. पच्चीस मुझे भी मिल जायेंगे. सच-सच बताओ, आजकल उसकी गाहकी है या नहीं ?"

"ओह, मि० शाट्जकी, तुमसे तो कोई बातोंमें नहीं जीत सकता. पर तुम्हीं जानो, मुझे छोड़ते कितना दुःख होगा ! कैसी अच्छी लड़की है."

हीरासिंग क्षणभर सोचता रहा. कोई अच्छा-सा मुहावरा कहना चाहता था. "क्यों ! गिरेको धक्का दो, और क्या ? और मेडम शेप्स, मुझे पक्का भरोसा है, उसकी गाहकी अब तुम्हारे यहां नहीं है."

इसिया साविश बीमार, जीर्ण, बुड्ढा आदमी था, पर वक्तपर पक्का होना भी जानता था. बोला, "हां बात तो सही है कि उसकी किसी तरह की मांग यहां नहीं रही. खुद सोचो, आनश्का, उसके कपड़ेमें पचास रुपए लगेंगे. पच्चीस मि० शाट्सकीके हिस्सेमें जाएंगे और परमात्माका भला हो, सिरपरसे एक पिण्ड छूटेगा. हमारी संस्थाकी अब भी तो उससे नेकनामी नहीं होती. टल जाएगी तो भला ही होगा."

इस तरह बेचारी सोना यहांसे गिरी. गिरकर आधे रुपएवाली जगह में पहुंची. यहां समाज का सब तरह का उच्छिष्ट वर्ग रातों-रात इन कामिनियोंका मनमाना प्रयोग और उपयोग करता था. यहां के कामके बोझको सम्भालनेके लिए बेहद पुष्ट स्वास्थ्य और पत्थर-सी देह दरकार थी. एक रात सोना ग्लानि और आतंकसे कांपने लगी जब उसने देखा कि दो सौ पाउंडवाली पहाड़की पहाड़ मेनका किसी प्राकृतिक शंका-निवारणके लिए भागी-भागी दालानमें गई, वहीं खुड्डीपर बैठी, और बैठते-बैठते अपनी नायिकासे चिल्लाकर बोली, "बाई सुनो, छत्तीसवें मुलाकातीका नम्बर है, भूलना नहीं."

सौभाग्यवश सोना भी यहां बहुत तंग न हुई. यहां आकर वह भी साधारण बन गई थी. कोई उसकी सुन्दर आंखोंको नहीं देखता था, और जब तक कोई और प्रस्तुत रहती कोई गाहक उसे नहीं मांगता था. हां,

केमिस्टकी दुकानके उस पुराने परिचित कर्मचारीने फिर उसका पता लगा लिया था और हर शामको वही उसके पास पहुंच जाया करता था. पर कायरता कहो, या धर्मभीरुता, या वास्तविक मैथुनकी कल्पना जन्य ग्लानि,—कभी वह उसे उस घरसे निकालकर नहीं ले गया. सारी रात वह उसके पास बैठा रहता और सदाकी भांति कोई गाहक आकर उसे ले जाता तो भी चुपचाप उसके लौटनेकी प्रतीक्षा करता रहता. वह लौटती तब वही ईर्षा-जन्य कलह मचती, दोनों झगड़ते, एक दूसरेको ताने देते और रोते. अब भी वह उसे वैसा ही प्रेम करता था. अपनी दुकानमें काउंटरके पीछे खड़ा-खड़ा दवाइयोंकी पुड़िया सामने रखे उसे ही याद करता और आह भरता था.

६

एक फेशनेबल उपहारगृह का द्वार. घुसते ही दोनों ओर गमलोंमें बिजलियोंकी रोशनियोंके गुच्छे जगमगा रहे हैं. बगीचेमें मानो दीपावली का उत्सव मनाया जा रहा है. आगे एक खुली हुई जगह है. वहां रेत बिछा है, जिसके बांयी तरफ स्टेज बना है. वहां थियेटर है और शूटिंग गैलरी. सामने फौजी बैण्डके लिए शंखाकार स्थान बना है. बीच-बीचमें यत्र-तत्र फूलोंके कुञ्ज, आस-पास शराबकी दुकानें, एक ओर भोजनालयोंकी कतार, उनपर बिजली के हण्डे जगमगा रहे हैं. प्रकाशके कारण नीचेका वर्गाकार रास्ता चांदनी सा सफेद चमकता है. हण्डोंके दूधिया कांचपर पतंगोंके झुण्डके झुण्ड मंडरा कर पड़ते हैं. नीचे उनकी छाया बड़ी होकर अन्धेरेकी बूंदों-सी धरतीपर डोलती हैं. और स्त्रियां जो अतृप्तकाम हैं, जो भूखी हैं, रंग बिरंगे हल्के नफीस कपड़े पहने ऐसी घूमती फिरती हैं जैसे कि अपनेमें निश्चित हों, दुष्प्राप्य, अत्यन्त दुर्लभ. वे दो-दोकी जोड़ीमें साथ-साथ श्रमित, आकुल, विश्रांत, चाहभरा, यहां-वहां डोल रही हैं.

मेजें सब भर चुकी हैं. तशतरियों और कांटे-छुरियोंकी आवाज

उनके ऊपर लहराती हुई बढ़ रही है. सब एक जैसे, एक पोशाक पहने, चिकने चुपड़े, संवारे हुए लंगूरसे लगते हैं. एक गायन पार्टीके डाइरेक्टर अदाके साथ आगे-पीछे झुककर आन-बान दिखा रहे हैं और पब्लिककी तरफ ऐसे देखते है जैसे नर वेश्या हों. यह बिजलियोंकी भरमार, एक तरफ तेलोंकी सुगन्धिकी अतिशयता, यह बजते हुए बाजे, यह गूंजती हुई आवाजें यह अदा, यह आन-बान, यह व्यस्तता—यह सब कुछ, किन्तु, एक व्यर्थ, निरानन्द, निष्प्रयोजन, अवसादमय, तृषार्त क्षुद्रप्राणताके ऊपर उत्कट, चीत्कारमय एक असन्तुष्ट जीवनका थोथा चित्र था.

खुले हांल के चारों तरफ खुली गैलरियां. पास ही उनसे लगी हुई छोटी बाल्कनी. पास कई कमरे. इन्हीं में से एक कमरे में चार व्यक्ति बैठे हुये हैं. दो पुरुष, दो महिलायें. एक हैं रोबिन्सकाया. इनकी कला की तमाम रूस में प्रख्याति है. अच्छी, बड़ी, सुन्दर. बड़ी-बड़ी हरी-सी इजिपशियन आँखें, फूल-सा लाल, कुछ फैला, विलास प्रिय मुख, जिसके ओठ किनारों पर दृढ़ता से बन्द हैं. दूसरी बैरोनस टोप्टिन, एक छोटी, कोमल, पीत-काया रमणी. यह सदा रोबिन्सकाया के साथ दीखती हैं, तीसरे हैं प्रसिद्ध एडवोकेट रेज़ोनॉव. चौथे चेप्लिस्की. यह महाशय अतिशय धनसंपन्न हैं, युवक हैं. इधर-उधर का बहुत कुछ इन्होंने किया है. कविताएं लिखी हैं और विभिन्न विषयों पर और बहुत कुछ लिखा है.

"देखो-देखो" वह बोली, "कैसा विचित्र हुलिया है ? या कहो कि क्या विचित्र पेशा. वह, वहाँ जो सात रीड़ का बाजा बज रहा है".

हर कोई उसके हाथ के संकेत की ओर देखने लगा. वहाँ, सच ही अजब दृश्य था. आर्केस्ट्रा के पीछे एक पर्याप्त-काय मूँछ-मण्डित पुरुष बैठे थे. एक भरे-पूरे कुनबे के वह पिता ही चाहे होंगे. अजब नहीं, दादा भी हों. वही वहां अपने इस सात पाइपके बने बाजेमें पूरे जोरसे फूँक मारकर आवाज निकाल रहे थे. जान पड़ता था कि ओठोंके बीचमें लेकर उस तमाम बाजेको हिलाना उन्हें कठिन होता है, सो अद्भुत शीघ्रतासे यह अपना सिर ही बाजेपर कभी दाए और कभी बाएं

घुमा रहे हैं.

"क्या खूब कर्तब है" रोविन्सकायाने कहा, "अच्छा चैपलिस्की, तुम भी जरा वैसे सिर हिलाओ तो."

अब चैपलिस्की भीतर-ही-भीतर बुरी तरह इस आर्टिस्ट रमणीके प्रेममें फंसा था. उसने तुरन्त आज्ञानुसार तत्पर होकर वैसे करना शुरू किया. लेकिन आधी मिनटमें रुक गया.

बोला, "अहं, मुझसे नहीं बनता. या तो लम्बी ट्रेनिंग या पैत्रिक योग्यता इसके लिए जरूरी मालूम होती है."

इस बीच वेरोनेमके हाथ एक गुलाबके फूलकी एक-एक पंखुड़ी नोच-कर मदिरा-पात्रमें फेंक रहे थे. अब एक जम्हाई रोककर जरा खट्टा मुंह बनाकर वह बोलीं, "यहांके लोग भी क्या मनहूस तौरपर अपना वक्त काटते हैं. और कुछ क्या इन्हें सूझता नहीं ? देखो न, न हसी, न गाना न नाच. जैसे किसीने सबको खदेड़कर यहां बाड़ेमें जमा कर दिया है कि लो, चलो, खुश हो लो !"

रेजेनॉवने थकित भावसे अपना गिलास उठाया, जरा ओठोंसे लगाया और अपने उसी मीठे और विमनस्क स्वरमें कहा, "आपके पेरिसमें नाइस में क्या लोग अपनी खुशियां ज्यादा खुशनुमा तौर पर मनाते हैं, क्यों ? सच कहें तो आनन्द, उल्लास, यौवन, मनुष्यके जीवनमेंसे एक दम उठ ही गए हैं. शायद ही सम्भव है कि वे फिर लौटें. मुझे लगता है आदमीको जरा धीरज, सहनशीलतासे काम लेना होगा. कौन जानता है कि ये जो सब नीचे बैठे हैं—आजकी ये संध्या उन बेचारोंके लिए सच ही छुट्टीकी, छुटकारेकी, जरा आरामकी ही घड़ी नहीं है ?"

चेपिलन्सकी संयत, शान्त रहकर बोला, "स्पीच है, साहब, स्पीच. पक्षसमर्थनमें क्या बढ़िया स्पीच है."

लेकिन रोविन्सकाया मुड़ी. उसकी लम्बी बड़ी डोरीली आंखें कुछ संकुचित हुई. पलकें पास-पास आई. उसके साथ यह आवेगका लक्षण था और उसका आवेश वह वस्तु थी कि जिससे राजसी वंशके लोग भी जो न अनकरनी कर डालें थोड़ा. पर जैसे तुरन्त उसने अपनेको थाम

लिया और कुछ थकानके भावसे बोली, "मैं नहीं जानती कि आप किसकी बात कर रहे हैं. न यह समझती हूं कि हम यहां क्यो आए हैं. क्योंकि दुनियामें अब देखनेको मुझे क्या रह गया है. देखिए—मैंने सेविले, मैड्रिडमें साँडकी लड़ाई देखी. देखकर क्या घृणाके अतिरिक्त कुछ और भाव हो सकता है ? वह दृश्य ही ऐसे क्रूर हैं. घूंसे बाजी देखी है, दंगल देखे हैं. सबमें वही बर्बरता है, वही पशुता. फिर एक बार एकत्र शिकार मे भी जानेका मौका हुआ. एक बड़े सफेद सधे हाथीकी पीठपर झालर दार हौदेमें में बैठी.. आप खुद ही जानते हो, ऐसे वक्त क्या होत है. अपने इस लम्बे व्यतिब्यस्त उलझे-सुलझे जीवनमें, जिससे पार होकर आजमें वृद्धा हुई हूं..."

"ओह, वृद्धा ! एलीन विक्टोरिया, तुम कह क्या रही हो ?" चेप्लिन्सकीने हार्दिक आपत्तिपूर्वक किन्तु हल्केसे कहा.

"छोड़ो, चेप्लिन्सकी, मुसाहिबी छोड़ो. मैं खुद जानती हूं कि मैं देहसे शायद अभी जवान, अभी सुन्दर बनी हूं. लेकिन सच, वक्त होते हैं कि जान पड़ता है कि मैं नव्वे वर्ष की हूं. ऐसी जीर्ण मेरी आत्मा हो गई है. लेकिन मैं कहे चलूं. मैं कहती हूं कि जीवनमें तीन घटनाएं, तीन दृश्य घटे हैं जो गहरे जाकर मेरी आत्मामें अंकित हो गए हैं. पहला, जब मैं लड़की थी. मैंने देखा एक बिल्ली दबे पांव कबूतरकी तरफ बढ़ रही है. भयसे, कंटकित उत्सुकतासे, बिल्लीकी एक-एक हरकत और पक्षीकी भी वह बंधी और अचल दृष्टि में एकटक देखती रही. अबतक नहीं जानती, मेरा किसके साथ अधिक जी था, किसके साथ अधिक सहानुभूति. बिलावके चातुर्य और कौशलके प्रति अधिक आकृष्ट थी, या पक्षीकी मंत्र-बद्धता और चपलताके प्रति. जीत पक्षीके हाथ रही. बिल्ली झपट मारे कि पक्षी उड़कर दरख्तपर जा बैठा और वहांसे अपनी भाषा मे जाने क्या-क्या गालियां नीचे बिल्लीपर फेंकने लगा. मैं जानती हूं उसकी भाषाका एक शब्द मैं समझ पाऊं तो लाजसे लाल हो जाऊं, ऐसी गालियां वे रही होंगी. और बिल्ली ! मानो उसके साथ भारी विडम्बना बीत गई हो ! उसके साथ छल हुआ हो, धोखा हुआ हो. फिर अपनी

पूंछ सतरकर खड़ी वह ऐसे देखने लगी जैसे-'अंह, कोई कुछ बात हुई ही नहीं.' दूसरी बात—एक ओपेरामें एक प्रतिभाशाली प्रसिद्ध संगीतकारके साथ मुझे गानेका मौका मिला.'

"कौन ? किसके ?" वैरोनसने पूछा.

"खैर, अब किसीके साथ सही. और अब क्या सब कुछ एक-जैसी ही बात नहीं है. नामसे क्या बनता है तो हां जैसे मैं कुल-की-कुल उसकी प्रतिभाके, उसके प्राणोंके बसमें होकर वेबस बस हिलोरें ले रही हूं, झूमि जा रही हूं. जैसे उस क्षण में लीन हो गई, लुट गई, ऐसी विस्मृति उस पल मुझपर छा गई थी. हमारी ध्वनियां किस अद्भुत रूपमें पार्थक्य खोकर एक दूसरेमें रम गई, खो गई थी. ओह! उस क्षणका वर्णन असम्भव है. शायद जीवन में एक और कुल एकबार वह क्षण आता है. अपने पार्ट के अनुसार मुझे उस स्थलपर रोना होता था, और मैं तब अपने जीवन के सबसे सच्चे, खरे, खारे आंसू रोई. और जब पट-क्षेपके बाद वह मुझ तक चलकर आया, अपने बड़े हाथोंकी हथेलियोंसे मेरे सिरके बालोंको उसने थपका और उस विमोहक, विमुग्ध, मुस्कराहटके साथ देखकर उसने कहा, 'मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूं, ऋणी हूं. जीवनमें पहली बार मैं ऐसा गा सका हूं,'...तब मैं—हां, तुम्हारे सामनेकी गर्वस्फीता, दर्पोद्धता प्रगल्भा मैं पानी-पानी हो वहीं बह सी पड़ी. मैंने उसके हाथोंका चुम्बन लिया, आंसू मेरी आंखोंमें खड़े थे..."

"और तीसरा मौका—?" वैरानेसने पूछा, और उसकी आंखें ईर्ष्या-जन्य चमक से चमक उठीं.

"ओह, तीसरा !" उदासीके साथ उसने उत्तर दिया. "तीसरा तो ऐसा साधारण है कि क्या कहूं. पिछली गर्मियोंमें मैं नाइस में थी. वहां मैंने सेसील किटिनको देखा. देखा, और पाया भी. कुछ दिन हम साथ रहे. किटिन"—उसकी आवाज धीमी और आर्द्र होगई, और उसने आहिस्ता से शून्यमें क्रॉसका चिन्ह किया. "जो अब नहीं है. मैं, सच, नहीं जानती कि यह भला है, या क्या, कि वह अब दुनियांमें नहीं है. लेकिन, कोई क्यों मरता है ?"

अकस्मात् एक क्षणमें, उसकी बड़ी-बड़ी आंखें आंसुओंसे भर आईं. वे तरल आंखें जाने कैसी एक जादूकी ज्योतिसे जगमग कर उठीं. जैसे ग्रीष्म की संध्याका वह एकाकी सांध्य तारा. उसने अपना चेहरा स्टेजकी ओर घुमाया और कुछ कालतक उसकी लम्बी उगंलियां कुर्सीके हत्थे पर कसी रहीं. फिर जब अपने मित्रोंकी ओर वह मुड़ी उसकी आंखें सूखी थीं और भेद भरे मीठे हठीले ओंठ निस्संकोच मुस्कराहटसे खिल रहे थे.

तब रेजेनावने कोमल पर सार्थक और संयत वाणीमें धीमेसे पूछा, "लेकिन, एलीन विक्टोरिया, तुम्हारी यह अतुल ख्याति, तुम्हारे प्रशंसकों की अपरिमित संख्या, लोगोंका तुम्हारे लिए हर्ष निनाद...और अन्तमें उस आल्हादका बोध जो तुम्हारे दर्शक तुमसे पाते हैं, क्या सम्भव है कि इस-से भी तुम्हारी धमनियोंमें जैसे रसका, जीवनका संचार नहीं होता ?"

"नहीं रेजेनाव" थकित वाणीमें उसने उत्तर दिया, "मुझसे कम तुम नहीं जानते कि इस सबकी क्या कीमत है. भेंट करनेवाला वह चलता पत्रकार जो अपने मित्रोंके लिए तमाशेका पास चाहता है और लगे हाथ इन्टरव्यूके लिए बीस-पचीस रूपया भी, हाईस्कूलके लड़के और लड़कियां, युवक व युवतियां जो मेरे आटोग्राफ्ड़ फोटोग्राफ पानेके कृपाप्रार्थी रहते हैं; वे बुड्ढेजो बड़े पेट और बड़ी प्रतिष्ठाके लोग हैं और जो हर जगह मेरे साथ दीखनेके इच्छुक रहते हैं; प्रतिष्ठा सूचक वह अंगुलि-निर्देश जो जहां जाती हूं वहीं तीरके नोंककी तरह मेरे पीठ पीछे कहता चलता है "वह रही ! वही तो है, वह मशहूर...," अनगिनत गुमनाम पत्र, लोगोंकी विनय-अनुनय-अभ्यर्थना...ओह, कहांतक कोई गिनाए .. लेकिन क्यों ? तुम भी तो दर्बारकी इन और उन भद्र रमणियोंसे घिरे रहते हो."

रेजेनॉवने कहा "हां, तो—"

"बस, वही बात मेरी समझो. हां, इतना और है और यही मेरी स्थितिकी विडम्बना है कि जब जब मुझे मौलिक स्फूर्ति होती है, कोई सच्ची अनुभूति, तभी तब मैं अभागिन पाती हूं कि मैं दर्शकोंके सामने कुछ गाती खड़ी हूं जो झूठ है; कुछ कर रही हूं जो कोरा अभिनय है. और

अपने प्रतिद्वन्दीके बाजी ले जानेका भय भी मुझे हरदम सताता रहता है. तिसपर यह शंका कि कहीं आवाज़ उखड़ न जाये, बिगड़ न जाये, कहीं सर्दी गर्मी न लग जाए. और फिर यहकि गलेकी बराबर ऐतिहात रक्खो, पर्वाह करते रहो और उसे पट्टियों और दवाओंसे सेते रहो. इन चिन्ताओंकी नोंकके नीचे रहना...ओह ! सच, प्रसिद्धि बेहद भारी चीज़ है, बेहद फिजूल और बोझल."

"लेकिन वह कलाकारकी प्रख्याति" वकीलने कहा, "वह प्रतिभाकी ज्योति, वही तो वह असंदिग्ध नैतिक शक्ति है...जिसके सामने राजा की शक्ति हेच है".

"हां-हां, प्रिय, ठीक है; सब ठीक है. लेकिन शोहरत, नामवरी, जब तक इन्हें दूर से देखो, इनके सपने लो, तभी तक अच्छी रहती है. पर इन्हें एक बार पाकर पकड़ो तो कांटे-ही कांटे हाथ लगते हैं. तब भी, जब उस ख्याति में से रत्ती भर की भी कमी होती है तो हमें कैसी मनोवेदना होती है. और मैं एक बात तो कहना भूल ही गई. हम कलाकारों को कठिन मेहनत की सजा जो भुगतनी होती है. सबेरे अभ्यास और तैयारी, दिन में रिहर्सल, और खाने से वक्त मिला कि चलो, स्टेज के लिये भाग कर पहुँचो. पढ़ने-पढ़ाने या किसी और काम को मन चाहे, और घण्टे दो-एक निकालने की सोचो, तो कौशल से ही छीन कर पा सको. बस तो ......हमारी मौज के शगल भी इस तरह निरे बेमौज और नीरस हैं।" उसने श्रमित और उपेक्षित भाव से उसी कुर्सी के हत्थे पर पड़ी उंगलियों को हिलाया.

इस बातचीत से उत्तेजित होकर चैपलिस्की. ने सहसा पूछा, "अच्छा तो मुझे बताओ, एलीन विक्टोरिया, अपनी कल्पना को रिझाने और अपनी उपेक्षा को तोड़ने के लिये तुम क्या मांगती हो, क्या चाहती हो?"

उसने अपनी कटीली आंखों से तनिक चैपलिस्की. को देखा और जैसे तनिक अरुणिमा के साथ उसने कहा—"पहले लोग रहते थे आनन्द से. वह जानते थे, जीवन क्या है. किसी तरह के विधि निषेध उनके साथ न थे. तब, वहाँ और उस काल में, जान पडता है, मेरा स्थान

था. वहां मै ठीक रहती. तब शायद में अपने उपयुक्त. अधिक पूर्ण, अधिक प्रस्फुटित जीवन जीती. ओह ! प्राचीन रोम की वह स्वतंत्रता, वह निर्बंधता !"

रेजेनाव को छोड़ किसी ने उसे न समझा. रेजेनाव ने बिना उसकी ओर देखे अपने लहजे में, जैसे एक्टर की भांति, धीमे से कहा, "सीज़र ओ सीज़र, तेरी स्वर्गीय आत्मा को मेरा शतशत प्रणाम".

"ओ रेजेनॉव, तुम तुम हो." रोविन्सकायाने कहा, "मैं तुम्हें कैसा प्रेम करती हूं. तुम खूब हो! विचार उड़ता है कि तुम सदा उसे पकड़ सकते हो, और पंख समेटकर उसे धरती पर ले लेते हो. यद्यपि मैं कहूंगी यह सामर्थ्य मस्तिष्ककी कोई महिम्नताकी द्योतक नहीं है. और सच दो प्राणी साथ मिलते हैं. कल वे मित्र थे, साथ हंस बोल रहे थे, खा पी रहे थे. कि पीछे से चला आता है एक 'आज', जो उनमें से एकको हर ले जाता है, दूसरेको छोड़ जाता है! समझते हो न? एक, दूसरेके जीवन मेंसे एक बारगी ही बिल्कुल लोप हो जाता है. और तब उनके बीचमें न भय रहता है, न मैल, न कोई गांठ, न कोई नाता. यह अत्यन्त, वास्तव, उदार, ज्योतिष्क दृश्य है, जिसको मैं बस अपने सामने कल्पना से खींचकर देख सकती हूं."

"तुममें कितनी हृदयहीनता है, रोविन्स्काया ?" बैरोनसने विचार पूर्वक कहा.

"तो मैं अब इसका क्या उपाय कर सकती हूं. हमारे पूर्वज ही जंगली थे, आजाद और बहादुर. लूट और छीनपर उनका काम चलता था. लेकिन, क्या हम चलें ?"

सब बाग़के बाहर गए. चेल्पिन्सकीने हुक्म दिया कि उसकी मोटर आए. एलीन विक्टोरिया उसकी बाहोंपर झुकी थी. सहसा उसने पूछा, "चैपलिस्की, मुझे बताओ, जिन्हें संभ्रात कहें वैसी औरतोंसे जब छूटते हो तब अकसर तुम कहाँ जाया करते हो ?"

चैपलिस्की रुका और झुका. पर वह जानता था कि रोन्बिसकाया से झूठ कहे, इतना उसका बस नहीं है.

"मैं—ऍं...कहते डर होता है, तुम्हारे कान व्यर्थ मैले हों....और कहां जाऊंगा, यही तमाशे मजलिसमें..."

"क्यों, उससे आगे और कोई नहीं ?"

"अब तुम मुझे लज्जित कर रही हो. सच कहता हूं, जबसे तुम्हारे प्रेममें पड़ा हूं...."

"अच्छा, अच्छा, औपन्यासिकता जाने दो."

"ओह मैं कैसे कहूं" चैपविसकी मरमराया. उसने अनुभव किया कि उसका चेहरा नहीं, उसकी सारी देह लाजसे लाल पड़ी जा रही है. कहा "यही कभी बाजारमें चला जाता हूं. लेकिन मैं, मैं खुद—"

रोविन्सकायाने चैपलिसकी की कोहनी जैसे विरक्त आसक्तिसे अपनी ओर खींची, पूछा, "चकलेमें ?"

चैपलिस्कीने कुछ उत्तर न दिया.

तब उसने कहा, "तो आप हमें फौरन अपनी इस कारमें वहीं ले चलिए. चलें, यह दुनिया भी देखें, जो मेरे लिए बिल्कुल अनजानी, विदेशी है. पर याद रखिए, मेरी रक्षाका भार आपपर है."

शेष दोनों अनमने मनसे आखिर इनसे सहमत हुए. एलीन विक्टोरिया का विरोध करना उनके लिए सम्भव न था. वह हमेशा वही करती थी जो चाहती थी. और उन्होंने यह भी सुन रखा था कि पीटर्सबर्गमें सोसायटीकी मन चली संभ्रांत महिलाएं, यहां तक कि लड़कियाँ, स्वतंत्र प्रेमकी झोंकमें इससे कहीं उच्छृंखल, भीषण, मजेदार खेल खेल जाती हैं.

७

यामकासके रास्तेमें रोविन्सकायाने चैपलिस्कीसे कहा "देखो, सबसे पहले तो हमे सबसे बढ़िया जगह ले चलो, फिर मध्यम, फिर सबसे नीचे दर्जेवाली जगह."

साग्रह उद्यततासे चैपलिस्की बोला, "मेरी प्रिय आदरणीया एलिन-

विक्टोरिया, तुम्हारे लिए मैं सब कुछ करनेको तैयार हूं. यह कोई डींग की बात नहीं कि मैं तुम्हारे हुक्मपर प्राण निछावर कर सकता हूं. तुम्हारे जरा इशारे पर अपनी सारा मान, प्रतिष्ठा और धन बहा दे सकता हूं. लेकिन ऐसी जगह तुम्हें ले जानेका मुझे साहस नहीं होता. रशियन बदतमीज होती हैं, उनकी आदतें गन्दी. कभी तो निरी पशु ही हो जाती हैं. मुझे भय है कहीं ऐसी-वैसी बात कोई तुम्हारी इज्जतमें न बक दे, या तुम्हारे सामने ही कोई कुछ बेहूदगी न कर बैठे..."

"ओ मेरे राम," तुनककर बीचमें ही रोवन्सकायाने कहा, "जब मैं लन्दनमें गाया करती थी तब बहुत थे जो मेरी कृपा याचना करते थे और मैं तब इन बड़े-से-बड़े लोगोंके साथ इन गन्दी-से गन्दी जगहोंको देखने जानेसे नहीं डरती थी. सब वहां लिहाजसे ही मेरे साथ पेश आते थे. उस वक्त मेरे साथ दो इंगलिश रईसजादे रहते थे, दोनों लार्ड थे. खेलके शौकीन और दोनों देह और मनसे समर्थ और पुष्ट. और वे कभी गवारा नहीं कर सकते थे कि किसी महिलाकी उनके समक्ष तनिक भी अवज्ञा हो सके ! पर शायद चैपलिस्की, तुम कायर जातिके हो."

चैपलिस्की चमक उठा. "नहीं, नहीं, विक्टोरिया वह तो मैंने तुम्हें पहलेसे आगाह किया है. क्योंकि मैं तुम्हें प्रेम करता हूं. पर यदि तुम्हारी आज्ञा ही है तो जहां चाहो मैं चलनेको हाजिर हूं. इस सन्दिग्ध काम पर ही क्या, कहो तो मौतमें तुम्हारे साथ चला चलूं."

अबतक गाड़ी टूपिलतक आ गई थी. यामकास भरमें यह चकला सबसे बढ़कर था. एडवोकेट रेजेनावने अपनी उसी व्यंग भरी मुस्काराहटसे कहा, "तो शुरु हो चिड़ियाघरोंका निरीक्षण."

वे एक कमरेमें ले जाए गए. दीवारोंपर गुलाबी कागज चिपका था, और उसपर सुनहरी चित्रकारी हो रही थी. रोविन्सकायाने तुरन्त कलाकार-सुलभ प्रतीक्ष्ण स्मृति द्वारा पहचान लिया कि ठीक यही कागज उस कमरेमें भी लगा था जिसमें अभी कुछ देर पहले वे बैठे थे.

बालटिक प्रान्तोंकी चार जर्मन स्त्रियाँ आईं. सभी पुष्ट देह, पीन वक्ष थीं. पाउडर लगा था. भारी भरकम थीं और जैसे अपनेको आदर

णीय मानती थीं. बातका सिलसिला आरम्भमें तो कुछ न जमा. लड़कियां अचल, स्थिर पत्थरमें खुदी मूर्तिकी न्याई बैठी रहीं, जैसे कि वे अपने मनमें जानती हैं कि वे प्रतिष्ठित संभ्रान्त कुल-महिलाएं हैं. रेजेनाबने शराब मंगाई, पर उससे भी स्थितिमें सुधार न हुआ. आखिर रोविन्सकायाने मदद की. उनमेंसे पुष्टतम, सुन्दरतम, की ओर मुड़कर जो डबल रोटीकी तरह फूली बैठी थी उसने अभ्यर्थनापूर्वक जर्मनमें पूछा, "मुझे बताओ, तुम कहांकी हो ? कहांका जन्म है ? जर्मनीकी हो ?"

"नहीं महोदया मैं, मैं रीगासे हूं."

"तो किस लाचारीसे तुम यहाँ पहुंची? गरीबी के कारण तो नहीं?"

"जी नहीं. गरीबीसे क्यों होती. देखिए, मेरा खाविन्द एक रेस्टोरेन्टमें काम करता है. खाँविन्द ? हां. पर हमारे पास इतना पैसा कहां है कि हम विवाह करें. मैं, जो बचता है, बैंकमें जमा करती जाती हूं. वह भी ऐसा ही करता है. जब हमारे पास दस हजार हो जाएंगे - और हमें चाहिए भी कितना ?—तब हम अपनी निजकी दारूकी दूकान खोल लेंगे. और तब परमात्माने चाहा तो बच्चोंकी बात भी हो जाएगी. मैं दो चाहती हूं, एक लड़का, एक लड़की."

रोविन्सकायाको अचरज हुआ, "लेकिन सुनो तो. तुम युवती हो, सुन्दरी हो, दो भाषाएं ..."

"तीन महोदया" सगर्व टोककर उसने कहा, "मैं लेटिन भी जानती हूं. मैंने प्राइमरी सब क्लास पास की हैं. हाई स्कूलकी भी तीन क्लासें पढ़ी हैं.

"ओह ! तब, तब देखो—" रोविन्सकाया मानो भीतर से भरी आ रही थी. "देखो, इतनी शिक्षासे तो तुम्हें कोई ऐसी जगह मिल सकती है जहां सब खर्चके अलावा तुम्हें ऊपरसे तीस रुपए और मिल जायें. यहीं कहीं हाउस कीपर ही हो सकती हो, कहीं स्टोरमें सीनियर क्लर्क या कैशियर या...और अगर तुम्हारा भावी पति...फ्रिटज ?...."

"जी, हंज..."

"हां, अगर हंज भी उद्योगी और चतुर साबित हों तो तीनचार साल-

के अन्दर तुम्हारे लिए कुछ मुश्किल न होगी कि तुम सिर उठाकर अपने पैरोंपर खड़ी हो जाओ, क्या कहतीहो ?"

"आह, श्रीमतीजी, आप जरा भूलती हैं. आप इस बातको ओझल कर जाती हैं कि अच्छीसे अच्छी जगह जाकर भी अपनेपर कुछ न खरचूं और सब कुछ बचाऊं तो भी पन्द्रह बीस रुपएसे ज्यादह में नहीं बचा सकती. और यहां जरा होश्यारीसे मैं सौ रुपए मजेमें बचा लेती हूं और सीधे जाकर सेविंग्स बैंकमें जमा कर लेती हूं. और श्रीमती, जरा सोचिए कि किसी घरमें जाकर नौकरी करना कैसी तोहमतकी बात है. हमेशा मालिकोंकी तबियत और मर्जीपर नाचते रहो. और मालिक तुम्हें ऐसे समझें जैसे पैरकी जूती और छेड़छाड़से भी वह बाज न आएं. छि:, और मालकिन इसपर तुमसे बेबात जला करे और सदा तुम पर दुतकार ही पड़ती रहा करे."

"नहीं.... मैं नहीं समझती..." रोविन्सकायाने मनोनिवेष पूर्वक कहा. वह उस जर्मनकी आखोंकी ओर आंखें उठाकर नहीं देख पारही थी, और नीचे फर्शपर उसकी निगाह जमी थी. "मैंने तुम्हारे यहाँके . तुम्हारे.... इन घरोंमें बीतनेवाले तुम्हारे जीवनके बारेमें बहुत सुना है. कहते सुना है, यह जीवन भीषण है, बीभत्स. कहते सुना है, तुमको बुरेसे बुरे, बुड्ढे, बदसूरत, मनहूस आदमियोंकी खातिरमें मजबूरन पेश होना पड़ता है. यह कि तुमको तोड़ा जाता है, चूसा जाता है, लूटा जाता है, निर्दय, नृशंस...".

"जी नहीं श्रीमती . हममेंसे हरएकके पास अपनी अपनी पास बुक है, जिसमें हमारा ठीक-ठीक आमद खर्च लिखा रहता है. पिछले महीने मैंने पाँचसौ रुपएसे भी कुछ ऊपर कमाए. दोतिहाई तो जगहके, खानेके, रोशनी, कपड़े, ईंधन वगैरहके हिसाबमें मालकिनको चले गए. मेरे हिस्से में कोई डेढ़सौ बचे. ठीक है न ? पचास मैंने ड्रेसोंमें और ऊपरी बातोंमें खर्च कर दिए. सौ अलगके अलग मेरे पास बचे. इसमें श्रीमती, मैं पूछती हूं, लुटनेकी, चुसनेकी क्या बात है ? और अगर मैं किसी आदमीको नहीं पसुन्द करती, और सच, बाज बाज तो बड़े घिनौने होते हैं, तो मैं कह

सकती हूं, मैं बीमार हूं और मेरे बजाय कोई दूसरी नई लड़की भेजदी जायगी...".

'लेकिन····· माफ करना··· · मैं तुम्हारा नाम···?"

"एलसा"

"एलसा, कहते हैं, तुम से बड़ा सख्त, बेहूदा वर्ताव किया जाता है·····मारा तक जाता है ····· वह करने को लाचार किया जाता है जिससे कि तुम्हारा जी घबराए, घिन हो."

एलसा ने तनक कर कहा "कभी नहीं श्रीमती, हम सब यहाँ ऐसे रहते हैं जैसे एक ही कुनबे की हों, हम सब एक ही तरह की रहने वाली हैं. आपस में रिश्ते भी निकल सकते हैं. परमातमा करे बहुत से कुनबे ऐसे रहें जैसे हम रहते हैं. सच, यहां याम्सकायामें बेहूदगियां भी होती हैं, दंगे, बखेड़े, गलतफहमियां. लेकिन यह सब कुछ वहाँ··· ···वहाँ· ···उन रुपए वाली जगहों में होते हैं. वे रुसी औरतें, गंवार भोली, खूब शराब पीतीं हैं और अपना एक-एक प्रेमी बना बैठती हैं. उन्हें अपने भविष्य का ख्याल ही नहीं होता".

रोविन्सकाया के मन को वेदना ने दबा लिया. धीमेसे बोली, "तुम चतुर हो, एलसा. यह सब ठीक है, लेकिन बीमारी लग जाय तो ? कोई छूत ? क्यों, वह तो मौत है ! और तुम पता कैसे रख सकती हो !"

"नहीं, श्रीमती. मैं आदमी को तब तक अपने पलंग पर नहीं लेती जब तक उसकी पूरी तरह पड़ताल न करलूं·····पचहत्तर फी-सदी के बारे में मुझे यकीन है कि मैं गलती नहीं करती",

"बेहया, चुड़ैल" एक दम गर्म होकर और मेज पर मुक्का मार कर रोविन्सकाया चिल्लाई, बोली "लेकिन तब तुम्हारा एलबर्ट······".

जर्मन ने विनीत संशोधन किया, "जी, हंज".

"हा, हंज·· तो हंज को, मैं समझती हूं, शायद बहुत खुशी तो न होती होगी कि तुम इस जगह रहती हो और उसके प्रति अपने पत्नित्व को आए रोज इस तरह भांझा करती हो !"

एलसा सच्चे और अबोध विस्मय से उसकी ओर देख उठी. "आप

कह क्या रहीं हैं, श्रीमती. अब तक मैंने उसके साथ कभी कोई दग़ा नहीं किया कोई छल नहीं किया. यह तो फाहशा होती हैं, जो ऐसा करती हैं. खासकर रशियन, जो अपने लिए प्रेमी बना लिया करती हैं और उनपर फिर अपना गाढ़ा पैसा बर्बाद करती हैं. मेरा राम जानता है जो मैं कभी ऐसा करती हूं, छिः छिः".

रोविन्सकायाका जी खट्टी घिनसे भर गया. जोरसे बोली "ऐसी नृशंसता ? इससे गहरे पतनकी मैं कभी कल्पना भी नहीं कर सकती थी. (चैपलिस्की से) इन्हें कुछ दो दिलाओ और चलो, यहां से बाहर चलो ".

जब वे सड़कपर बाहर पहुँचे, चैपलिस्कीने उसकी बाँह हाथोंमें लेकर प्रार्थनाके स्वरमें कहा, "परमात्माके लिए क्या यह एक जगह हमारे लिए बस नहीं है ? यह एक तजुर्बा तुम्हारे लिए काफी घूंट नहीं है ?"

"ओह ! कैसा कड़वा ! कैसा घिनौना, विषैला !"

"इसी से मैं कहता हूं, इसको छोड़ें और हम सब लौटें".

"नहीं, अब तो इस बैतणीके पार तक हमें जाना होगा. मुझे अब कोई नीचे दर्जेकी सीधी-सादी जगह दिखाओ".

चैपलिस्की जो विक्टोरियाके ऊपर न्योछावर था, और इसलिए जो अब उससे बेहद खिजला रहा था सिवा इसके क्या कर सकता था कि दस कदम आगे अन्नामरकानीके चकलेमें उसे ले जाए. लेकिन यहां कुछ अप्रत्याशित, कुछ तीखा घट पड़नेके लिए मानो उनकी प्रतीक्षामें ही था. पहुचे, तो पहले साइमनने उन्हें अन्दर जानेसे रोका. रेजेनाँवने कुछ सोनेकी मुहरें उसे थमाईं तब वह पिघला. ट्रेपिल जैसे ही एक कमरेमें यहाँ भी वे पहुँचाए गए. कमरा उसी साज-बाजका था. बस, माल जरा वहांसे उतरा हुआ घटिया था.

एमा उडवानीकी आज्ञापर लड़कियाँ सब उस कमरेमें इकट्ठी हो गईं. लेकिन यह वैसे ही हुआ जैसे किसी खिले बागमें चिढ़ा जानवर छोड़ दिया जाए, या सोडेमें एसिड मिला दिया जाए. यानी यह कि

जेनी को भी वहाँ आने दिया गया. यही बड़ी भूल हुई. छिड़ी, क्रुद्ध, उसकी आँखोंमें आगकी लपटें उठ रही थीं. विनीत शान्त तिमिरा भी सलज्ज, आमंत्रण बखेरती हुई, स्खलित मुस्कराहटके साथ सबके पीछे-पीछे आई. अन्त में लगभग सब प्राणी उस कमरेमें जमा हो गए. यहाँ रोविन्सकायाने नहीं पूछा, कि तुम इस जिन्दगीमें कैसे आ पड़ी ? और यह भी कहना होगा कि इन लड़कियोंने विशद आदर और अभ्यर्थनाके साथ अतिथियों का स्वागत किया. विक्टोरियाने उनसे कुछ अपना गाना सुनानेके लिए कहा और खुशी-खुशी उन्होंने गाया—

सोमवार अब फिर आ गया है,
उन्हें चाहिए कि वे मुझे बाहर ले जाएं,
पर डाक्टर है कि बाहर नहीं जाने देता,
उसकी ऐसी-तैसी·········
और भी :
में बेचारी, में बेचारी, में बेचारी,
दारूखाना बन्द है,
और मेरा सिर मुझे दर्द दे रहा है,
उचक्के की मुहब्बत
मसाला है, मसाला,
लेकिन रण्डी
ऐसी ठन्डी है जैसी बरफ.
हीं, हीं, हीं,
वे साथ-साथ आये,
कैसी जोड़ी है कि वाह !
एक है रण्डी, वह गठ कतरा,
हीं, हीं, हीं !
सबेरा अब आ रहा है,
वह चोरी की तदबीर में है;
इधर वह अपने पलंग में पड़ी है,

हंस रही है जैसे क्या न हो,
हीं, हीं, हीं !
सबेरा आ गया,
वह चल पड़ा अपने काम पर,
लेकिन उसकी माशूका की
उसके साथी अब घात में है,
हीं, हीं, हीं ?

और उसके बाद एक कैदियों का गीत :—

में बिगड़ा जवान हूं
बिगड़ा हूं कि अब नहीं सुधरूंगा.
साल के बाद साल आते हैं.
और दिन अपने चले जाते हैं.
मेरी मेरी रोओ मत प्यारी,
तुम मेरी हो, मुझे मिलोगी;
लाम का काम निबटा
कि मैं तुझसे व्याह करुंगा.

अकस्मात सबको देखकर विस्मय हुआ कि स्थूलकाया किटी, जो सदा बन्द, गुम, अनमनी रहती थी अब एकदम ठहाका मारकर हंस पड़ी. वह उडेसाकी रहनेवाली थी. बोली—

"मैं भी एक गाना गाती हूं. हमारी तरफ आवारा छोकरे और ताड़ीखानोंकी रानिया यह गाया करती हैं." और अपने भद्दे फटे वेढंगे आलापमें उसने गाना शुरु किया. साथ शरीरकी अजब बेहूदा हरकतें भी करती जाती थी.

आह, मैं डिफोवकफा जाऊंगा
मेज पर बैठूंगा,
एक हाथसे हैट उतारकर
फेंक दूगा—
तब अपनी प्यारी रानीसे पूछूंगा

"प्यारी क्या लोगी ?"
और जवाबमें वह कहेगी
"मेरा सर दर्दसे फटा जाता है"
"अरी, मैं नहीं पूछता
तेरा दर्द क्या है ?
अरी में पूछता हूं
तू पीना क्या चाहती है ?
बीअर वाइन क्या मंगाऊं ?
या लाल शराब ? या कुछ भी नहीं ?"

सब ठीक चल रहा था कि एकदम छोटी मनका आधी बाहोंकी कमीजमें वहां आ धमकी. हांफ रही थी और बदहवास थी. एक दूकानदार कलकी सारी रातकी मौज बहारका पेशगी इन्तजाम कर गया था. उसीके जीके बहलाने के काममें वह आ रही थी.

लेकिन अभागी वेनेडिक्टाइन शराब ज्योंही मनकाके भीतर पहुंचती है कि उसके सिर चढ़ बैठती है. तब यह मनका कुछ और मनका बन उठती है. तब उसमें लड़ाई का भूत जाग जाता है. यह छोटी मनका यह छोटी भूरी मनका, तब वेढब मनका हो जाती है. कमरेमें आते ही वह अचानक फर्श पर चित्त पड़ गई, और, पीठके बल पड़ी-पड़ी खूब ज़ोरसे बेतहाशा ठट्ठा मारकर हंसने लगी. बाकी और भी सब हंसने लगे. हां ! पर—हंसी देरतक न रही...मनका एकदम फर्शपर उठ बैठी और चिल्ला उठी "ओहो, यह तो कोई नई जनी हमारे यहां दाखिल हुई दीखती हैं."

यह असंगत एकदम आशातीत बात अब तो घट ही गई. पर बैरोनसने उसपर और भी भारी मूर्खता कर डाली. वह—बोली, "नहीं, जो पतिता है, तुष्ट हो गई है, वैसी बहनोंके लिए एक संस्था खुली है. मैं उसकी संरक्षिका हूं. इसी हैसियतसे कर्तव्य समझकर मैं तुम लोगोंके बारेमें कुछ पूंछताछ करने यहां आ गई हूं."

पर इस स्थल पर जेनी एकदम भभक-कर जल उठी. "निकल जा अभी यहांसे, इसी दम, बुढ़िया खूसट, छिनाल कहीं की. तुम्हारे आश्रम,

तुम्हारी संस्था ! मैं जानती हूं उन्हें. जेलसे बदतर चीजें हैं वे. तुम्हारे मंत्री कुत्तेके मुंहकी हड्डीकी तरह हमें बरतते हैं. तुम्हारे बाप, तुम्हारे खाविन्द, तुम्हारे भाई, हमारे पास आते हैं और हमसे तरह-तरहकी बीमारियां ले जाते हैं···हां, जान-बूझकर···और वे फिर हमारी बीमारियां तुममें प्रविष्ट करते हैं. तुम्हारी आश्रमोंकी सुपरिन्टेन्डेन्ट संचालिकाएँ ड्राइवरों और दलालों, और पुलिसमैनोंके साथ मौज मारती हैं, और हम जरा आपसमें हंसीं, खुलकर बोलीं तो हमें कोठरीमें मूंद दिया जाता है. सुन लो, ऐसे हैं तुम्हारे निकेतन और आश्रम. इसलिए अगर तुम यहां ऐसे आई हो जैसे थियेटर देखने जाती हो तो तुम्हारे मुंहपर मैं यह असली सच बात कहती हूं, सुनलो, और अपना मुंह धो आओ."

किन्तु तिमिराने शांतिपूर्वक उसे रोका, "ठहरो जेनी, मैं उन्हें सब कहे लेती हूं·· क्या यह हो सकता है, बैरोनस, कि तुम सचमुच संभ्रान्त कुलशीला समझी जानेवाली महिलाओंसे हमें नीचा समझती हो ! एक आदमी आता है, एक मुलाकातके दो रुपए या पूरी रातके पांच रुपए देता है और हमें पाता है! मैं इसे दुनियांमें किसीसे छुपानेकी जरूरतमें नहीं हूं ··लेकिन मुझे बताओ, बैरोनस, कि तुम घर कुनबेवाली एक भी ऐसी विवाहित स्त्रीको बता सकती हो जो भीतर-ही-भीतर अपनेको वासनाके खातिर किसी युवक के, और पैसोंके एवज किसी अधेड़के हाथों अपनेको नहीं सोंप देती. मैं खूब जानती हूं कि तुममेंसे एक-सौमें पचास तो अपने प्रेमी बनाकर उनके यहां जाती हैं, और बाकी पचास जिनकी उमर ज्यादा है अपने पास जवान लड़कोंको रख छोड़ती हैं. मैं यह भी जानती हूं कि तुममें बहुत—आह, काफी बहुत,—अपने बाप भाई, अपने बेटों तकसे मिलती हैं. हां, इतना है कि इन चोरियों, इन बेहयाइयोंको तुम भली भांति तरह-तरहके मखमली लफजी ढकनोंमें बन्द करके रखती हो. यही हममें तुममें फर्क है. हम पतित हों पर झूठ नहीं बोलतीं, बहाना नहीं करतीं. तुम सब पतित होती हो और ऊपरसे झूठ भी बोलती हो. अब खुद सोच देखो, फर्क है तो किसके हकमें फर्क है !"

"शाबाश, तिमिरा ! ठीक कहा ठीक. इनकी ऐसीही खबर लेनी

चाहिए," फर्शपर बैठे ही बैठे मनका चिल्लाई, अस्तव्यस्त सुन्दर केश फहराते हुए, वह इस समय एक तेरह वर्षकी नवीना दीख पड़ती थी.

"यही, यही," जेनीने भी प्रोत्साहन दिया उसकी आंखकी लहक ज्वाला फेंक रही थी.

तिमिराने कहा, "क्यों है न, जेनी ? मैं उससे भी आगे जाती हूं. मैं कहती हूं, हममेंसे हजारोंमेंसे मुश्किलसे एक गर्भपात करती होगी और तुममेंसे हरएक कई-कई बार—क्या यह सच नहीं है ? और तुममेंसे जो यह करती हैं, निराशामें पड़कर नहीं, दैन्यकी दारुणतामें घिरकर ऐसा नहीं करतीं ! नहीं, वह अपना यौवन, अपना रूप कायम रखना चाहती हैं, तुम अपना यौवन, अपना सौन्दर्य बिगाड़ने से इसलिए डरती हो, क्योंकि वही तुम्हारी सम्पत्ति है, वही तुम्हारे जीवनका मूलधन है. या तुम्हें सिर्फ पाशविक, शारीरिक, मौजकी चाह रहती है. मात्र संभोग तुम चाहती हो, आगे बखेड़ा पालना नही चाहती. और गर्भावस्था और मातृत्व तुम्हारी इस अनर्गल-लिप्सामें बाधक होते हैं."

रोबिन्सकाया हतश्री हो गई और बेरोनस की ओर मुखातिब कर अंग्रेजी में बोली : "सुनो बैरोनस, लड़की यह अपनी स्थिति के लिहाज पढ़ी लिखी मालूम होती है".

"सोचती हूं, मेरी भी निगाह में उसका चेहरा पड़ा है. मैंने उसे कहीं देखा है ! लेकिन कहां ? सपने में ? या ख्याल ही ख्याल में ? या बिल्कुल छुटपन में ?"

तिमिराने लापरवाही के साथ धृष्ट बनकर बीचमें कहा, "स्मृति पर जोर न डालिए, बेरोनस ··· ·· मैं आपकी मदद करती हूं. ख़रकौब में कोनियाकिनस होटल का कमरा, थियेटर मैनेजर, और किसी कोरस गायन की याद कीजिए तब आप बैरोनस न थीं. लेकिन आइए अंग्रेजी छोड़िए, तब आप और साथिनों की तरह साधारण कोरस गर्ल थी".

"लेकिन कृपा कर बतलाओ तो, श्रीमती मार्गरेट, यहां तुम कैसे आ पहुंची ?"

"ओह, रोज लोग यही पूछा करते हैं. बस, मैं यहां आ पहुंची,

और क्या ?" और एक मर्म भेदी व्यंग के लहजे में उसने पूछा "मैं समझती हूं, जितना आप हमारा समय ले रहीं हैं उतने दाम आप हमें देंगी ."

अचानक मनका चिल्लाई, "नहीं, नहीं चाहिए दाम. और तुम जाकर सब भाड़ में पड़ो," और एकदम अपनी जुर्राबों में से दो सोने की मुहर निकाल कर उसने मेज पर फेंक कर मारीं. "यह लो······ तुम्हारे गाड़ी के किराये को देती हूं. अभी इसी वक्त सीधी चली जाओ. नहीं तो मैं यहाँ के सारे शीशे, सारी बोतलें तोड़ दूंगी, जो समझा हो" .

रोविन्सकाया खड़ी हुई. उसकी आँखों में सच्चे आँसू थे. भारी वाणी से बोली, "हां हम लोग चले जायेंगे, और श्रीमती मार्गरेट की बातों से हमारा कल्याण ही होगा. अपने समय की पूरी कीमत आप हम से लीजियेगा. चैंपलिस्की, देखो ख्याल रखना. फिर भी आप लोगों ने इतना मुझे गाकर सुनाया है, तो क्या मुझे आप इजाजत देंगी कि मैं भी आप को कुछ सुनाऊँ !"

रोविन्सकाया पिआनो पर गई. तनिक उसे परखा, कुछ स्वर निकाले और एक दम यह सुन्दर गीत गाना शुरू किया.

हम फिर अभिमान में अलग हो गए,
एक शब्द ईर्ष्या या निंदा का नहीं,
न उच्छ्वास, न आह.
अलग हो गए, जैसे सदा के लिए.
पर जो बस कि मैं तुझे मिल पाऊं !
आह, कि जो मैं तुझे मिल जाऊं !
रोता नहीं हू, न शिकायत है,
भाग्य के आगे वश ही क्या?
मालूम नहीं कि क्या वह प्रेम था
जिसमें तुमने मुझे इतना दुःख दिया,
पर जो बस कि मैं तुझे मिल पाऊं !

आह, कि जो तुझे मिल जाऊँ !

रोविन्सकाया जैसी गुणी कलावन्तके वीणाविनिंदित-कंठसे निकलकर इस कोमल-करुण गीतने उन महिलाओंके भीतर वह जगा दिया जो उनके मर्ममें सोया था. उनके प्रथम प्रेमकी स्मृतिने छिड़कर उन्हें विह्वल विसुधकर छोड़ा. वे क्षण जिनमें पहली बार लुटकर उन्होंने सब कुछ पा लिया था, वे क्षण जब पहली बार किसीके अंकमें टूटकर वह बह गई थीं और धन्य हुई थीं, वे क्षण जब वे सब कुछ गंवाकर कृतार्थ भाव से पतित हो गई थीं, वे ही क्षण-अब उनमें मचलकर हरे हो गए. बसंतकी ऊषामें, प्रभातकी गुलाबीमें, जब घास ओससे भीगी थी और आकाश और बनस्पतिके छोर अरुणिमासे छू गए थे, उस समयकी विदा, वह आलिंगन जब वे दो एक थे और जो अन्तिम था, और जब छातीके भीतर कोई धुक-धुक करके कह रहा था, 'यह फिर न होगा, फिर न होगा, और सुबहका ठण्डा कोहरा जब सिरपर छाया था और बाल बिखरे थे... ओह !...

तिमिरा मौन थीं. मनका निस्पन्द. और सब जैसे थम गया था. तभी जेनी, हठीली निरंकुश जेनी, दौड़कर गायिकाके पास गई, घुटनोंके बल बैठी और उसके चरण पकड़कर सुबक-सुबककर रोने लगी.

रोविन्सकाया का जी भी छू गया. उसने उसके सिरको अपनी बाहों में लेकर कहा, "जेनी, मेरी बहन, मैं तुम्हारा मस्तक चूम सकती हूं ?"

जेनीने उत्तरमें कुछ धीमे उसके कानमें कहा.

रोविन्सकाया बोली, "एंह यह भी क्या छोटी-सी बात है. जरा इलाज किया कि सब दूर हो जाएगा."

"नहीं, नहीं, नहीं, मैं ठीक नहीं हूंगी...अरे क्यों, तो मैं और सबमें रोग प्रवेश करूंगी, कि वे सब सड़ते और गलते रहें."

"आह मेरी बहन," रोविन्सकायाने कहा, "तुम्हारी जगह मैं होती, मैं ऐसा न करती."

और तब जेनी, गर्वस्फीता वह जेनी रोविन्सकायाके हाथोंको, घुटनोंको सिसक-सिसककर आवेगपूर्वक चूमने लगी, बोली "तब लोगोंने मेरे साथ यह

क्यों कर डाला ? अरे, क्यों ऐसा किया ? क्यों ? मुझे बताओ, क्यों ?"

यह अतुल सामर्थ्य जीनियसकी है, हां, प्रतिभाकी ही यही सामर्थ्य है. अपने निर्मल हृदयके वक्ष खोलकर जब उसकी पुकार बाहर आती है, तब उसके स्पर्शसे मनुष्यकी आत्मापर आर्द्रता छा जाती है, वह अपने आमन्त्रण द्वारा जैसे सबको अपने भीतर के स्नेहमें खींच लेना चाहती हैं. उसके पास निम्न तर्क नहीं, अहंवादी बुद्धि नहीं, वह प्रतिभा है.

आत्मसम्मानमें भरी जेनी, रोविन्सकायाके दामनमें अपना चेहरा छिपाकर हुड़क-हुड़ककर रो रही थी. छोटी मनका आर्द्र, विनीत, चेहरे को रूमालसे ढके कुर्सी पर बैठी थी. तिमिरा एक कोहनी घुटनोंपर टिकाए झुके चेहरेको हथेलीमें लेकर बंधी निगाहसे नीचे देख रही थी. दर्बान साइमन भी, जो सिर्फ इस ताकमें वहां खड़ा था कि कब उसकी जरूरत हो आये, उसकी भी आंखें न जाने क्यों खुली ही रह गई थीं.

रोविन्सकाया जेनी के कानों में धीमे से कह रही थी, "निराश मत होओ बहन. कभी नहीं. कभी होनहार ऐसे हो जाता है कि आदमी का बस नहीं चलता और आदमीके लिए सिवा सिर झुका लेने के और चारा नहीं रहता. लेकिन देखो आज, आज हैं. और कल होते-होते जीवनियां बदल गई हैं. मेरी प्यारी, मेरी बहन, आज दुनियां में मेरा नाम ही नाम है. लेकिन तुम अगर जानो कि कैसी गन्द, कैसे मैल, कैसे ग्लानिके सागरों में से मुझे पार होना पड़ा है, ओह !···सो, मेरी बहन, ढाँढ़स बांधो, खड़ी हो जाओ. अपने नक्षत्र में विश्वास रक्खो." वह जेनी की ओर झुकी, उसके माथे का चुम्बन लिया,

इस क्षणके बाद इस दृश्य को चैपलिस्की, जो अनिमेष बद्धदृष्टि और रुद्ध यातना के साथ सब देखता रहा था, कभी नहीं भूल सका. नहीं, नही भूल सका उन आर्द्र, सुन्दर ज्योतिष्क किरणों को जो उस प्रतिभा शालिनीकी बड़ी हरी सी इजिप्शियन आखों से इस समय विकीर्ण हुई थीं.

दल कुछ अशान्त भारी भावसे विदा हुआ. लेकिन रेजेनांव अनजान भाव से कुछ क्षण पीछे रह गया.

वह जेनी के पास गया, आदर पूर्वक उसके हाथों को उठा कर चूमा, कहा "संभव हो तो हमारी यह मूर्खता भूल जाओ ...... यह अब दुहराई नहीं जायगी. लेकिन, बहन, जब तुम्हें जरुरत हो, मुझे याद करना, मुझे सदा उद्यत पाओगी. यह मेरा कार्ड है. इसे सिर्फ रख मत लो. पर मान लो इस सन्ध्या से में तुम्हारा मित्र हूं. सेवा के लिए तुम्हारा हूँ". फिर जेनी का हाथ चूम कर सब के पीछे जीना उतर कर वह चला गया .

१८

बृहस्पतिवार. सवेरेसे धीमी वर्षा हो रही थी. बृक्षोंमें हरी कोपलें निकल आई थीं. झड़ी सवेरेसे अजस्र पड़ ही रही थी. तभी सहसा, कुछ अलस, तन्द्रिल, भाव-सा व्याप्त हो गया, मानो निस्पन्दता छा गई, सब सुप्त अचेत, आर्द्र, हो उठा.

ऐसे समय सदाकी भांति, सब जेनीके कमरेमें आ इकट्ठी हुईं. पर जेनीके भीतर जाने क्या हो रहा था. वह इस टोलीकी हँसी, मजाकमें सदा अग्रणी रहती थी. पर आज न वह हँस रही थी, न छेड़ छाड़में भाग लेती थी. न ही हमेशाकी तरह अपना वह पीली जिल्दका उपन्यास पढ़ रही थी. वह पुस्तक अब ठाली भावसे चित्त पड़ी हुई जेनीके पेट या छातीपर पड़ी थी. पर इस अलस विक्षिप्त भावमें भी एक तेजोमय दीप्तिकी छाया थी. उसकी आखोंमें घृणाभरी एक पीली आग-सी जल रही थी. छोटी मनकाने जो जेनीपर लट्टू थी जेनीका ध्यान अपनी ओर खींचना चाहा. पर जैसे जेनीको उसकी उपस्थितिका बोध तक न होता था. सो, बातचीत उखड़ी-उखड़ी, ऊपरी रही. सब कुछ अनमना सा था, और सबके मनपर त्रास छा रहा था. हो सकता है, लगातार सात दिनसे अविराम बरसती रहनेवाली इस सावन-भादोंकी फुहियोंका भी यह प्रभाव हो. तिमिरा जेनीके पलंगपर गई. कोमल प्रेमसे उसे आलिंगन

किया और उसके कानके पास मुंह ले जाकर धीमेसे बोली, "जेनी, क्या बात है ? इधर दिनोंसे देखती हूं तुम्हारे भीतर कुछ हो गया है. तुम्हारी मनका भी हैरान हैं. देखो न, तुम्हारे प्यार बिना बिचारी कैसी हो रही है. सूखकर पीली हो गई है. मुझे बताओ जेनी शायद किसी तरह मैं तुम्हारे काम आ सकूं."

जेनीने आखें बन्द की और इंकारमें अपना सिर हिलाया. तिमिरा ज़रा और ऊपर सरक गई, और थपकी देकर उसका कन्धा सहलाने लगी.

"अच्छी बात है जेनिश्का, तुम जानो. तुम्हारे मर्मको मैं नहीं छेड़ूंगी. तुम्हारी आत्मामें घुसनेवाला मैं कौन हूं. मैंने इसीसे पूछा कि तुम्हीं एक हो जो...".

जेनी निश्चयपूर्वक अचानक बिस्तरमेंसे उठ बैठी. साधिकार भावसे तिमिराका हाथ पकड़ा और कहा, "आओ यहांसे एक मिनट के लिए ज़रा बाहर चलें. मैं तुम्हें सब कहूंगी. लड़कियों, ठहरो, हम दोनों अभी आती हैं."

पिछले बरामदेमें पहुंचकर जेनी अपनी सखीके कन्धेपर हाथ रखकर बोली. उसका चेहरा फक्क हो गया था, और उसपर जाने क्या वेदना अंकित हो गई थी. "तिमिरा, सुनो. किसीने मुझे सिफलिस दे दी है."

"ओह !...मेरी जेनी, क्या इसे मुद्दत हो गई ?"

"हां कुछ समय हो गया. तुम्हें याद है जब वे लड़के यहां आए थे. वही जो पवनंजयसे उलझ पड़े थे. तब मुझे पहली बार पता लगा था. अगले रोज ही दिनमें मुझे यह मालूम हो गया."

"जानती हो," तिमिराने कहा, "मुझे भी इसका गुमान था. खासकर जब तुम उस गायिकाके क़दमोंमें घुटनोंके बल बैठ गई थी और उसके कानमें कुछ कहा था, तब गुमान मेरा पक्का बन गया था. लेकिन मेरी प्यारी, मेरी बहिन जेनिश्का, तुम्हें अपना ख्याल रखना चाहिए."

जेनीने गुस्सेसे फर्शको ठोकर दी और जो रेशमी रुमाल अपनी कांपती ऊंगलियोंमें वह थामे थी उसे फाड़कर दो कर दिया.

"नहीं बिल्कुल नहीं. कभी नहीं. हां, मैं अपनेमेंसे किसीको यह छूत

न लगने दूंगी. तुमने खुद देखा होगा. पिछले कई हफ्तोंसे में सबके साथ एक मेज़पर खाना तक नहीं खाती हूं और अपनी थाली अलग ही धो-पोंछ लेती हूं. तुम तो जानती हो, मनका मुझे कैसी प्यारी है. पर इसीसे में उसे अपनेसे तोड़कर दूर रखती हूं. मगर में इन दो टांगके जानवर मरदुओंसे, इन कम्बख्तोंसे जान-मानकर मिलती हूं. आई शाम में दस पन्द्रहको तो अपना यह ज़हर दे ही देती हूं. गलने दो, सड़ने दो उन्हें. उनसे उनकी बीवियों, उनकी प्रेमिकाओं, उनकी माओं बहनों बेटियोंके भीतर पहुंचे यह विष. हां—हां, माताएं और बहनें और उनके बाप और उनकी पढ़ानेवालियाँ, और उनकी बहुएं और उनकी दादियाँ और बेटियां सब. ये भलीमानस कहलानेवाली जातिकी जाति मेरी तरफसे कलकी मिटती आज मिट जाय और गल जाए."

तिमिरा और आग्रह और प्रेमपूर्वक सदय भावसे जेनीका सिर सहलाने लगी और बोली, "जेनिश्का, क्या सच, तुम अपने ऊपर दया नहीं करोगी ? तुम हदतक जाकर ही मानोगी ?"

"हां. में हृदयको मसलकर और ममता को कुचलकर रहूंगी. पर तुम सबको मुझसे डरनेकी जरूरत नहीं है. में अपने आदमीको आप छांट लेती हूं. सबसे सुन्दर, सबसे धनिक, सबसे गर्वीला और जो अपने को बड़ा मानता हो, वही मेरा है. वही मेरा शिकार है. लेकिन तुम निश्चिन्त रहो, ऐसा कभी न होगा कि मेरे बाद वह तुममेंसे किसीके पास जाय. ओह, में ऐसी कामातुर, मतवाली, बनकर उनसे मिलती हूं कि तुम देखो तो हंस पड़ो. में उन्हें काटती हूं, खरोंचती हूं, चिल्लाती हूं, सिसकी भरती हूं, रह-रहकर कांपती हूं, जैसे मदमत्ता ही होऊं. और वे गधे, सच समझते हैं,"

"तुम जानो, तुम जानों जेनिश्का", "विचारमग्न हो नीची निगाह रखकर तिमिराने कहा, "शायद तुम ठीक हो, शायद वही ठीक हो. कौन जानता है ? पर बताओ, तुम डाक्टर के हाथों कैसे बचीं ?"

जेनी इसपर परे जाकर खिड़कीके शीशेपर मुंह झुका, एकदम सुबक-सुबककर रो उठी. वेदनाके, क्रोधके, असहायताके, प्रतिहिंसाके आंसू

ही थे वे. कांपती हांफती बोली, "कैसे बची ?...क्यों...से ऐंकि परमात्माने इस मामलेमें मुझे सौभाग्यवती बनाया है. मैं बीमार वहां हूं जहां कोई डाक्टर नहीं पहुंच सकता, नहीं देख सकता. तिसपर हमारा डाक्टर तो एक बुड्ढा और जाहिल है ही..."

और तभी मनकी प्रबल सावेश शक्तिके साथ उसने एकदम वैसे ही अपने आंसू रोक लिए जैसे कि वह रो पड़ी थी. कहा, "आओ तिमिरा चलें. यह तो है न कि तुम कुछ कहो सुनोगी नहीं ?"

"कभी नहीं."

और दोनों शान्त, संयत, बन्द जेनीके कमरे में लौट आई.

साइमन कमरेमें आया. वह औरोंके साथ जो था जेनीके साथ वह न था. मानो अपने विपरीत होकर भी जेनीके प्रति, वह हठात् आदरशील था. उसने कहा, "बीबी जेनिश्का, वह सरदार साहब वेन्डाको याद फर्माते हैं. दस मिनटके लिए जानेकी उसे इजाजत दोगी ?"

नीलोत्पल लोचना सुन्दरी वेन्डा अपने बड़ेसे लाल मुंहको लेकर निवेदन भावसे जेनीकी ओर देखने लगी. अगर जेनिमा कह देती नहीं, तो वह इस कमरेमें ही रहती. पर जेनीने कुछ नहीं कहा. बल्कि जानकर उल्टी अपनी आंखें बन्द कर लीं. वेन्डा आज्ञा समझकर कमरेसे चली गई.

यह सरदार महाशय महीनेमें बंधे दो बार ठीक पन्द्रहवें रोज यहाँ आते हैं. ठीक उसी तरह ऐसे एक दूसरी लड़की जोहराके लिए एक और संभ्रान्त महाशय, हर बंधी शामको आ धमका करते हैं. उनका नाम इस आवासमें डाइरेक्टर पड़ा हुआ है.

जेनीने अचानक वह पुरानी फटी किताब पीछे फेंक दी. उसकी मटियाली आंखें खरी सुनहरी आगसे जल उठीं. बोली, "तुम इस जनरलको नफरत नहीं कर सकती. करती हो तो गलत है. मैंने इससे बदतर लोग देखें हैं. एक मुलाकाती एक बार आया. आदमी क्या गधा ही उसे कहो. वह मेरे साथ सिवाय उस...उस यानी...उसे मेरी छातियों-

में खूब आलपिनें चुभानेमें मज़ा आता था. और विलनौमें एक पोलिश ईसाई पादरी आया करता था. वह मुझे निर्वस्त्र करता, फिर सिरसे पांवतक सफेद कपड़ा उढ़ाता, लाचार करता कि मैं पाउडर लगाऊं, और विस्तर पर लिटा देता. फिर मेरे पास तीन मोमबत्तियां जलाता और जब इस तरह में पूरी तौर पर उसके निकट बिल्कुल मुर्दा लाश हो जाती तब वह मुझपर टूटता."

छोटी भूरी मनका अब चिल्लाकर बोली, "सच कह रही हो, जेनी. मेरे पास भी एक बुड्ढा आता था. वह मुझे लाचार करता था कि मै मानूं कि में क्वारी हूं. और इसलिए मुझे संभोगके समय खूब चीखना, चिल्लाना पड़ता था. जेनिश्का, तुम हम सब ें होश्यार हो, लेकिन में शर्त बदती हूं कि तुम भी नहीं बता सकती कि वह कौन था ?

"जेलका जमादार !"

"नहीं, नहीं, वह आगवाला अफसर"

अचानक तभी किटी खिलखिलाकर बोली. "और मेरे पास भी एक अध्यापक आता था, वह किसी तरहकी गणित वणित पढ़ाता था. मुझे याद नहीं क्या पढ़ाता था. वह कहता था, मैं मान रखूं कि मैं तो पुरुष हूं और वह स्त्री. और मैं उसे—करूं···जोरसे, बलात्कारसे, समझी न ?···और देखो बेवकूफको. जरा सोचो तो···वह तमाम वक्त हिलकी भर-भर कर सिसकी ले-लेकर रोता जाता था. कहता था, 'मैं सब तुम्हारी हूं, मैं तुम्हारी प्यारी नन्ही-सी रानी हूं. ओ, मुझे ले लो, कलेजे से लगा लो, जनानियां कहीं का !"

चुस्त चर्राक वर्काने भी एकदम कहा, "हिजड़ा, सनकी !"

धीर गंभीर तिमिरा ने उत्तर दिया, "क्यों ? इसमें सनकी होनेकी क्या बात है ? बाकी और सब आदमियोंकी तरह बस वह भी विषयलोलुप था. जैसे जीभके चटोरे होते हैं वैसे ही वह चसका था. घर पर उसे कुछ मसालेदार मिलता न होगा, सो यहां पैसा देकर जो जी चाहे, वही पानेके लिए यहाँ आ जाता और पा लेता था."

जेनी जो अबतक चुप थी एकाएक मानो एक झटकेके साथ, मानो

बात छीनकर, विस्तरपर उठ बैठी. "बोली, तुम सब मूरख हो. तुम उन्हें यह सब चुपचाप माफ क्यों कर देती हो ? पहले में भी मूरख थी. पर अब मे उनको उल्लू बनाये बिना नहीं छोड़ती. अब मैं उन्हें चार हाथ टांगों पर चलाती हूं, मजबूरन अपने पैरोंके तलुवे चटवाती हूं. यों ही एकको भी नहीं जाने देती. और वे· · ·वे यह सब खुशीसे करते हैं· · ·तुम सब जानती हो, लड़कियों, पैसा में नहीं चाहती. पैसा कम्बख्त · लेकिन आदमीको, जैसे होता है, नोचकर तोड़ डालूं, और यह मैं करती हूं. नीच, नकेलबन्धे वे जानवर अपनी बीवियोंकी, अपनी माओंकी, बेटियोंकी, अपनी दुलहिनोंकी, प्रेमिकाओंकी, फोटो उपहारमें दे जाते हैं· · ·हां तुमने देखा न होगा, मेरी छोरीके पास जो पड़ी रहती है, वही फोटो है. लेकिन मेरी प्यारी लड़कियों, जरा सोचो. स्त्री एकबार प्रेम करती है, पर सदा के लिए. और आदमी का प्रेम एक बनैले कुत्तेके जैसा प्रेम है, फसली और निरा कामुक. वह बफादार नहीं होता, इतनी ही कुछ बात नहीं. पर उसके पास तो, क्या पुरानी क्या नई, किसी अपनी प्रेम-पात्रीके प्रति साधारण कृतज्ञता तकका तनिक भाव कभी नहीं रहता. सुनती हूं अब नई सन्ततिके युवक भी होने लगे हैं जो प्रेमकी निष्ठा जानते हैं. मैं स्वीकार करूं कि मुझे कोई ऐसा युवक अबतक नहीं मिला, पर मेरे मन में है कि यह ठीक है. मैंने जो भुगते हैं सब लफंगे, लुच्चे, कायर, जानवर थे. बहुत रोज नहीं हुए कि अपनी ऐसी बेहूदी जिन्दगीके बारेमें मैंने एक उपन्यास पढ़ा था. उसमें भी वही लिखा था, जो मेरे अनुभव हैं."

वेन्डा लौटी. धीरे-धीरे आकर आहिस्ता से जेनी की खाट के वहाँ छोर पर बैठ गई जहाँ लेंप की छाया पड़ रही थी. वक्त होते हैं. जब व्यक्ति के चारों ओर ऐसी अभेद्य घनी मूर्त वेदना का वलय छा जाता है कि उसे भेद कर प्रश्न करने का साहस किसी को नहीं होता. आदमी को फाँसी की सजा सुनाई जाती है तब; लम्बी सजा का कैदी अपनी सख्त मशक्कत से हाँफ कर बैठता है, तब; अपनी मर्म की पीड़ा को वेश्या अपनी सूखी आखों के आगे लेकर बैठती है, तब उन को निगल कर बैठे हुए, उनके चारों ओर जमे व्यथा मण्डल को जिज्ञासा

द्वारा भी भेद कर प्रवेश करने की प्रवृति सहसा नहीं होती. वैसे ही अब वेन्डा से कुछ पूछने का किसी को साहस न हुआ. वेन्डा ने पच्चीस पये निकाल कर मेज पर पटके और कहा, "लो, मुझे शराब लादो और एक तरबूज !" कह कर मेज पर बाहें फैलाईं, और उनमे अपना सिर ले कर वह चुप-चाप सुबकने लगी. उसके बाद फिर किसी को हिम्मत न हुई कि कुछ पूछे. बस जेनी क्रोध से पीली पड़ गई. उसने अपने निचले ओठ को ऐसे जोर से काटा कि वहाँ सफेद दाग रह गए. बोली, "हां, अब में, तिमिरा की बात सुनूंगी, मानूंगी. सुनो तिमिरा, मैं तुमसे क्षमा मांगती हूँ. मैं उस चोर 'सेंका' के प्रेम में तुम्हारे पागल होने पर अक्सर हँसा करती थी. लेकिन अब मैं कहती हूँ की इस धरती पर आदमियों में अगर भले हैं तो वे, जो चोर हैं हत्यारे हैं. अगर वह किसी से प्रेम करते हैं, तो खुल कर प्रेम करते हैं. वे उस पर लजाते नहीं, छिपाते नहीं. और होता है तो अपने प्रेम के लिए आपदाएँ भी उठाते हैं, पाप भी करते हैं, चोरी भी करते हैं. प्रेम के लिए उनके लिए सब संभव है, उसके आगे सब तुच्छ है. लेकिन ······बाकी सब कमीने झूठे, टुच्चे, कायर, बदकार जानवर होते हैं. अब इस जानवर के तिहरा परिवार है. एक बीबी और पाँच बच्चे. दूसरे, दो बच्चे उसके साथ जो विदेश में गवर्नेस कहाती है. और, तीसरा, पहली शादी से एक लड़की है, जो सब से बड़ी है पर जिसकी गोद में बच्चा है। वह कन्या है फिर माँ है. कैसे माँ है ? इस बात को शहर के सब लोग जानते हैं, बस बच्चे नहीं जानते और शायद है कि उनको भी कुछ गुमान हो और इस बारे में वे आपस में गुप-चुप, कुछ चर्चा भी करते हों. अब यही आदमी, कल्पना तो कीजिये, दुनियां में प्रतिष्ठित है, भला है······मेरी लड़कियों, मेरी बच्चियों, मालूम होता है कभी आपस में हमें अब की तरह अपने मन की बातें कहने का मौका नहीं हुआ. फिर भी मैं तुमसे कहती हूं कि मैं दस वर्ष छः महीने की थी, कि मेरी अपनी पेट की माँ ने एक डाक्टर तार्विकिन के हाथ मुझे बेच दिया. मैंने उसके हाथ चूमे, रोई, मिन्नतें कीं कि मुझे रहने दो.

चिल्लाई कि मैं अभी बहुत छोटी हूँ, मैं कुछ नहीं जानती. लेकिन वह जवाब देता 'सो कुछ नहीं, सो कुछ नहीं. तुम बड़ी हो जाओगी'...... सो, क्या बताऊँ, कैसा मुझे दर्द हुआ, मिचलाहट हुई, मेरी तबियत जैसे फोड़े की तरह पक गई · · · और उसने पीछे से अपनी इस कारगुजारी का ढोल भी कम नहीं पीटा. मेरा आत्मा में से निराश यातना की चीख उठती. पर किसके लिये ?"

"बात शुरू हो गई है, तो हम सभी अपनी क्यों न कह डालें. कब के लिए बचाएँ" कुछ रुक कर संयत भाव से जोहरा ने कहा और अन अपेक्षित, उदास, उसने मानो मुस्कराने की चेष्टा की. "मैं, मैं स्कूल में थी. वहीं एक मास्टर ने मुझे बिगाड़ दिया. उसका नाम ईवान पेट्रोविश था. उसने मुझे एक रोज अपने घर बुलाया. क्रिसमसके दिन थे. उसकी बीवी बाजार करने गई हुई थी. पहले तो मेरी खिला-पिला कर खातिर की फिर अपनी मंशा जाहिरकी. बोला कि दो बातें हैं, या तो मैं ज्योंकी त्यों उसकी सब बातें मान लूँ. नहीं तो बिगड़े चाल चलनके लिए स्कूलसे मुझे निकाल दिया जायगा. तब हम अपने मास्टरों-से कितनी डरतीं थीं कि कहनेकी बात नहीं. अब वे यहाँ हमारे लिये डरावने नहीं रह गए हैं, यहाँ हम उनका जी जाहा जैसा उल्लू बना लेती हैं. पर तब हमारे लिये वही जार थे, वही परमात्मा थे."

"और मुझे कालिजके एक लड़केने पहले पहल बिगाड़ा. वह हमारे मालिकके लड़कों को पढ़ाने आता था और मैं वहां काम करती थी..."

बीचमें नूरी चिल्लाई, "और मैं..." लेकिन उसका मुंह एकदम खुलाका खुला ही रहा और भौचक्की-सी वह गुम हो रही. उसकी निगाह की सीधमें देखा तो जेनी भी हाथ मल उठी. देहलीजमें लुवी खड़ी थी. दुबली, आंखोंके चारों तरफ काले छल्लेसे छाए थे. वह ऐसी खड़ी थी मानो आंखें खुली तो हैं, पर वह अब भी खड़ी-ही-खड़ी नींदमें खोई है. वह सहारेको पकड़नेके लिए मानो रास्ता खोज रही थी.

जेनीने जोरसे चिल्लाकर कहा, "लुवी, ओ पगली, क्या बात है ? तुझे क्या हो गया है ?"

"क्या बात है ! कुछ भी बात नहीं है. उसने मुझे लिया और अब निकालकर बाहर कर दिया है."

किसीके मुंहसे शब्द न निकला. जेनीने हथेलियोंसे अपनी आंखें ढंक लीं. उसका सांस जोरसे आने जाने लगा. दीख पड़ता था कि उसके जबड़ेकी नसें खिंचकर तन गई हैं...

विनीत शिथिल असहाय भावसे लुबीने कहा, "जेनिश्का, मेरा सारा भरोसा बस तुममें है. सब तुम्हारा लिहाज करते हैं, तुम्हारी बात मानते हैं. तुम कहना, वह मुझे वापस ले लें."

जेनी बिस्तर पर सतर हो बैठी. अपनी सूखी प्रखर, जलती फिर भी मानो रोती हुई आंखें लुबीपर गाड़कर टूटे स्वरमें उसने पूछा.

"तुमने सुबहसे आज कुछ खाया है, लुबी ?"

"नहीं, न कल, न आज. कुछ भी नहीं."

वेण्डाने चुपकेसे पूछा, "सुनो जेनेश्का, अगर हम उसे ताकतके लिए कुछ शराब दें तो ? और वर्का इधर भागकर रसोईसे कुछ खानेको ले आए ? क्यों ?"

"हां हां, जो दीखे करो, ठीक तो है, जरूर जाओ. और देखो, लड़कियों, देखो वह बिल्कुल भीगी हुई है. कैसी पगली हो, देखती खड़ी हो ! पगलियों, झट उसके कपड़े उतारकर अलग फेंको. और ओ री मनका, या तुम तिमिरा उसके लिए इतने नए कपड़े लाकर रक्खो."

"अच्छा, अब" लुबीकी ओर मुखातिब होकर उसने कहा, "अब तू बता री पगली, तेरे साथ क्या हुआ, क्या बीता ?"

६

उस रोज जब सबेरे-ही-सबेरे लखनपाल उस अप्रत्याशित रूपमें, शायद स्वयं बिना भलीभांति जाने, अन्ना मरकानीके उस काम-कलुषित स्थानसे लुबीको ले चला था, गर्मीका सुहावना दिन था. वृक्षोंपर पत्ते

लहलहा रहे थे और वायुके संतरणमें, पत्रोंके कम्पनमें, घासकी कोंपलोंमें व्याप्त सुरभि में, आसपास हर जगह मानों कहींसे उतरकर एक अलस तंद्रिल-भाव फैल गया था. धरतीके गर्भसे एक उष्मा निकलकर मानो वर्षाकी नीरव प्रतीक्षामें बाहें फैलाकर आकाशकी ओर उठ रही थी. उसने अचरजसे वृक्षोंको देखा. कैसे स्वच्छ, भोले, शान्त. जैसे परमात्माने एक ही रातमें, आदमियोंके अनदेखे, यहां उन्हें उगाकर अडिग खड़ाकर दिया है. और वे भी मानो स्वयं चारो ओरके चुपचाप सोते जलके नीले तलको, और आसमानकी नीली गोदको, अचरजसे संभ्रमसे देख रहे थे. इस सद्य: स्नात बड़े आसमानी चन्दोवेको, जिसमें मानो अभी जागरण की लहरें अंगड़ाई लेती उठ रही थीं, जो आधा जगा और आधा सोया मानो उनीदी, गुलाबी, तृप्त, अलस मुस्कराहटके साथ दैदीप्य सूरजका अभिवादन कर रहा था.

उस विद्यार्थीके हृदयमें सहसा उस असीमके प्रति तन्मयता भर आई. उसका जी अपनेको लांघकर विशद व्यापक हो गया. वह आनन्दसे कांपा. कुछ तो इस सुदर्शन प्रकृतिकी छविके स्वर्गीय सौंदर्यके स्पर्श मात्रसे, कुछ मात्र जीवनके उल्लासके कारण, कुछ इस कारण कि वहां उस धुएं-भरे, घुटे, घने वातावरणमेंसे निकलकर वह अब यहां प्यारी स्वच्छ हवामें अपनेको पा रहा था. उसका मन ऐसी विमल अवस्थामें था, पर सबसे अधिक अपने कामकी गरिमा और उत्सर्ग-सौंदर्यके बोधके कारण ही उसका अन्तर इस भांति स्फुर्ति और आल्हादसे भरा था.

हां, उसने यह पुरुषोचित्त कर्म किया है. सच्चे, उत्कृष्ट पुरुषकी नाई अपने कर्तव्यका पालन उसने किया है. हां, जो किया, अब भी उसके लिए उसे पछतावा नहीं है. वे (वे कहकर लखनपाल किसे सम्बोधित कर रहा है, यह वह खुद न जानता था) चाहे जिन शब्दोंमें उन स्त्रियोंको याद करें; व्यभिचारिणी, रण्डी, या जो अकथनीय कहकर उन्हें कलंकित करें; मेजपर चाय और हाथमें बिस्कुट लिए भली, शिष्ट, पवित्र कुलीन मन्य कन्याओंके सामने उन विचारियोंके नामपर जो गन्द उनसे फेंकते बने फेंके, उनके लिए सब ठीक है. लेकिन उनमेंसे किसी एकने भी उस

.रकसे किसी अभागिन नारीको निकालनेकी चेष्टा की है? और अब—हाँ, मैं जानता हूं, अब ऐसे लोगोंकी कमी नहीं जो इसी सोनिश्काके पास आएंगे, तरह-तरहके आदर्शके उपदेश देंगे; उसके भ्रष्ट जीवनकी लांछनाओंका वर्णन करेंगे; उसकी आत्मामें जैसे अपनी उंगली कुंचोएंगे, यहां तक कि वह विचारी रो पड़े; तब फिर खुद भी आँसू बहाने लगेंगे, उसे सान्त्वना देंगे, पुचकारेंगे, सिरपर थपकेंगे, और उस सबके बाद करुणा करुणामें पहले गालोंपर और, और फिर ओठोंपर चुम्बन लें उठेंगे. उसके बाद जो होगा सब जानते हैं. छि:...! लेकिन लखनपाल ऐसा नहीं है. जो मुंहपर है वही उसके कर्मोंमें होगा. वह दोगला नहीं है.

उसकी कमरमें बांह डालकर उसने लुवीको लिया. मानों सदय, कहो सस्नेह, आखोंसे उसे देखा. उस क्षण वह अपनेको बता रहा था कि वह उसे पिता या भाईकी आखोंसे ही देख रहा है न.

नींद बुरी तरह लुवीकी आंखोंमें समाई थी. उसकी पलकें बंद हो-हो रहती थी, लेकिन वह यत्न पूर्वक आखें फाड़-फाड़कर खोल लेती थी कि नींद न आए. उसके ओठों पर वही बांकी शिशुसम अबोध भोली थकीसी मुस्कराहट खेल रही थी. वही जो लखन पालने वहां चकलेके कमरेमें देखी थी, और उसके मुहके एक कोनेसे लारकी एक गाढी धारा बहनेको होरही थी.

"लुवी, ओ मेरी प्यारी भोली, लुवी तुमने बहुत दुख झेला है. देखो, चारों ओर कैसा सुन्दर है. ओ राम, मैंने पांच बरससे अब सूर्योदय देखा हैं. ताश पीटने, खाने, पीने और फिर झपटकर यूनीवर्सिटी चल देनेसे मुझे फुर्सत न मिलती थी. देखो मेरी प्यारी, उधर देखो. प्रभात खिल-रहा है. सूरज अब उदय हुआ. यह तुम्हारा प्रभात है, लुवी. यह तुम्हारे नए जीवनका प्रभात है, नए जन्मका आरंभ, नवीन उदय. तुम निर्भय होकर मेरी बाहुओंका अवलम्ब लो. आओ, में तुम्हें यहांसे निकालकर उस सच्चे जीवन पथपर लेचलूं, जहां जीवनके साथ साहस पूर्ण युद्ध करना तुम सीखोगी. वह युद्ध जो सत्योन्मुख जीवनकी टेक है. जहां खरा परि-श्रम तुम्हारी साधना होगी. चलो, जीवनके उस अभ्युदय पथपर में तुम्हें

ले चलूं."

लुबी ने आखों के किनारों से उसे देखा, सोचा उसके सिर में अभी उफान भरा है. पर, खैर, कुछ नहीं. आदमी नेक है और ईमानदार है. हाँ, जरा बातें बड़ी करता है तो क्या—और अर्द्ध गुप्त मुस्कराहटसे मुस्कातीसी और कुछ खीज से खिजी सी वह बोली थी, "हां, तुम मुझे बनाना चाहते हो. अच्छी बात है, कोई डर नहीं. मैं जानती हूँ तुम सबके सब एक से होते हो. पहले तो तुम लोग अपनी खुशीकी खातिर काम बने तब-तक खुशामद करते हो, फिर—फिर चाहे कुछ होता फिरे तुम्हें क्या परवा !"

"मैं ? ओह मैं, और ऐसा करूँ !" लखनपालने ज़ोर से छाती पर मुक्का मारकर कहा, "तुमने मुझे जाना नहीं. मैं इतना धूर्त नहीं कि तुमसी अरक्षिता को लेकर धोखा दूँ. नहीं, मैं अपनी तमाम शक्ति, तमाम आत्मा, तुम्हें शिक्षा देने, तुम्हारे मस्तिष्क को विकसित करने, दृष्टिकोण को विस्तृत करने और तुम्हारे टूटे त्रस्त दिल पर से उन सब घावों को धो डालने में खर्च कर दूँगा जिन्हें उस अनिष्ट जीवनने तुम्हारे अन्तर को दारुण आघात देकर पहुँचाएँ हैं. मैं तुम्हारे लिए पिता भी रहूँगा और भाई भी. पग-पग पर मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा और अगर तुम किसीको कभी उस सच्चे पवित्र भावसे प्रेम करोगी तब मैं उस दिन को याद कर धन्य होऊंगा कि जब यहां इसके गड्ढेसे निकाल कर मैं तुम्हें ले आया था" .

इस जाज्वल्य वक्तृता पर बुड्ढा गाड़ीवाला चुपचाप साभिप्राय हँसी हँसा. हंसी में उसकी कमर दुहरी हो गई. इन गाड़ीवाले बुड्ढोंके कानों-में दुनियाँकी बहुतेरी बातें रहतीं हैं. अपनी जगह बैठे-बैठे ये चुपचाप सब पीते रहते हैं. जो भीतर होता रहता है सब इनके कानोंमें पड़ता है. भीतर वालोंको इसका गुमान भी नहीं होता. शहरमें भीतर-भीतर जो कुछ होता है पौने सोलह आना ये जानते हैं. और क्या मालूम इस बुड्ढे के कानोंमें कब कब इससे भी नशीली और इससे भी आवेग भरी वक्तृताएँ पड़ी होंगी.

लुबीको लगा कि किसी वजहसे लखनपाल उससे नाराज हो गया है, या अभीसे ही किसी कल्पित प्रेमीकी ओरसे जैसे उसमें ईर्ष्या पैदा होने लगी है. वह खासे कोलाहल और पर्याप्त उत्तेजनाके साथ अपनेको खर्च कर रहा है. वह बिल्कुल जाग गई, जिज्ञासासे खुला मुंह और अनसमझ किन्तु नीकी और विनीत आखें लेकर लखनपाल की ओर मुड़ी, अपनी कमर पर लिपटे उसके हाथको अपनी उंगलियों से हलके-हलके छुआ, बोली, "गुस्सा मत होओ, मेरे वीर. मैं तुम्हें छोड़ कर नहीं जाउंगी. मैं कभी किसी और को नहीं चाहूँगी. मैं वचन देती हूँ. परमात्मा मेरा गवाह है. देख लेना, मेरा वचन है, मैं निभाऊंगी. मत समझो, मैं यह समझती हूँ कि तुम मेरी रक्षा करना चाहते हो. क्या तुम समझते हो कि मैं नहीं समझती. देखो, तुम कैसे अच्छे बढ़िया खूबसूरत जवान हो. हाँ हाँ, तुम बुड्ढे होते या ....".

"ओह, तुम बिल्कुल ठीक नहीं समझतीं" लखनपालने ज़ोर से कहा और फिर उसी उत्तेजित स्वर में स्त्रियोंके समानाधिकार, श्रम की पवित्रता, मानवीय न्यायकी अपूर्णता, स्वतंत्रता, प्रचलित कुरीतियों, मूढ़ताओं और मान्यताओंके साथ युद्धकी अनि-वार्यता... आदि आदिके सम्बन्ध में वक्तृता देने लगा.

उसके तमाम शब्दोंमें से लुबीने ठीक-ठीक एक भी न समझा. सुनकर उसे यही अनुभव हुआ कि वह अपराधिनी है, कहीं, न कहीं वह दोषी है. इस अनुभूतिसे अपनेमें ही वह ग्लानिसे सकुचती गई, खिन्न हो रही, सिर झुका लिया और चुप हो बैठी. जरा और, और वह शायद गलीके बीचमें ही रो पड़ती. लेकिन सौभाग्यसे गाड़ी अब तक लखनपालके डेरे तक आ गई थी. वहां उस कालेजके विद्यार्थीने गाड़ी वाले से कहा, "अच्छा, यहां घर आ गया है, बस ठहराओ".

और जब वह गाड़ी वालेको पैसे दे चुका तब, कुछ-कुछ अभिनयके से भाव में, अपने दोनों हाथोंको सामने फेंककर भाव और आवेग भरे स्वर में गा कर उसने कहा :

आओ इस मेरे घर में निस्संकोच निश्शंक [ओ मेरी प्यारी].

आओ, इसकी रानी बन कर प्रवेश करो.

और तब उस गाड़ी वालेके पके और लकीरों भरे चेहरे पर एक विषम, निरर्थक किन्तु सार्थक, एक गहरी मुस्कराहट फैल गई.

१०

जिस कमरेमें लखन पाल रहता था वह साढ़े पाँचवी मंजिलपर था. साढ़े इसलिए कि पांच या छः या सात मंजिलवाले मकानोंके ऊपर फिर टीनकी चद्दरें डालकर कुछ और भी बरसातियांसी छा दी जाती थीं. वो ज्यादातर कवाड़ कूड़के काममें आती थी. कभी वहां कोई रह भी लेता था. सर्दियोंमें वहां बेहद सर्दी रहती थी और गर्मियोंमें बेहद गर्मी. लुवी ज्यों त्यों ऊपर चढ़ी. उसे लगता था कि अब, नहीं तो अब, वह गिरी, गिरी ! दो सीड़ी और, और वह ऐसी नींदमें गिर पड़ेगी कि पातालके तलमें ही गिर गई हो. फिर क्या वह उठेगी ? लेकिन लखनपाल बराबर कहता जाता था, "मेरी प्यारी, मैं देखता हूं तुम थकी हो. पर कुछ बात नहीं, प्यारी, यह लो मेरा सहारा लेलो. हम बराबर ऊपर जारहे हैं. ऊपर, ऊपर, उससे भी ऊपर. देखो, मनुष्यकी उच्चाकांक्षाओं का ही क्या यह प्रतीक नहीं है ? मेरी बहन, मेरी सखा, मेरी बाहोंका सहारा थामे रहो."

बेचारी लुवीके लिए यह और भी मुश्किल हो गया. वैसेही उस अकेलीके लिए चढ़ना भारी था. अब, सहारा लेनेके बहाने यह तो लखन पालका बोझ भी उसपर पड़ने लगा. और लखन पाल अब स्वयं भारी हो रहा था. उसके वजनकी भी खैर ऐसी कोई बात न थी, पर उसकी लफ्फ़ाजीसे धीरे-धीरे लुवीके जीमें खीज उठरही थी. कोई डाढकें दर्दसे पासमें बराबर कराह रहा हो; या बच्चा निरंतर चिचिया रहाहो; या पासमें कोई बेसुरा गा ही रहाहो, रुकता न हो; या बाहर टप-टप देरसे

पानी ही टपक रहा हो, तब जैसे मनमें एक तरहकी असह्य ऊबका भाव हो आता है, वही अब लुवीमें हो आया था.

आखिरकार वे लखन पालके कमरे पर पहुंचे. दर्वाजेमें कोई ताला न था. और न वैसे कभी वह दरवाजा कुंजी तालेसे बन्द ही किया गया था. लखन पालने धक्का देकर दरवाजा खोला. वे अंदर घुसे. कमरा अन्धेरा था, क्योंकि खिड़कियोंके पर्दे गिरे थे. कमरेमें चूहोंकी तेलकी कलकी बची दालकी भाजीकी झूठनकी, पुराने लत्तोंकी बासी तम्बाकूकी बास आरही थी. इस मटमैले अंधियारेमें कोई सो रहा था जो दिखाई नहीं देता था. वह बंधे बिरामसे ठहरा-ठहरकर जोरसे खर्राटे ले रहा था.

लखन पालने पर्दे उठाए. एक मामूली निर्धन विद्यार्थीके कमरेकी तरह वह कमरा था. एक खटियापर कुछ बिछावन और एक कम्बल ढेर हो रहा था. एक लम्बी मेज थी जिस पर विना बत्तीके बत्तीदान रक्खा था. किताबें कुछ मेजपर, कुछ फर्शपर बिखरी थीं. जहां तहां सिगरेटके छोर बिछे थे और खटियाके सामने दीवारसे लगा एक पुराना तख्त पड़ा था. उसीपर सोता और खुर्राटे भरता मुंह फाड़े चित्त एक युवक लेटा था. काली मूंछें थीं और काले लम्बे घने, घुंघराले सिरके बाल. कमीजके कालरके बटन खुले थे जिसमेंसे उसकी छातीके उलझे बाल दीख रहे थे जो कम घने और कम मोटे न थे.

"नेजरस, ओ नेजरसके बच्चे, उठ" लखन पालने जोरसे कहा और सोते व्यक्तिके कूलेमें कोंचा, "ओ प्रिन्सके बच्चे !"

"भ-प-प—"

"अरे उठ, भले आदमी. गाबदू, गधे, उठता है कि नहीं ? ओ भोन्दू, किन रोश्का."

लेकिन नितान्त अप्रत्याशित रुपसे यहां लुवीने लखन पालके बीचमें पड़कर और उसकी बांह पकड़कर डरते-डरते कहा "प्यारे, उसे सताते क्यों हो ? शायद उसे नींद लगी हो, वह थका हो. उसे जरा सो लेने दो. और मैं अपने वापस घर चली जाती हूं. मुझे बस गाड़ीके लिए कुछ दे दो और कल तुम फिर मेरे पास आजाना. है न, क्यों प्यारे ?"

लखनपाल हक्का-बक्का हतबुद्धि-सा हो गया. इस चुप निंदासी-सी लड़कीका यह बीचमें पड़ना उसे ऐसा अनहोना, असंगत, अनधिकृत-सा जान पड़ा. सोते आदमीकी जगानेमें जो एक प्रकारकी हृदयकी परुषता चाहिए, इस स्त्रीका हृदय उससे ही बचना चाहता है, लखनपाल सचमुच यह नहीं समझ सका. इस स्त्रीका हृदय इस अपरिचितकी नींदके प्रति सदय था, या यहभी हो कि दूसरेकी नींदके प्रति यह आदर उसके लिए व्यवसाय प्राप्त हो. पर लखनपालको लुवीकी इस आपत्ति पर अतर्क्य अचरज ही हुआ. जाने क्यों उसे यह बुरा लगा. उसे गुस्सा हो आया. सोते आदमी-का एक हाथ धरतीकी ओर लटका था. एक बुझी सिगरेटका सिरा उंग-लियोंमें थमा था. इसने उस हाथको झकझोर कर जोरसे झिड़क कर कहा, "सुनो नेजरस, मैं तुमसे सख्तीसे कहता हूं. सुनो, में अकेला नहीं हूं, मेरे साथ एक औरत है. सुना, सूअर ?"

जैसे कोई जादू हो गया! जैसे उसी क्षण उसकी पीठ के नीचेसे खाट में से कोई स्प्रिंग जोरसे खुल पड़ा हो. वह लेटा हुआ आदमी सहसा उछल पड़ा. उठकर तख्त पर बैठ गया, जल्दी जल्दी हथेलियों से अपनी आंखें मलीं, माथा मला, मुँह मला, सामने स्त्री देखी और मूढ़ कर्तव्य हो रहा, और अपनी कमीज के बटन बन्द करते हुए जल्दी जल्दी बोला, "क्या तुम हो ? लखनपाल ! और यहाँ मैं तुम्हारा इन्तजार किये बैठा रहा. उसीमें मुझे नींद आ गई. जरा, इन मेरी अपरिचित महाशयासे कहो, एक मिनिटके लिए मुंह फेर लें."

उसने जल्दीसे रोज पहननेका कोट बाहोंमें चढ़ाया. दोनों हाथ फेर कर अपने लम्बे-लम्बे बाल ठीक किये. लुवी स्त्री सुलभ प्रशंसापेक्षाके साथ [स्त्रियां चाहे जितनी अवस्थाकी हो जाएं और जिस परिस्थितिमें हों यह बोध कि वह सुन्दर लग रही हैं न, उनसे कब छूटता है ?] एक ओर बढ़कर दीवार में लटके एक आइनेमें देखकर अपना केशविन्यास ठीक करने लग गई.

नेजरसने आंखके जरा इशारेसे लखनपालको यह दिखाया और निगाह-निगाह में मानी कुछ प्रश्न पूछना चाहा.

"परवा न करो,कोई मुजायका नहीं" लखनपालने जोरसे कहा "लेकिन अब चलो, जरा बाहर चलो. मैं अभी तुम्हें सब कुछ बता देता हूं... लवी, माफ करना, बस एक मिनटके लिए माफी दो. अभी लौटकर आता हूं, तुम्हारा सब ठीक-ठाक कर दूंगा. और फिर तुम रहोगी और यह कमरा, और मैं गायब."

लवीने कहा, "क्यों क्यों, तकलीफ न करो. मैं बिल्कुल ठीक हूं. यह तख्त मेरे लिए बहुत है, तुम पलंग पर अपनी जगह जमाओ."

"नहीं नहीं, मेरी बीबो यह बहुत अच्छा न लगेगा. मेरा यहां एक साथी है. मैं सोने वहीं चला जाऊंगा. खैर, मिनट भरमें मैं लौटता हूं."

दोनों विद्यार्थी बरामदे में बाहर निकल आए. आंखें फाड़कर नेजरसने पूछा, "यह क्या सपना है? इस सबका क्या मतलब है? पेटीकोटमें यह परी कहांसे उतर आई?"

लखनपालने अर्थपूर्णत भावसे अपना सिर हिलाया. मुंह उसका जरा रूखा हो आया था. रातके सन्नाटेको तोड़कर हल्की धूप और नित्यनैमित्तिक कर्मोंसे भरा यह दिन खुलकर चढ़ रहा था, वैसे ही वैसे लखनपालका उत्साहभी मंद होता जाता था. उसे लग रहा था कि जो किया क्या वह बिल्कुल ठीक ही था, अनिवार्य ही था? जैसे उसमें अपने सत्साहस और उत्सर्ग कर्मकी निरर्थकताका बोध उठने लगा था. उसने व्यर्थ अपनेको लोगोंकी निठल्ली और उत्सुक निगाहोंका पदार्थ बना डाला है. उसीके साथ अपने और उस स्त्रीके जिसको वही इस भांति यहां ले आया था, दोनोंके प्रति उसमें कुछ अनजानी-सी खिजलाहटका, बेचैनीका भाव भी उसमें उठ रहा था. उसे अभीसे लग रहा था कि दोनोंका साथ-साथ रहना क्या बेडौल-सी बात होगी. चिन्ताएं बढ़ेंगी, खर्च बढ़ेगा, और बदमजगियां भी बढ़ेंगी. लोग भेदकी हंसीसे हंसेंगे और जाने क्या-क्या सवाल करेंगे. वह खयाल कर रहा था कि किस भांति उसके इम्तहानमें इससे बाधा उपस्थित होगी. लेकिन नेजरससे जब एक बार एक बात हो ही ली तब फिर वह उस पर कमजोर बन रहा है, इस पर उसे खेद भी हुआ. और बातोंका सिलसिला जब बढ़ा तब अन्तमें वह अपने कृत्यके सत्साहसकी

डींगें ही मारता पाया गया.

"देखते हो न प्रिन्स ?" उसने कहा. हठात उसके हाथ साथीके कोटके बटनको मरोड़ रहे थे और साथीकी आखोंकी ओर उसकी आंखें नहीं उठतीं थीं, नीचे फर्श पर गड़ी थीं. कहा "तुमने गलती की. यह हमारी साथिन नहीं है. लेकिन......यही कि मैं अभी कुछ दोस्तोंके साथ जरा..... यानी, यही एक मिनटके लिये . यामकास अन्गा मरकानी के यहाँ चला गया था."

"साथ और कौन-कौन थे ?" नेजरस ने दिलचस्पीके साथ पूछा.

"अब साथ कोई भी सही. सब एक बात है. वह तनवर था; रामसरन; एक नए प्रोफेसर हैं यारश्कर, वह; सुवेश वर्णवाल, और, और......औरोंके नाम याद नहीं. हम शाम तक किश्तियोंकी सैर करते रहे, फिर तमाशेमें चले गए. जरा शराब उड़ी तब उसके बाद जानवरोंकी तरह यामाकी तरफ चल पड़े. तुम जानते हो, मैं परहेजगार आदमी हूं. सो मैं वहाँ स्पंजकी तरह बैठा बैठा बस प्याले पर प्याले सोखता रहा. साथ जान पहचान का एक पत्रकार भी वहाँ था. सो सबेरा होते-होते न जाने कैसे मेरी बुद्धि जैसे छिन्न-भिन्न हो गई सुन्न हो गई, मैं इन अभागी नारियोंको देखते-देखते दुख, अनुताप और करूणा से ऐसा भर गया. मैंने सोचा, हमारी बहनें हमारे कैसे आदर और प्रेम और रक्षा की पात्र हैं, और हमारी माताऐं किस प्रकार हमसे सादर भक्ति पातीं हैं. कोई जरा उन्हें कुछ कहे, जरा छेड़े, जरा आँख दिखाए, हम उसे कच्चा खानेको तैयार हो जाते हैं. क्यों, यह सच नहीं है ?"

"हाँ-आँ" दूसरे ने कुछ कहने के लिए कहा. जैसे उसकी आखें आधी प्रश्न करतीं और आधी स्वयं उत्तर दे रहीं थीं . उनमें सन्देह भरा था .

"तब मैंने सोचा, क्यों ? यह क्या अनर्थ है ! कोई शोहदा, लफंगा, कब्र में पैर लटकाए कोई बुड्ढा तबियत के मुताबिक, टन्न से पैसा पटक कर, चाहे तो रात भर के लिये चाहे मिनट भर के लिये, सर्वथा

निश्शंक और निर्भय भावसे इनमें से एक को या सब को ले डाल सकता है......फिर दूसरी बार, तीसरी, चौथी, लाखवीं बार उस स्त्री की कायाको लेकर उस वस्तु से खिलवाड़ कर सकता है जो मनुष्यके भीतर दैवी है, अमूल्य है. सुनते हो ? उसी को वह भ्रष्ट करता है, तिल-तिल नष्ट करता है, पैरोंसे कुचलता है. और मुलाकात की रकम चुका कर पतलूनकी जेबोंमें हाथ डाल तृप्त, छका शान्त, मुंहसे सीटी बजाता मजेमें चला आता है. सबसे भयावह बात तो यह है कि यह उनके साथ निरी टेव हो गई है, मात्र कृत्य. स्त्रीके लिये भी केवल व्यापार, पुरुषके लिए भी वही मात्र व्यवसाय. भावना दोनों ओर बुझ गई हैं, आत्मा मर गई हैं ! ऐसा ही है, क्यों है न ? फिरभी उनमेंसे प्रत्येकके भीतर आदरणीया बहन है, पूजनीया मां, है उनमेंकी उसी बहन और माँ को हम नष्ट कर देते हैं. ऐंह, क्या यह सच नहीं ?"

"हाँ-आँ..." नेजेरसके ओठों ने कुछ कहा.

"सो मैंने सोचा, शब्दोंसे क्या फायदा है ? चीख चिल्लाहटसे क्या बनना है? क्या होना है लेक्चरोंसे जो लच्छेदार, सुन्दर, रंगीन, जगह बे जगह झाड़े जाते हैं ? और भाड़में जाए प्रस्ताव और रेग्युलेशन और नियम (यहां अनायास उसे पत्रकारवाला शब्द याद आगया) और मेग्ड-लीन आश्रम, और यह धार्मिक पुस्तकोंका निशुल्क वितरण. छिः, इन सबसे क्या बनता है ? नहीं, मैं खड़ा होऊंगा. वीर, सत्यव्रती पुरुषकी भांति हाथमें साहस लूंगा. उस कीचड़मेंसे एक नारी जीवको तो खींचकर निकाल ही लूंगा. निकालकर फिर सत्यकी स्वच्छ और पक्की धरतीपर उसे जगाउंगा. उसे शान्ति दूंगा, प्रोत्साहन दूंगा. मुझसे आदरका व्यवहार उसे प्राप्त होगा और तब वह अपने पैरोंपर खड़ी अपना निजकी जीवन जिऐगी."

नेजरस इतना ही कह सका, "हूं...ऊ..." लखन पालने कहा, "ओ प्रिन्स तुम्हारे सिरमें जाने क्या रहता है. समझो, मैं एक स्त्रीकी बात नहीं, एक मानव प्राणीकी बात कर रहा हूं. नारी देहकी नहीं, मानव आत्माकी."

"हां, ठीक है, टीक है. आत्माकी, जरुर आत्माकी. आगे फिर..."

"और फिर—? फिर क्या ? सोचा, और किया. सत्प्रेरणा प्राप्त हुई और मैं तत्पर कटिबद्ध हुआ. मैं उसे अन्ना मरकानीके यहांसे निकाल लाया. अब, अभी तो वह मेरे साथ ही है. आगे—आगे जो परमात्माकी दया हुई तो पहले मैं उसे पढ़ना सिखाउंगा, लिखना सिखाउंगा. फिर उसके लिए छोटा-सा उपहार ग्रह-सा खोल दूंगा, या छोटा मोटा स्टोर समझो मैं समझता हूं कि हमारे भाई लोग इसमें मेरी सहायतासे विमुख न होंगे. प्रिन्स, मेरे भाई, हृदय हृदयका भूखा होता है. एकको एककी सहानुभूति चाहिए. मानव हृदयको और हृदयोंका स्नेह चाहिए, और सहानुभूति. दो सालभें में समाजके लिए एक वह नवीव सदस्य प्रस्तुत कर दूँगा जो नेक होगा, उद्योगी, योग्य, सदाशय. उसके विकासके लिऐ सब ओर मार्ग खुले होंगे. क्योंकि उसने अब तक केवल अपनी देह दी है, आत्मा उसकी पवित्र है और निर्मल."

प्रिन्सने जैसे अपनी जीभ चाटी और उस जीभसे ही आवाजकी, "त्सत्स... त्स्स्स...."

"इसका क्या मतलब ? यह क्या गधापन कर रहे हो ?"

"और तुम उसके लिऐ एक सीनेकी मशीन लेकर दोगे न ?"

"सीनेकी मशीन ? क्यों, वही क्यों ? मैं नहीं समझा"

"भाई साहब, उपन्यासोंमें तो सीनेकी मशीनही दी जाती है. जैसेही नायक एक बेचारी दीना हीना, पतिताके उद्धारका बीड़ा उठाता है तो पहले सीनेकी मशीन उसे लेकर देता है."

"बकवास न करो," लखन पालने एक हाथसे उसे धकेलते हुए कहा, "पागल !"

ज्योजियन सहसा गंभीर हो गया, उसकी काली आखें चमक आईं, बोला, "नहीं साहब, यह बकबास नहीं है. यहां दोमें एक बात है. और दोनोंका परिणाम एक है. या तो तुम दोनों साथ इकट्ठे रहोगे और पांच महीने हुए नहीं कि अपने कमरेसे उसे गलीमें खदेड़ बाहर करोगे. और वह वापिस चकलेमें चली जायगी, या तो गली-गली फिरेगी. हां, यही होगा. दूसरी बात यह कि तुम इकट्ठे न रहोगे, पर उस पर शारी-

रिक और मानसिक परिश्रमका बेहद बोझ लाद दोगे और उसके अन्धेरे अजान दिमागको विकसित करनेका यत्न करोगे, और वह ऐसे उकताकर अपनेसे तुम्हें छोड़कर भाग जायगी. और वही, या तो वापिस चकलेमें, नहीं तो गलीमें आवारा फिरती दीखेगी. यह भी पक्की बात समझो. हां, एक तीसरी बात यह है: आर्थरकी किताबके नाइट लांसलटकी भाँति तुम जब भाई बनकर उसके सम्बन्धमें कर्मशील और आदर्श सेवी रहोगे तब वह इधर छिपे-छिपे किसीके प्रेमके घूंट पिया करेगी. मेरे भैया, मेरी मानो, कि स्त्री, जब वह स्त्री है, तो सदाके लिए स्त्री है. और वह दूसरे महाशय उसके यौवनसे भरपेट खा खेलकर उसे खदेड़कर चकलेमें या उसी आवारगीमें पहुंचा देंगे."

लखनपालने एक भरी गहरी साँस ली. कहीं गहरे में, मस्तिष्क में नहीं चेतनाके कहीं गुप्त अन्धेरे कोने में, लखनपाल को यह बोध घर करता जान पड़ता था कि नेजरसने जो कहा अयथार्थ नहीं है. पर उसने झट अपनेको थाम भी लिया, सिर हिलाया, और प्रिन्सकी तरफ अपना हाथ बढ़ा कर कहा, "मैं कहता हूँ, शर्त बद कर मैं कहता हूँ, आधे सालमें तुम अपने लफ्ज वापस लोगे, माफी मांगोगे और शिकस्तके तौर पर, अजी, तुम ही इसे एक बढ़िया दावत दे रहे होंगे."

"अच्छा, रही पक्की". प्रिन्सने पूरे जोर से अपनी हथेली से लखनपालका बड़ा हाथ झकझोर कर कहा, "ऐन खुशीके साथ, यह शर्त रही. लेकिन अगर मेरी बात सही रही तो दावत तुम्हारे सिर रहेगी."

"जरूर-जरूर. अच्छा प्रिन्स, अब चलें. विदा. अच्छा, तुम रात कहाँ रहोगे ?"

"यहीं, पास ही सोमदेव के यहाँ, और क्या. लेकिन क्यों ? क्या तुम सचमुच उस प्राचीन हीरो की तरह अपने और सुन्दरी के बीच में दुधारी तलवार रख कर सोने की सोचते हो? क्यों ?"

"क्या बेहूदा बकते हो ! मैं खुद सोमदेवके यहाँ रात गुजारनेकी सोचता था. पर अब जरा बाहर इधर-उधर गलियोंकी हवा खाऊँगा

और फिर जिसके यहाँ होगा पड़ने पहुँच जाऊँगा. जैद रविश था सीता-रामके यहाँ, या कहीं भी. अच्छा विदा."

वह कुछ कदम चला ही था कि तेजरस ने कहा, "ठहरो-ठहरो, एक बात तो कहना भूल ही गया था. अरे, परतसेन की कुछ बात सुनी ? वह आ गया लपेटे में !"

"हाँ ! लेकिन परतसेन" लखनपालने अचरजसे कहा, और तभी खुशी से एक लम्बी बड़ी जमुहाई ली.

"हाँ-हाँ. पर कोई ऐसी डरकी बात नहीं है. यही जरा कुछ ऐसी-वैसी चीजें उसके यहाँसे बरामद की गईं. यह—एक सालसे ज्यादाकी तो उसे सजा ज़रूर ठुकेगी".

"अहं, एक साल उसके लिये क्या है, कुछ नहीं. तैयार, मजबूत लड़का है, एक साल तो यों निकाल देगा" .

"तैयार तो है ही. अच्छा," प्रिन्स ने कहा, "आदाब".

"तसलीम, हीरो ए आजम !"

"तसलीम वे चपर गट्टू !"

११

लखनपाल अकेला रह गया. इस अन्धियारे बरामदे में मट्टी के तेलके दीये में से तेल के धुएँकी बास आ रही थी. वहाँ पुराने बुसे तम्बाकूकी भी गन्ध कम न थी. दिनकी रोशनी छतके पासके रोशन-दानोंके शीशोंमेंसे लड़ झगड़ कर थोड़ी-थोड़ी आ रही थी. लखन-पालकी विचित्र अवस्था थी. उसमें स्फूर्ति थी और निरुत्साह भी. उसमें तब क्षुद्रप्राणता भी थी और आदर्श प्राणता का आवेश भी था. किसीको दिनों तक न सोना मिले, तो ऐसी हालत अक्सर हो जाती है. कुछ ऐसा लगता था कि वह दैनिक व्यावहारिक जीवनकी परिधि के पार होकर कहीं और पहुँच गया है. और यह जीवन जैसे उसे कुछ

बहुत दूर, झिलमिला, अनजाना-सा दीखता है. लेकिन विचारों और भावनाओं में उसे एक विशेष प्रकार की शान्त स्पष्टता, एक अपूर्व विमलताका भी बोध उसे होता था. इस वायव्य, स्वच्छ स्वप्न की-सी अवस्था में एक नशा था, एक आमंत्रणीय मोह. वह अपने कमरे के पास दीवारका सहारा लिए खड़ा रहा. आस-पास, ऊपर, नीचे, उसे लगा बहुतसे लोग सो रहे हैं और जैसे वह उनकी नींदको देख रहा है, सुन रहा है, अनुभव कर रहा है. मुंह खुले है, निश्चित विरामसे गाढ़ा सांस आ जा रहा है, नींद में खोये, मग्न हैं. चेहरों पर एक विचित्र थकान, एक विचित्र आरामका भाव है, और वे सबेरे की शेष मीठी गाढ़ी नींद में बेहोश हैं. तभीं उसके सिरमें एक विचार कोंध कर पार हो गया. बचपनसे वह उसमें गड़ा था, फिर भी मानो अनंन्त दूरसे आया हो, सर्वथा अपरिचित, अनन्य, विभीषिका मय. मानों उस क्षण उसे प्रगट हुआ कि ये सोते पड़े लोग कैसे बेहूदा, कैसे मकोड़ेसे दीखते हैं, मुर्दोसे भी मुर्दे, शवसे भी ग्लानिकर, असहाय. तब उसे लुवीकी याद आई. उसका अन्तरतर सोया, दबा, रहस्यमय अहम्, मानो उसके कानमें जल्दी-जल्दी कहने लगा, चल कर देख लेना चाहिये कि लड़की आरामसे तो सोई है न. और हाँ, सबेरे की चायके बारे में भी तो उससे पूछना है. पर अपने आपमें जैसे उसने मान लिया कि नहीं, वह इस तरह की कोई भी बात नहीं सोच रहा है और बढ़ कर गली में चला गया.

वह चला ही चला. जो चीज़ उसकी निगाह में आती, वारीकी से, निठल्ली पर विशद जिज्ञासासे वह उसे देखता था. और जो दीखता उसका प्रत्येक अंग, दृश्यका प्रत्येक अंश ऐसा अति प्रधान ऐसा स्पष्ट उभरा सा उसे लगता, जैसे उन्हें उंगलियों से छू सकता हो . . . . एक देहाती स्त्री पास से गुजरी. उसके कन्धे पर एक बांस था जिसके दोनों तरफ दूध की बड़ी मटकियां लटकी थीं. वह नवयुवती न थी. कनपटी पर उसकी झुर्रियों का जाल-सा बना था, और दो गहरी लकीरें उसके नथनों से मुंह के किनारों तक खिचीं थीं. पर उसके गाल अभी लाख

थे. क्या अचरज, छूने में बहुत पके भी न हों. आखों में देहात सुलभ सादी प्रफुल्लता खेलती थी. चलते चलते, और कंधे पर रक्खी बंहगीके झोंके के साथ, उसके नितंब द्वय मानों ताल देकर दाएँ और बाएं हिलते थे. उनके इस लहरदार आन्दोलनमें एक प्रकारका आकर्षक, उद्दीपक, वैषयिक, मनोरम सौन्दर्य था.

'ओह औरत चलती हुई मालूम होती है. इसने जिन्दगी में खासा खाया. देखा जान पड़ता है, लखनपालने सोचा और तभी सहसा अप्रत्याशित रूपमें इस स्त्रीके प्रति जाने उसमें कैसी एक उत्कट चाह पैदा हो आई. इस सर्वथा अपरिचित, अधेड़, शायद जगह-जगह की जूठी असुन्दर नारी देहको वह एक दम ऐसा चाह उठा कि अभी पा लूँ. उसे लग रहा था कि जैसे एक बड़ासा बदनुमा सेब पेड़से गिरकर धरती पर पड़ा हो, बासी भी हो, कहीं से कुतरा खाया भी हो, यहां वहां दगीला भी हो......पर फिर भी उसमें काफी रसीला गूदा हो और निखरा रंग भी—वैसेही यह है. पर . . . .

आगे देखा, जैसी जनाजेके काममें आती है वैसी खाली गाड़ी पाससे सर्रसे आगी निकली चली गई. दो घोड़े आगे थे, दो पीछे. एक मशालची और कुदाली लिये कुछ खोदने वाले मजूर उसपर जमे बैठे थे. अपने यूनीफार्मके कपड़े नीचे डाले, ऊपर इकट्ठे डटे, अपनी फटी बेडोल आवाज में कुछ गीत रेंकते हुए चले जा रहे थे. सोचा, जरूर किसी मुर्देको दफनाने यों आगे जा रहे है, या दफना कर लौट रहे होंगे. अलमस्ता जीव हैं.

बांधपर आकर लखन पाल रुक गया और वहां पड़ी एक बेंचपर बैठ गया. देखा, बेंच हरी है और सामनेकी सड़कके दोनों ओर उम्ररसीदा दरख्तोंकी कतारें सीधी दूरतक चली जारही हैं. वहां दूर वे एक होकर तीरकी नोंक बनी, मानो अस्पष्ट अनंतके मर्ममें पहुंचना चाह रही हैं. हरे फल उनपर लगे हैं लखन पालको अनायास याद आया कि वसन्तके आगमनपर वह एकबार यहीं इसी जगह बैठा था. तब सन्ध्या, मन्थर अंधियारी लजीली सन्ध्या, एक श्रान्त शमित मन्दस्मितसे मुस्कराती बधूकी

भांति निद्रामें डूबीसी जारही थी. तब दरख्त हरे पत्ते ओढ़े थे और फूलोंसे छाए थे. उस समय उनकी नोकीली चोटियाँ सन्ध्याके अन्तिम प्रकाशसे श्वेत और अरुण होकर आकाशकी ओर मुंह उठाए खड़ी थीं. लगता था कि किसीने इन सब दरख्तोंके शीर्षपर क्रिस-मसकी मोम बत्तियां लगादीं हों. और तभी, सहसा आकस्मिक उद्योतकी भांति, उसके भीतर एक नवीन अनुभूतिका स्फुरण हो आया. (और ऐसे क्षण प्रत्येकके जीवनमें आते हैं) उसने जैसे अभी हाल जाना कि वृक्षोंमें इस समय फल लगे हैं और वे पकनेको हैं. पहले उन्हींकी जगह फूल थे. इसी भांति इससे पहले कितने न बसंत आए होंगे, बाद कितने न आएेंगे. फूल खिलेंगे, फल लगेंगे. लेकिन वही बसन्त जो बीत गया है, वही जो था, क्या इस दुनियांमें कोई भी, कुछ भी, उसे वापस ला सकेगा ? इस विचारके साथ निरूद्देश चली जाती हुई घनी वृक्षोंकी पांतकी ओर वह उदास निगाहसे देखता रह गया. सहसा उसे पता चला कि उसकी आखोंके आगे धुंध-सा आगया है और उसे कम दीखने लगा है.

वह उठ खड़ा हुआ और आगे बढ़ा. वह हर चीज अनिमेष और पैनी निगाहसे देखता था. मानो परमात्माकी इस सृष्टिको वह पहली बार देख रहा है. पत्थरका काम करने वालोंका एक दल सड़क परसे उसके पाससे निकला और वह सब अजीब रंग और विचित्र अतिरंजित रुपमें उसके अन्तस्तलपर खिच रहा. फोरमैन, जिसकी लाल डाढ़ी थी (एक तरफसे घनी) और नीली और कठिन आंखें; एक ओर पुष्ट युवक था, जिस-की बाई आखें किसी चोटसे सूज आई थीं और जिसके माथेसे गाल तककी हड्डी तक और नाकसे कनपटी तक काली नीली रेखाएें बनीं थीं; एक नवयुवक जिसके देहाती उत्सुक चेहरेपर मुंह सदा खुला रहता था और पीछे वह बुड्ढा...जो पिछड़ जानेके कारण अजीव हुलिया बनाए भागा आ रहा था; इनके कपड़े जो चूने मिट्टीसे मैले होरहे थे; इनके कुदाली फावड़े; यह सब ज्योंका त्यों, रंगीन और व्यतिव्यस्त, फिर भी निर्जीव और अचेतन दृश्यकी भांति उसके चित्तपर अंकित हो गया.

उसका मार्ग नई मण्डीके रास्तेसे जाता था. वहां सोंधी-सोंधी कुछ

भुनने-पकनेकी महक उसे आई. नथनोंकी राह चावसे उसने वह सुगन्ध जो अपने भीतर ली तो उसमें याद उठी कि उसने कल दुपहरसे कुछ खाया नहीं है और एकदम तेज भूख उसे लग आई. वह दाँई ओरको मुड़कर मण्डीमें चला गया.

अपने पहले दिनोंमें जब भूख उसकी आए दिनकी जानी पहचानी चीज थी वह यहीं आजाता था और मुश्किलसे पाए कुछ पैसोंकी एवज कुछ रोटी भाजी पा लेता था. अक्सर ऐसा जाड़ोंमें होता था. ढावेवाली कपड़ोंकी तहोंमें लिपटी बहुधा अंगीठी तापती उसे मिलती थी, उसी अंगीठी पर कुछ पकाती भी जाती थी. रोटीके यहां दो पैसे लगते थे, बाकी सामानके दस.

आज मण्डी में भीड़ थी. वह अपनी उसी पुरानी दूकान की ओर राह बनाता जा रहा था. तभी दूर से गाने की आवाज सुनाई दी. एक दूकान के आगे घिर कर लोगों की भीड़ एक वृत्त में खड़ी थी. उसने झांक कर देखा, बीच में दस पन्द्रह लड़कियां थीं. ये जो खाली रह कर गाली-गलौज और मैं-तू में मशगूल रहतीं थीं, अब सुन्दर और शिष्ट प्रतीत होती थीं. शाम से ही आज समारोह मन रहा था और रात भर इसी तरह जशनमें बीती थी. गाती बजाती अब वे यहाँ मण्डी में आ पहुँचीं थीं. किराये के तीन साजिन्दे भी उनके साथ थे. वे अपने बाजों से उनका साथ दे रहे थे. कुछ उनमें से अपने गिलास आपस में बजा बजा कर एक दूसरी पर ताड़ी उछालतीं और मग्न हो कर एक दूसरे का चुम्बन लेती थीं. कुछ यों ही शराब को गिलास में और मेज पर बिखरा रहीं थीं. कुछ ताली बजा-बजा कर ही गाने में साथ दे रहीं थीं. वे नाचती, आहें भरतीं, चीखती, चिल्लातीं वहाँ होली-सी मचाये थीं. कुछ यों हीं पसरी बैठीं थीं. इन सब के बीच में एक पैंतालीस वर्षकी भरी काया की प्रमदा, जिसका सौन्दर्य अभी चला न गया था, ओठ जिसके भरे और लाल थे, आँखें उन्मत्त और सरस थीं और उनमें से मद विलास की विह्वलता छलक रही थी, फिरकिनी ले-ले कर नाच रहीं थीं. नृत्य की सम्पूर्ण कला और समस्त सौन्दर्य इस के कर्तब पर खतम

कुर्बान समझिए, वह फिरकनी की तरह जोर से घूम जाती और कभी सिर झुका कर अनोखी चितवनसे लोगों को ऐसे देखती कि, आह ! और फिर एक दम से सिर पीछे फेंक कर पलकें मींच कर अदाके साथ दोनों बाहें दाएं-बाएं फैला लेती. उसकी छीटदार वेस्ट के नीचे स्वतंत्रता पूर्वक आन्दोलन करते हुए दोनों उसके प्रशस्त वक्ष भी हिल-हिल कर नृत्य पर ताल दे रहे थे. कभी एडियों और कभी पंजोंके बल उचक-उदक कर वह नाच रही थी और बीचमें गाती भी जाती थी.

बाहर बांसुरी बज रही है
कैसी मधुर उसकी लय सुन पड़ती है
मां मेरी गहरी नींदमें बंद है
पर प्यारी, राह तो देखती हो, म
मैं मिल न सकूंगा.

यही थी जिसे लखनपाल जानता था. यही वह थी जिसके यहां न सिर्फ वह खाना खाता था पर जहां उसे उधार भी खाना मिल जाया करता था. उसने एक दम लखनपाल को पहचाना, दौड़ी आई, उसे चिपटा लिया, और जोर से अपने अंकमें कस कर सीधे उसके ओठों का चुम्बन ले डाला. फिर उसने अपनी बाहें सामने फैलाईं, उंगलियोंको उलझाया, हथेलियों को मला और मिठास से कूंजना शुरू किया, "ओ, मेरे नन्हें मालिक, ओ मेरे सोने-चान्दी के बाबू, मेरे प्यारे, मैं तुम्हारी बीबी हूँ, हूँ न ? और तुम मुझे माफ कर देना. हमने खूब पी है और मैं मस्त हो रही हूँ. हो रही हूँ तो क्या है, आज बहारका जो दिन है". और वह उसके हाथ चूमनेकी कोशिशमें उसकी तरफ तीरकी तरह छूटी.

"ओह, मैं जानती हूँ, तुम मगरुर नहीं हो, जैसे और बाबू लोग होते हैं. प्यारे, लाओ, हाथ बढ़ाओ. मैं इन तुम्हारे छोटेसे हाथोंको चूमना चाहती हूँ······नहीं, नहीं, नहीं, मैं कहती हूँ, मैं चाहती हूँ······".

"यह क्या कहती हो, गुलाबो चाची" लखनपालने टोक कर कहा, और अप्रत्याशित रूपमें उसकी तबियतमें रंग चढ़ आया. "ऐसे नहीं चाची, वही ठीक है. ओठों का बोसा ही ठीक है. तुम्हारे ओठ मिसरी

हो रहे हैं, चाची, मिसरी''.

''ओह, मेरे जिगर, मेरे सूरज, मेरे चांद, मेरे फरिश्ते,'' गुलाबो अतिशय स्नेह सिक्त हो गई.

''लाओ मुझे अपने ओठ दो प्यारे, लाओ. आह, कैसे नन्हें-नन्हें ओठ...''. उसने जोर से उसे अपनी छाती से कस लिया और उसके मुंह का भरपूर चुम्बन लिया. और उसके बाद वह उसे घेरे के बीचमें ले आई और बड़े गर्व के साथ धीमे-धीमे कदमों से अदाके साथ कमर झुका कर उसके चारों ओर परिक्रमा देती हुई गाने लगी :

आह, हरेककी अपनी-अपनी चाह है,
मुझे वही चाहिए, और यहां
पजामेके अंदर मेरे शैतान जगा है,
और उसके घाघरे में भी कुछ है.

और फिर एकाएक बाजेके स्वर से उतप्त होकर वह उल्लंग नृत्य नाचने लगी—

ओ दैय्या, यह तो ज्यादती है,
कपड़ा तुम्हारा सन गया है, बेहद सन गया है.
पर, बीरन, बिगड़ो नहीं
भीग गए हो तो साफ़ कर डालो
तिरालला, तिरालला···
सोई रह, छिमिया, हिलजुल मत
तू जानती है कोई तेरे संग सोया है,
सब जानती है, क्यों बनती है ?
अपने को ठंग मत, चल···
त-था, त-था, तिरालला.

लखनपाल की धमनियोंमें खून गर्माकर तेजीसे दौड़ने लगा था और वह खूब मदमस्त हो गया था. वह भी बकरेकी तरह उसके आसपास कूदने लगा. लम्बे हाथ, लम्बे पैर, कमर झुकी, उसका अजबसा हुलिया बन आया था. उसके प्रवेशपर चारों ओरसे स्वागतका हर्षनाद हुआ. उसे

एक मेज पर बिठाया गया, उसकी खातिर की गई. उसने अपनी तरफसे कसर नहीं की. एक पहचानवालेसे उसने भी शराब मंगा भेजी और भरा गिलास हाथमें ले वहीं तीन गरमा गरम भाषण दे डाले. पहला तो अखरैन प्रान्तके आत्म निर्णय की स्वाधीनता पर. दूसरा इस प्रान्तकी अंगनाओंके सौंदर्य और स्वास्थ्यकी अपेक्षा यहांके भोजनकी प्रशंसामें. और तीसरा जाने क्यों, दक्षिणी रूसके व्यवसाय और व्यापारके सन्बन्धमें. गुलाबोके बराबर बैठकर वह रह रहकर उसकी कमरमें हाथ डालकर उसे अपने अंकमें कसनेका यत्न कर रहा था. वह भी इसका विरोध नहीं कर रही थी. पर उसकी लम्बी बाहोंमें भी उस स्त्रीकी स्थूल देह समा नहीं रही थी. लेकिन तो भी मेजके नीचेसे स्त्रीने अपने बड़े मुलायम गर्मागरम हाथोंसे लखनपालका हाथ पकड़कर खूब जोरसे दबा दिया, ऐसे जोरसे कि···

इसी वक्त इन औरतोंमें, जो अबतक एक दूसरेको प्रेमालिंगन कर रही थी, कुछ पुराने चले आए वैमनस्यकी बातें उठ आई. उनमेंसे दो तो एक दूसरे की तरफ मुंहकर, जैसे पालेमें छुटी दो तीतरी हों, बाहें फैला एक दूसरेको बढ़ियासे बढ़िया, छटो-से-छटी गालियां देकर कोस रहीं थीं और बढ़ी चढ़ी चली आ रहीं थीं.

एक चिल्लाती, "बुढ़िया, बदकार, कुतिया ! तू यहां, यहां भी मुझे जबानसे चाटने लायक नहीं है, छिनाल!" अपने दुश्मनकी तरफ पीठ फेर कर अपना अधोभाग दिखाकर और वहा हाथ थपक-थपककर कहतीं, "यहां, यहां, यहां !"

दूसरी क्रोधमें तपी हुई जवाबमें चीखकर कहती, "तू झूठी है, झूठ बकती है, हरजाइन. मैं हूं लायक. मैं लायक हूँ."

लखनपाल जाग गया और उसने इस मिनिटको गनींमत माना. जैसे उसे कोई बात याद आ गई हो, वह बेंचसे कूद पड़ा और बोला, "चाची गुलाबो, ठहरना, मैं अभी पांच मिनिटमें आता हूं, अभी." और खड़े लोगोंके दायरेमेंसे गोता लगा कर पार हो गया.

"बाबू, बाबू," उसकी पड़ोसिन उसके पीछे बोलती रही, "जल्दी

वापस आना. .जितनी भी जल्दी हो उतनी. मुझे तुमसे एक बात कहनी है."

मोड़से पार होकर वह जैसे सोचनेके यत्नमें लगा, 'इसी मिनिट क्या खास बात है जो उसे करनी है.' फिर भी कहीं अपने बहुत भीतर वह खूब जानता था कि उसे क्या करना है. किन्तु उसे अपने समक्ष स्वीकार कर भी मानो उसे वह टाल रहा था. अब दिन साफ चमकीला हो चला था. नौ दस बज गए होंगे, सड़कें पानीसे साफ की जाने लगीं थीं. फूल वालियां अपने फूलोंकी डालियां ले बाहर निकल आई थीं. शहरमें जान पड़ रही थी, सब कुछ हिलने और खिलने लगा था. सड़क परसे धड़-धड़ाती एक गाड़ी निकल कर चली गई. उसपर सींकचेदार एक बन्द पिंजड़ेमें हर उम्र, हर रंग, और हर नस्लके कुत्ते बन्द थे, और कोच-बक्स पर म्युनिसिपैलिटीके दो कुत्ते पकड़ने वाले जमादार रौब-दौब से सतर बैठे थे. वे अपने आज सवेरेके मालके साथ इस तरह लौट रहे थे.

'अबतक वह जग गई होगी' लखनपालकी प्रच्छन्न इच्छा अब विचार बनकर स्वरूप धारण कर रही थी, 'और, अगर वह न जगी हो तो··तो मैं भी वहीं जरा तख्त पर लेटकर आराम करना चाहता हूं.'

बरामदेमें टिमटिमाता तेलका दीपक काली रोशनी देता पहलेकी तरह धुआं उगल रहा था, और उसमें दिनका भीगा-सा अंधियारा प्रकाश मुश्किल से रोशनदानोंसे आता जाता था. कमरेका दरवाजा आखिर बे-ताले खुला ही रहा था. लखनपालने, आहट न हो ऐसे, दरवाजा खोला और अंदर घुसा. हल्की, धीमी, नीली-सी रोशनी खिड़की और परदोंके दरवाजोंमेंसे छनकर आ रही थी. कमरेके बीच आकर लखनपाल ठहर गया. सोती लुवीके श्वसोच्छ्वासकी शांत आहट उसने ली. मानो कोई तीखी भूख उसे सता रही थी. उसके ओठ ऐसे खुश्क और गर्म हो आए थे कि वह उन्हें स्वयं बराबर चाट रहा था, और उसके घुटने कांप रहे थे. अकस्मात एक सूझ उसमें चमककर उठी, 'पूछूं, कि क्या उसे कुछ चाहिए ?'

शराबीकी तरह, मुंह खुला, जोर-जोरसे सांस लेता, कांपती टांगों

लड़खड़ाता हुआ लखनपाल उसके विस्तरकी ओर बढ़ा.

लुबी चित्त सो रही थी. एक हाथ बराबर में फैला था, दूसरा छाती पर रखा था. लखनपाल झुका, पास झुका, और पास झुका··· उसके ओठोंके किनारे तक ही उसका मुंह आगया. वह ठीक गहरे सांस लेती लेटी थी. उसके युवा स्वस्थ देहमेंसे आता हुआ यह श्वांस, नींद में थी तो क्या, मिठास और सुरभिसे भीना था. उसने धीमे-धीमे उसकी खुली बांह पर अपनी उंगलियां फेरीं. देहमें बिजली-सी दौड़ रही थी. उसने उस सोती हुईकी छाती पर, जरा नीचे, हलकेसे छूआ. 'यह मैं क्या कर रहा हूं ?' मानो उसके भीतरसे कुछ वस्तु, भयाक्रान्त, जैसे उत्तर मांगती हुई नीरव चीख से चिल्लाई. लेकिन तत्क्षण ही न जाने किसने लखनपालकी जगह बैठकर जवाब दिया, 'अरे, तुम तो कुछभी नहीं कर रहे हो. तुम तो सिर्फ पूछना चाहते हो कि वह आरांमसे तो सो रही है न. उसे कुछ चाय-वाय तो नहीं चाहिये ?'

पर उसी समय लुबी ने आचानक आँख खोली. आखें खुलीं, फिर झंपीं, फिर खुल गईं. इन्द्र धनुषकी भाँति उसने अंगड़ाई ली. फिर अंगड़ाई ली, और अनजान, अनायास, तृप्त पीत मुस्कराहट से वह मुस्कराई और उसी प्रकार अनायास निंदासे स्नेहके झोंकमें अपनी दोनों बाहें लखनपाल के गले में डाल रही.

पुचकार कर कुछ निन्दासी आवाज में प्रेम पगी बोली में कूँज कर उसने कहा, "मेरे प्यारे, मेरे राजा, क्यों रूठे हो ? मैं तो तुम्हारी राह ही देखती रही. देखते-देखते मुझे तो गुस्सा भी आ गया था. तब फिर मुझे निंदिया आगई. नींदमें सारी रात तुम्हें ही देखती रही. मेरे पास आ जाओ, मेरे राजा, मेरे गुलाब" और उसने उसे खींच कर अपने छातीके निकट ले लिया.

लखनपाल ने विरोध किया ऐसा न जान पड़ा. उसकी देह सारी कांप रही थी, जैसे सर्दी लगी हो. और भिचे दांत और उखड़ी धीमी आवाज में दोहरा-दोहरा कर उसने कहा, "नहीं, नहीं, लुबी यह नहीं, ·····सच ल्युबा, यह न करो·········आह, छोड़ो ल्युबा, मुझे जाने दो

······देखो, लाचार नहीं किया करते······यों न करो ··देखो, फिर मैं नहीं जानता. रहने दो लुबा, परमात्मा के लिए······".

"मेरे भोले, मेरे पागल प्यारे," हंस कर कपोतीके से स्वरमें उसने कहा, "आओ, मेरे प्रान, आओ". और अन्तिम लगभग अनमने विरोध को जीत कर उसने लखनपालके मुंहको अपने से सटाकर लगा लिया और जोर से एक जलता हुआ चुम्बन ले लिया. चुम्बन ! जैसा कि अपने इतने जीवन में पहली बार उसने पाया. सच्चा, सम्पूर्ण, अंगारे-सा लाल.

'ओह, ढोंगी, तू क्या कर रहा है ? अरे, मैं क्या कर रहा हूँ ?' किसी सच्ची, हित वादिनी, पर फिर भी पराई वाणीं ने लखनपालके भीतरसे कहा.

कुछ देर बाद, साभार, सस्नेह, लुबी ने लखनपाल के ओठों को उपसंहार भावसे चूम कर कहा "अब कुछ तुमको सच चैन पड़ा कि नहीं, क्यों, मेरे भोले बाबू, ओह, मेरे राजा··लो, अब जरा सो लो...".

१२

दारुण अन्तर्वेदनाके साथ अपने प्रति, लुबीके प्रति, मानो सारे जगतके प्रति घोर वितृष्णा और घृणाका भाव लिए लखन पाल वैसेही बे कपड़े उतारे उस तख्तपर पड़ गया. लज्जाकी चोटसे वह दांत भींच रहा था. उसे नींद नहीं आती थी. विचार वही इस लुबीको ले आनेके मूर्ख कृत्यके चारों ओर आवर्त देकर घूम रहे थे. उस कृत्यमें यदि एक गम्भीर गहन तथ्य था तो साथही कैसा दुर्बोध माया-मोहका जाल भी उससे लिपटा था. वह दृढ़ताके साथ बार-बार अपने भीतर दुहराता था "खैर हुआ. एक बार जो मैंने वचन दिया उसे निभाना होगा. और जो अब हो गया है फिर न हो पायगा. मेरे परमात्मा, अवरुद्ध कामावेगमें कुछ क्षणोंके लिए कौन स्खलित नहीं होगया है ? किसी विचारकने कैसा गम्भीर गहन सत्य प्रतिपादित किया जब उसने कहा, 'मानवीय आत्माकी महत्ताकी नाप

उसके पतनकी गहराई और उसके स्वप्नोंकी ऊंचाईके अंतरसे होती है.' लेकिन तो भी इस मूर्खताका मैं क्या बनाऊँ. उस विचित्र तार्किक पत्र-कार पवंनजयके जादू और अपने विजयके अनर्थ आवेशका मैं क्या बनाऊँ. जैसे कि यह सब कुछ वास्तविक नहीं है, घटनात्मक नहीं है. मानो यह सब किसी समस्यात्मक ('क्या किया जाय' नामक) उपन्यासमें वर्णित कोई कहानी है. और किस मुहसे, किन आखोंसे अब कलमैं उस लड़कीकी तरफ सिर उठाकर देखूंगा ?" .

उसके सिरमें आग लग रही थी, धूआं भर रहा था. उसके पलक मानो जल रहे थे,ओठ सूख रहे थे. सिगरेटपर सिगरेट पीकर फूंक रहा था, बार-बार अपनी जगहसे उठकर गिलास मेजसे उठाकर बे तहाशा पानी पीरहा था. आखिरकार ज्यों-त्यों झटकेसे अपनेको बीते कृत्यके जालसे तोड़कर वह स्वयंको अलहदा कर सका. तब स्वप्नहीन, चिन्ताहीन, घनी, काली रुई-सी मुलायम नींदने उसे आ घेरा.

दोपहर बीते दो या तीन बजे वह उठा. पहले तो कुछ देरतक अपने आपेमें नही आ सका. उसे कुछ सुध न थी. उसने ओठ भिगोये और भारी चौंधियाई आखोंसे कमरेकी तरफ देखा. जो रातमें हो गुजरा था अब सब उसके सरमेंसे गायब होगया था. पर जब उसने लुबीको देखा, देखा, कि वह शान्त, निश्चल, घुटने पकड़े बिस्तरपर बैठी है, सिर झुका है और हाथसे उसे थामे है, तब बह भीतरही भीतर घबराहटमें विमूढ़ होकर गुर्राने-सा लगा. अब तक उसे सब कुछ याद आगया था. और उस क्षण उसने अपने भीतर अनुभव किया कि अपनीही आखोंसे अपनेही रातके दुश्कर्मके परिणामको इस उजले होकर उगते हुए दिनके प्रकाशमें देखना कितना असहनीय होता है.

लुबीने स्नेहसे पूछा, "तुम जग गए, प्यारे."

वह विस्तरसे उठ आई और तख्त तक आकर लखन पालके पांयते बैठ और कम्बलसे ढकी उसकी टांगोंको धीमे-धीमे थपकने लगी.

"क्यों, मैं तो बहुत देरकी जगी हूं. हां, तबसे बैठी थी. तुम्हें जगानेकी तबियत नहीं हुई. तुम गहरी नींद सोरहें थे."

वह उसके मुखकी ओर बढ़ी और उसका चुम्बन ले लिया. लखन पालने खट्टा मुंह बनकर धीरेसे उसे अपनेसे परे हटाया.

"ठहरो लुवी, ठहरो. यह जरूरी नहीं है. समझी ? इसकी कभी, बिल्कुल जरूरत नहीं है, बिल्कुल नहीं. जो कल होगया था न, वह संयोग समझो, एक दुर्घटना. मेरी कमज़ोरी थी. समझी न ? मेरी नीचता कह सकती हो. हां, मेरी ही नीचता थी. लेकिन परमात्मा साक्षी है, मेरा विश्वास करो, मैं··मैं यह नहीं चाहता था. मैं तुम्हें अपनी··वह नहीं बनाना चाहता था. मैं तुम्हें अपनी सुहृद, अपनी बहन, अपनी सखा·· खैर, जाने दो, हुआ हुआ. अब सब अपने आप ठीक हो जायगा. बस हमें हिम्मत नहीं हारनी होगी. और इस बीच प्रिय, क्या तुम जरा उस खिड़कीकी तरफ जाकर बाहरकी बहार देखोगी, मैं इतने अपने कपड़े-वपड़े ठीक पहन लूं."

लुवीने जरा ओठ निकाले और लखनपालकी तरफ पीठ मोड़कर खिड़की की तरफ चली गई. मित्रता, सख्य, सुहृदभाव और भ्रातृ-भाव की बातोंका एक भी शब्द वह अपने नन्हेसे सीधे-सादे दिमागके बल पर नहीं समझ सकी. यह कि एक कालेजमें पढ़नेवाला विद्यार्थी जो अभी तक कुछ नही है तो क्या, जो पढ़ा लिखा है, एक रोज वकील, डाक्टर, जज, कुछ भी बन सकता है, उसीके साथ वह रह रही है. इतने भरसे उसकी कल्पना कहीं अधिक गौरवान्वित होती थी··पर अब उसे यह दीख रहा है कि यह महाशय उसे ले तो आए, और उससे अब अपना मन चाहा पा जो चुके सो अब छूटकर निकले जा रहे हैं ! ये सब ऐसे ही होते हैं, सब मर्द.

लखनपाल जल्दीसे उठा. जल्दी-जल्दी कुछ अंजुल पानी फेंककर मुँह धोया, एक पुराने तोलिएसे मुंह पोंछा. और पर्दे उठाकर खिड़कियां खोल दीं. सुनहरी धूप, नीला आसमान, शहरकी गड़गड़ाहट, पेड़ोंकी हरियाली, घोड़ोंके गलोंमें बंधी घण्टीकी आवाज, धूपके स्पर्शसे धरतीमेंसे निकली मिट्टीकी सोन्धी गंध—ये सबकी सब खिड़की खुलते ही मानो एक साथ उसकी छोटी-सी कोठरीमें भागकर भर आई. लखनपाल लुवी

के पास गया, प्रेमसे उसके कंधे थपके, कहा, "कुछ परवाह नहीं, मेरी फूल•••जो हुआ वह अनहुआ तो हो नहीं सकता. पर आगेके लिए उससे हम सीख ले सकते हैं. क्यो, तुमने अबतक अपने वास्ते चायके लिए नहीं कहा, लुवी ?"

"नहीं, मैं तुम्हारी बाट देखती थी. और जानती नहीं किससे कहतीं. अच्छा बताओ, तुम मुझसे नाराज हो ? क्यों, जब तुम अपने मित्रके साथ गए थे तब थोड़ी देर बाद लौटे भी थे. कहो, नहीं लौटे थे ? मैंने आहटसे जान लिया था, तुम लौटे हो. और तुम दरवाजेके पास ही कुछ देर खड़े रहे, फिर चले गए. क्यों, तुमने मुझे नमस्ते भी नहीं की ? यह ठीक है ?"

'लो, घरेलू झगड़ा नंबर एक !' लखनपालने सोचा. हंसी-हंसीमें अपनेपनके साथ ही सोचा, पर मनमें मैल न था,

अभी जो हाथ मुंह धोकर ताजा हुआ था उससे; आकाशके सुनहले नीले सौन्दर्यके कारण; कुछ-राज़ी-कुछ-नाराज़ लुबीके मनोहर चेहरेकी वजहसे; और इस चेतनाके परिणामस्वरूप भी कि वह मर्द है और यह जो कुछ यहां बना बिखरा है, वह उसकी ही करनी है, लुबी उसकेलिए जिम्मेदार नहीं,—इनसब बातोंसे उसके चित्तमें ताज़गी और क्षमता आई. हठात उसने अपनेको संभाला. दरवाजा खोल कर बरामदे में जाकर उस अन्धेरेमें से ही चिल्लाया, "सिकन्दरा, चाय, दो रोटी, मक्खन और सौसेज, सुना ? और एक बोतल भी".

चट्टियों की आवाज बरामदेमें से ही सुनाई दी और दूरसे ही किसी ने उमरपके स्वरमें कहा, "चिल्ला क्यों रहे हो जी, शोर क्यों मचा रहे हो ? हो-हो, जैसे अस्तबलमें घोड़ा हिनहिनाता हो. तुम अब बच्चे नहीं हो, खासे बड़े हो गए हो, फिरभी क्या उजड्ड से बने रहते हो ? बताओ, क्या चाहिए ?"

और कहते-कहते कमरेमें छोटीसी देहकी एक वृद्धा स्त्रीका प्रवेश हुआ. छोटी-छोटी लाल पलकोंके बीचमें आंखें ऐसी थीं जैसे दो तंग-दरार. मुँह सफेद कागज़-सा कोरा था, जिस पर बस नाक उठ कर

नुकीली, नीचे को लटकी जारही थी. इसका नाम एलकजेन्दा था, विद्यार्थियोंके रहनेके दरबोंमें ही वह पल कर बूढ़ी हुई थी. लड़कों की सहायक भी यह थी और महाराजिन यही. बातून, झक्की, ऐसी यह पैंसठ वर्ष की बुढ़िया थी.

लखनपालने अपना आर्डर दुहराया और एक रुपए का नोट उसके हाथों थमाया. पर हमारी वह बुढ़िया इसपर चली नहीं गई, खड़ी-खड़ी, नहीं तो इसी कमरेमें इधर-उधर चल-चला कर वह समय बहलाती रही और ओठ चबाती, बड़-बड़ाती और दरवाज़े की तरफ पीठ किये बैठी लुबीकी तरफ द्वेष पूर्वक देखती रही.

लखन पालने हंसकर पूछा, "सिकन्दर, क्या हो गया है तुम्हें, जो ऐसी भूतसी बन रही हो? या तबीयत आगई है! तो सुनो, यह मेरी···मेरी बहन है · ल्यु · ल्युबौब···" क्षणभर जैसे वह खोगया और फिर बोल चला, "ल्युबौब-वैसेलेबना, लेकिन, मेरेलिए बस लुबी. मैं उसे तबसे जानता हूं जब वह इतनीसी थी." उसने हाथके इशारेसे फुटभर ऊंचा होनेका संकेत किया. "और मैं उसके कान खींचा करता था. बड़ी दंगई थी और मैं उसे चपतियाता था···और और मैं रंगबिरंगी तितली पकड़कर उसे देता था और फूल, और लेकिन तुम···तुम अपनी बात तो कहो. पत्थर-की मूरतसी जमी क्यों खड़ी हो ? चलती फिरती नजर आओ."

लेकिन बुढ़िया वहीं रही, गई नहीं. चारों तरफ पैरोंसे मानो फर्श कुचलती हुई वहीं डोलती रही, दरवाजेकी तरफ नहीं बढ़ी. उसकी तिरछी पैनी विषैली निगाह बराबर लुबीपर गड़ी थी और अपने पोपले मुहसे बड़-बड़ा रही थी, "बहन ! इन चचेरी मुसेरी बहनोंको हम खूब जानती हैं. कस्टन बायाके आसपास ऐसी बहनें बहुतेरी घूमती रहती हैं. पर इन मुई कुत्तियोंका जी कभी भरता हो तब ना."

"ओह बुढ़िया, बदज़ात, चुप रह. बक मत." लखन पालने डपटकर कहा, "नहीं तो मैं भी उस ट्रेसवकी तरह तुझे कोठरीमें मूंद दूंगा और चौबीस घन्टे तक तुझे मूंदे रहना पड़ेगा."

सिकन्दरा चली गई और बहुत देरतक उसके पके धीमे क़दम और

उसकी बड़बड़ानेकी आवाज बरामदेमेंसे सुनाई देती रही. अपने बुढ़ापेमें वह पढ़नेवाले लड़कोंको बहुत कुछ माफ कर देती थी. कम ज्यादह चालीस वर्षतक वह इन्हीं लड़कोंकी खिदमतमें रही है. वह शराब पीते, ताश खेलते, झगड़ते, चिल्लाते, कर्जकर आते—इस बुढ़ियाके निकट उन्हें सब माफ था. लड़कोंके लिए उसके दिलमें बड़ी जगह थी. पर, अफसोस, उसका विवाह न हुआ था. वह उम्रभर क्वारीही रही. और इसलिए एक बात थी जिसके लिए उसकी अनर्पित अछूती आत्मामें कोई जगह, कोई माफी न थी. और वह—यही चरित्रकी खराबी ?

१३

"वाह, भई वाह···क्या खूब" लखन पाल स्फूर्तिकी अतिशयतामें एक तीन टांगकी मेजके चारों तरफ उचक कर और फुदककर और बेजरुरत चायके सामानको इधर-उधर हटाता हुआ कह रहा था. "आह, कबसे, मुद्दतसे, मैंने चाय नहीं पी. यानि वह कि जिसे चाय पीना कहें. बाकायदा, आरामसे, भले मानसकी तरह घर बैठकर जो चाय पी जाती है, वह चाय. बैठ जाओ, लुवी, बैठ जाओ. लो, यहां तख्त पर आ बैठो. देखो, अब सब काम तुम्हीं हाथमें लो. बाडका तो शायद तुम सबेरे-सबेरे पीती नहीं ! इजाजत हो तो मैं दो एक घूंट लेलूं इससे जी खिल जाता है. मेरी चाय, देखो, तेज बनाओ. मैं तेज पीता हूं. वाह, गरमागरम चायके गिलाससे बढ़कर भी क्या कुछ चीज है ? और जब साकी तुम-सी हो, तब··बस."

लुवी उसकी सब चपर-चपर सुनती रही. उसकी बातें वाचाल मुखरता और वेगसे ऐसी भरी थी कि स्वाभाविक नहीं मालूम होती थीं. लुवीकी मुस्कराहट जो पहले शंकाशील और जरा सन्दिग्ध थी अब कोमल हो कर खिल चली. पर वह ठीक तरह चायके साथ नहीं चल सकी. अपने देहातके घरमें यह चीज उसके लिए शौककी चीज थी. वहां संपन्न घरोंके लोग भी उसका शौकिया ही उपयोग करते थे. परिवारोंमें खास

मेहमानोंके आनेपर तीज त्यौहारके दिन ही चाय तैयारकी जाती थी. तब बाकायदा घरके सब जन जमा होते और कुटंबका सबसे प्रधान व्यक्ति मेज पर बैठकर लोगोंको, मानो साधिकार, चाय देता. उसके बाद जब लुबी एक शहरमें पहले एक पादरीके यहाँ रही और फिर इन्श्योरेन्स एजेन्टके यहां (यही था जिसने उसे पहले पहल वेश्या वृतिके मार्ग पर डाला) तो वहां अक्सर मेजपर बची-कुची ठण्डी चाय और मालकिनकी कुतरी कभी-कभी चीनीकी एकाध डली उसे मिल जाती थी. वह मालकिन पहले उस पादरीकी पीली दुबली डाह भरी औरत थी, फिर मोटी कंजूस मैली और नीची जातिवाली एजेन्टकी पत्नी उसकी दूसरी मालकिन हुई. इसलिए जैसे बचपनमें हम सबके लिए दाएें और बाएें हाथको पहचानना जैसी सुगम बात असंभव होती है, वैसेही यह चाय बनानेका सीधा-सा काम उसे दूभर होता था. तिसपर यह उत्कंठित, चपलगति लखन पाल और भी उसकी मुसीबत और मुश्किल बढ़ा रहा था.

"प्यारी, चाय का बनाना भी एक कला है. इसे तो कोई बस मास्कोमें सीखे. पहलेतो सूखे एक खाली चायके बर्तनको ज़रा गरम किया. फिर उसमें कुछ चायकी पत्ती रक्खी और झट ज़रा उबलते पानीसे उसे धो लिया. धो लिया, समझीं न ? यह धोवन अलहदा फेंक देना चाहिए. चाय इस तरह साफ हो जाती है और खुशबू देने लगती है. और फिर अपना तरीका तरीका है. सुनते हैं, चीनी आदमी यों ही अपनी चाय बना बनू लेते ह. जंगली जो ठहरे. इसके बाद फिर नया पानी डालना चाहिए. कोई चौथाई चायके बर्तनको उबलते पानीसे भर दिया और ऊपर तौलियासे ढक कर उसे तीन चार मिनटके लिए योंही छोड़ दिया, छेड़ा नहीं. फिर और उबलता पानी डाला यहाँ तक कि ऊपर तक भर दिया. फिर उसे ढक देना चाहिए, और कुछ देर नहीं छेड़ना चाहिए. तब वह चाय तैयार होगी कि तुमभी कहो, हाँ ! खुशबूदार, लहलहाती, ताकत वर".

लुबीका सुन्दरसा देहाती चेहरा सुन-सुनकर लम्बा और तनिक पीला साही पड़ता दीखा. "परमात्माके लिए देखो, तुम······क्या ? क्या···

लखनपाल ? यही न ? तो देखो मेरे प्यारे लाखन, मुझसे नाराज मत होओ. मैं जल्दी सीख लूंगी. मैं सब झट सीख लेती हूँ. अब तुम मुझे सदा 'तुम' 'तुम' क्यों कहते हो ? हम आपस में अनजान तो नहीं रहे". कहकर उसने सकरुण दृष्टिसे उसे देखा. सचमुच, अपनी इस अभागी छोटी जिन्दगीमें आज पहली बार सबेरे उसने स्वेच्छासे अपनी देह किसी को दी थी, जब न पैसेका कोई ख्याल था, न बलात्कार, न लाचारी, न बरखास्त होनेका डर और न और कोई बाहरी कारण. यदि सचभी हो कि अबभी उस समर्पणमें आनन्द और कृतार्थ भावकी संपूर्णता न थी, फिरभी हार्दिकताके साथ अपने भीतरकी कृतज्ञता और स्नेहके आवेगके कारण ही उसने अपनेको इस विद्यार्थीके अंकमें सर्मपित किया था. उसका स्त्रीहृदय प्यासा संपुटित, प्रेमके सूर्यके प्रति सदा सूरजमुखीकी भाँति उन्मुख हृदय इस क्षण पवित्र, स्नेहके उल्लाससे भर रहा था.

किन्तु तभी एक दम इस नारीके प्रति, जो कल उसकेलिए कोई न थी और आज उसकी परिगृहीता है, इस स्त्रीके प्रति लखनपालमें निरादर और द्वेषका भाव हो आया. एक विषम ग्लानि और तज्जनित संकोच में वह घिर उठा, 'यह गृहस्थ सुख (?) का आरंभ होता है'— उसने हठात सोचा. फिरभी वह कुर्सी से उठा, लुबीके पास गया और उसका हाथ लेकर अपनी ओर खींचा, उसे सिरपर थपथपाया और अत्यन्त स्नेह से (दम्भपूर्वक) कहा, "मेरी प्यारी बहन, सच, जो आज हो गया है अब कभी न होने पाएगा. कसूर सब मेरा है. मेरा ही दोष है. कहो तो घुटनों गिर करमैं तुमसे क्षमा मांगनेको तैयार हूं. सुनो लुबी, यह सब मेरी मर्जीके खिलाफ, मेरे बावजूद, जाने कैसे अचानक बेजाने हो गया. मैं नहीं जानता था कि ऐसा हो जायगा. पर तुम समझ सकती हो, मुद्दतसे मैं······ मैंने किसी स्त्रीको पास से नहीं पाया, नहीं जाना······ सो जाने क्या जालिम बेबस मेरे भीतर से उठ आया··· और·· लेकिन हे राम, मेरा अपराध क्या इतना बड़ा है ? पवित्रजन, त्यागी, सन्त, सन्यासी गुहावाँसी—इनकी संयम साधनाके आगे मैं क्या चीज़ हूँ. पर ये तक इस शरीरके दानवी प्रलोभन के सामने कब-

कब ठहर सके हैं ? पर जिसकी चाहो उसी की सौगंध, मैं कहता हूं कि अब फिर यह नहीं होगा, नहीं होगा,···ठीक है न ?"

लुवी बराबर अपने हाथ से उसका हाथ अलग दूर करने की चेष्टा कर रही थी. उसके ओठ ज़रा निकल आए थे और झुकी पलकें बार-बार मिच रही थी. "हाँ," उस रूठे बच्चे की तरह वह बोली जो मानने से इंकार करता है, "मैं देखती हूँ, मुझसे कुछ नहीं होगा. तो, अच्छा हो तुम मुझसे सीधे यह कह दो, मुझे गाड़ीका भाड़ा दे दो, और ऊपरसे जो तुम चाहो·····एक रात के दाम तुमने चुका ही दिये हैं, बस मैं बैठ फिर वहीं पहुँच जाउंगी···".

लखनपाल दोनों हाथोंको अपने सिरके बड़े-बड़े बालोंमें उलझाए कमरे में इधर-उधर डोलने लगा. बोला, "ओह, नहीं, वह नहीं. मुझे समझो लुवी. जो आज सवेरे हो गया है, उसे ·····उसे ज़ारी रखना···बेहयाई है, गधापन है. किसी आत्माभिमानी के लिए असंभव है. प्रेम ? प्रेम, यह दो भिन्न धाराओंके, दो हृदयोंके, आत्माओंके, दो व्यक्तिओंके मिलकर एक हो जानेका नाम है. सिर्फ शरीरोंका संयोग नहीं. प्रेम एक जबर्दस्त प्रबल भावना है. विश्व-व्याप्त, वैसी ही शक्तिमान. साथ बिस्तर पर पड़ रहना प्रेम नहीं है, लुवी वैसा प्रेम हम दोनोंमें नहीं है. यदि वह आएगा तो मेरे तुम्हारे लिए परस्पर स्वर्ग उपस्थित हो जायगा. लेकिन तब तक मैं तुम्हारा मित्र हूं, तुम्हारा स्नेही, सखा, जीवनके मार्गपर सदोद्यत तुम्हारा निश्छल संगी और बस उतना ही पर्याप्त है...और अगरचे मैं मानवीय दुर्बलताओंके प्रति अजेय नहीं हूं, फिर भी मैं अपनेको ईमानका और नीयतका साफ आदमी गिनना चाहता हूं."

लुवी सोच में पड़ गई. वह समझता है मैं चाहती हूं कि वह मुझसे शादी करे और मैं कहती हूं, मुझे उसकी बिल्कुल जरूरत नहीं. खिन्न होकर उसने सोचा—क्यों जी,ऐसे ही रहे आना भी तो संभव है. और भी तो हैं जो इसी तरह रह रहे हैं. और वे कहते हैं, आगके चारों तरफ फेरे डालनेके बाद जैसे वे रहते शायद उससे और मजेमें ही रह रहे हैं. इसमें तब ऐसी क्या खराबी है, क्या पाप है ? कैसा भला, प्यारा, अच्छा

सुन्दर जीवन है. वह...मैं उसके लिए बेबी मोजे बुना करूंगी, घर साफ रखूंगी, खाना बनाया करूंगी... पर, खाना सादा होगा. और व्याहकी बात है, तो किसी भले मालदार घरकी लड़की उसे मिल जायगी और व्याह हो जायगा. और ठीक है, हो जाय. तब, सच, वह मुझे कपड़े-लत्ते छीनकर तो एकदम बाहर निकाल ही नहीं देगा. नहीं, वह बहुत भला भोला है. और जरा बातून है तो क्या, इसमें भूल नहीं हो सकती कि वह नेक आदमी है. वह जरूर मेरा ख्याल रखेगा. मेरा कुछ बन्दोबस्त जरूर कर देगा. और शायद है कि धीरे-धीरे वह मुझसे निभ भी जाय और मुझे नापसन्द करना छोड़ दे. मैं सीधी सादी हूं, मेरे जी में कोई साध, कोई अरमान भी नहीं है, और मैं कभी उससे झूठी नहीं हो सकती. मैं कभी उससे छल नहीं करूंगी. क्योंकि लोग कहते है, ऐसा होता है...लेकिन मैं कुछ नहीं कहूंगी, कुछ नहीं. वह रातमें फिर मेरे पास आयगा और आज ही रात आयगा, यह तो पक्की बात है. इसमें मुझे रत्ती भर भी शक नहीं है, जैसे परमात्मामें शक नहीं."

और लखनपाल भी विचारोंमें डूबा था. चुप, विषण्ण, वह अपनेको उस बड़े दायित्वके भारी बोझके नीचे दबा अनुभव कर रहा था जो उसने हठात् उठा तो लिया है, पर जो उसके बूते के बाहर है. इसलिए जब उसने सुना कि बाहर कोई थपथपा रहा है तो उसे आराम मिला और उसने अनायास उत्तरमें कहा "आओ भाई." दो विद्यार्थी अन्दर आए. एक सोमदेव और दूसरा वही नेजरस, जो उस रात यहीं सोया था.

बलिष्ठ देह और तनिक स्थूल आकृति, चौड़ा चेहरा, नीचे छोटीसी नुकीली डाढ़ी—यह सोमदेव था. हँसमुख, हार्दिक, नेक दिल विद्यार्थी था. हर एक यूनिवर्सिटीमें ऐसे कुछ लड़के होते हैं. वह अपने खाली वक्तको—और दिनके चौबीस घंटे उसके लिए खाली ही थे—शराब खानोंमें चक्कर लगाने, घूमने-घामने, बिलियर्ड-ह्विस्ट खेलने, अखबार-उपन्यास पढ़ने या सरकस दंगल देखनेमें काटता था. इन्हीं के बीचमें जो वक्त मिल गया, उसमें खाने, सोने, सुई-धागा लेकर अपने कपड़े सीने-संभालने और घरके और छोटे-मोटे धंधे समेटनेमें लगा देता था. और

कहीं राहमें या कमरेमें या रसोईमें कोई स्त्री मिल गई तो उससे नितान्त पार्थिव प्रेमका व्यापार चलानेका काम भी वह इसी वक्तमें कर लिया करता था. अपने सर्किलके और सब लड़कोंकी तरह वह भी अपने को क्रांतिवादी मानता था. अगरचे राजनैतिक झगड़ों और दलबंन्दियों से और आपसी कहासुनी या टंटे-बखेड़ों से वह दूर रहता था और उन्हें सख्त नापसन्द करता था. क्रांति वादियोंके अखबारों और ट्रेक्टोंको पढ़नेकी उसे फुर्सत न थी, इससे वह क्रांतिके काम-धाममें एक तरह निरा कोरा ही था. इसीसे पार्टीकी पहली सीढ़ी पर भी वह नहीं पहुंच पाया, यद्यपि कई बार उसे कई भेदकी बातें भी बताई गईं जो उसे स्पष्ट तो न समझ पड़ीं, पर जो जोखिमकी थी. लेकिन उन्हें याद रखनेकी जरा ऐतिहात वह न रख सका. पर उसकी निश्चल दृढ़ताका सबको भरोसा था. वह जो काम करता, झट, सही और सीधे बढ़कर करता. जो हाथ में लेता उसे पूरा करके छोड़ता. साहसिक उद्यम और प्रस्तुत कार्यकी महत्त्व-पूर्णतामें निर्भीक, अटल विश्वाससे वह भरा रहता था. सख्त-से-सख्त वक्तमें मुंह पर उसके मुस्कराहट ही रहती. भय जानता न था. आपत्ति की संभावना होती और उपेक्षा से वह हंस देता. मफरूर साथियोंको वह छिपाता था; जब्त लिटरेचर और गैर कानूनी छापेखानों को वह महफूज रखता था और पैसा और पासपोर्टको यहाँ वहाँ भेजनेका भी वह काम करता था. देहमें खूब शक्ति थी, तबियतमें खुली हार्दिकता और आदतोंमें स्वभाव सिद्ध सादगी. अक्सर कभी दूर देहातसे उसके पास खर्चके लिए खासी अच्छी रकम आती रहती थी. एक विद्यार्थीके मामूली खर्चके लिहाजसे वह काफीसे कहीं ज्यादा होती थी. लेकिन सत्रहवीं सदीके फ्रेंच रईसकी-सी लापर्वाहीसे वह दो दिनमें उसे यहाँ वहाँ बखेर देता और जाड़ोंके दिन अपने उसी एक रोजमर्राके कोट में और एक जोड़ी दकिया-नूसी जूतों में काट देता. जूतों को अपने हाथसे सींकर ठीक-ठाक हालत में रक्खे रखता था. इन आदरणीय उपहास्य उच्च और अस्थिर विशे-षताओंके आगे भी—जिन्हें हम नहीं जानते कि वे वांछनीय हैं, पर जो औसत रुसी विद्यार्थीकी इतिहाससिद्ध पुरानी विशेषताएँ हैं—उसमें

एक और आश्चर्यकारक गुण था. वह पैसा पैदा कर लेनेमें एक ही था. रेस्टराँमें, भोजन शालाओंमें, सब जगह जैसे उसका खाता चलता था. नीलामकी दूकानोंके सब नौकर, दलाल, कर्ज देनेवाली सब संस्थाएँ, सब महाजन, पुराने कपड़ेके दूकानदार, इन सब लोगोंसे उसका गहरा मेल था.

लेकिन अगर किसी कारण इन सबके पास न भी जा सकता तो भी सोमदेवके लिए ठिकानों की कमी न थी और उसके कौशलका पार न था. निठल्ले और बेपैसे साथियोंका अधिनायक बनकर, तरह-तरहकी जिम्मेदारियां अपने सर लेकर जैसे इस आदमीमें अनुपम मेधाकी स्फूर्ति जाग जाती थी. दूरसे कोई काबुली कमरपर गट्ठर रक्खे जाता दीखता तो यह सोमदेव जाने क्या इशारा करता कि वह बेचारा सड़कके उस पार कन्धोंपर मालका बकुचा संभाले रुक जाता. तब यह कुछ देरके लिए साथियोंको यहीं छोड़ अदृश्य हो जाता और थोड़ी देर बाद फिर वहीं आकर आविर्भूत हो जाता. उस समय साथी लोग देखते कि उसका या तो कोट नदारद हो गया है और पतलूनपर बस एक जाकट-सी पहने वह शानसे चला आ रहा है. या दिन जाड़के हुए तो ऊपरका कोट ही गायब हो गया है और बस वह एक झीना-सा सूट बदनपर लटकाए आ गया है. कभी-जभी नई ताजी टोपी पहनकर जाता और देखते कि टोपी के नामपर एक पुरानी-सी टुपिया चांदके उपर ऐसी टिकी है कि जैसे जादूके बल वहां बैठी हो, और वह नई टोपी वहांसे उड़ गई है. और वह इस सबमें उसी तरह मस्त दीखता.

हर कोई उसे चाहता था. क्या साथी, क्या नौकर, क्या स्त्रियाँ, क्या बच्चे. और सब उससे हिले-मिले थे. यह अफगान लोग तो उसे बेहद चाहते थे. समझते थे, बच्चा है, फरिश्ता. कभी गर्मियोंमें बढ़िया शराबका उपहार वे उसके लिए लाते, कभी अपनी दावतोंमें निमंत्रित करते. अविश्वसनीय कितना ही मालूम हो पर सच यहां तक है कि बहुत आड़े वक्त महफूज रखनेके लिए अपनी कीमती किताब और जरूरी कागज तक उन्हें सोंप आता था. ऐसे मौकों पर वह लापरवाह और गंभीर बनकर

उन्हें बताता, 'देखो, जो किताब में दे रहा हूं, बड़ी जबरदस्त है. इसमें लिखा है अल्लाहो अकबर. और इसमें लिखा है मुहम्मद नबी था और लिखा है, दुनियाँ में बहुत कुफ्रो गुनाह है, और इंसानको एक दूसरेकी तरफ हमेशा रहमदिल होना चाहिए.'

उसमें दो खूबियां और थीं. वह किताब पढ़कर तो खूब ही सुनाता था और गजबकी शतरंज खेलता था. शतरंजमें अजब उसको महारत थी. मानो उसका खास भेद कोई उसके हाथ हो. बड़े-बड़े खिलाड़ियोंको वह हंसी-हंसीमें हरा देता. उसकी पहली चढ़ाई बड़ी जबरदस्त और दुर्जय होती.बचाव संभला हुआ, और सकुशल. वह तिरछे बाजू में अपनी ताकत इकट्ठी करता था और सामनेके खिलाड़ीको छोटी मोटी रियायतका ऐसा प्रलोभन देता कि जैसे उसे इसकी परवाह नहीं है, पर उन्हींमें फंसाकर खिलाड़ीको वह बेमौत ले डालता. अचूक उसकी चालें होतीं. गुप्त उसका निशाना, निर्भय उसकी चोट. वह ऐसे चाल चलता था मानो सब उसका पहलेसे जाना हो. सोचनेकी उसे जरा जरूरत न होती. खेलके विज्ञानकी सदा अवज्ञा करके बढ़ता, और मान्य तरीकों कायदोंकी अवहेला करके उन्हें तोड़ता ही हुआ चलता. उससे आसानीसे लोग नहीं खेलते थे. उसके खेलको लोग जगली कहते थे. लेकिन फिर भी खेलते ही थे और बड़ी बड़ी रकमकी शर्त रक्खी जाती थी. सोमदेव जीतता और पैसा अपने हारे साथीके हकमे ही खर्च कर देता. लेकिन बड़े-बड़े टूर्नामेंटोंमें उसने कभी हिस्सा न लिया. लेता तो शतरंजकी दुनियांमें उसकी जगह बनी बनाई थी. वह कहता कि इन फिजूलियातके लिए न मुझमें तबीयत है, न चाह, न इज्जत. वह तो एक तरहकी बनी-बनाई सूझ मेरे पास है, यही समझो. एक तरहकी दिमागी खराबी ही उसे कहो. वैसे ही जैसे कुछ लोग खब्बे हुआ करते हैं, बाएं हाथसे ही काम कर सकते हैं. इस लिए इस खेलमें जीतनेके बारेमें मेरे दिलमें कोई व्यावसायिक सफलता का भाव नहीं है. न जीतने पर मनमें फख्र, न न जीतने पर जी में रंज मुझे होता है.

ऐसा यह सोमदेव था. उदार, लापरवाह, सक्षम और स्वच्छन्द,

श्रौर नेजरस था इसका सबसे घनिष्ट मित्र. मित्रता इन्हें सुबहसे रात तक श्रापसमें खूब लड़ने झगड़ने, नाम रखने, ताने कसने श्रौर गाली देनेमें बाधा नहीं बनती थी. परमात्मा जाने ये ज्योर्जियन प्रिन्स कहाँसे श्रौर कैसे रह लेता था. वह श्रपने बारेमें कहा करता था कि ऊँटकी तरह मैं कई हफ्तोंके लिए एक बार ही खा सकता हूँ श्रौर फिर महीने भर तक मुझे खानेकी जरूरत नहीं रहती. श्रपने घर ज्योर्जिया से उसे नाम भरको ही कुछ श्राता था. वह भी जिन्स की शक्ल में. क्रिसमसमें या ईस्टर की छुट्टियोंमें या श्रगस्तमें उसके ज़न्मदिनके रोज़ उसे श्रपने गाँवके श्रादमियोंके हाथों तरह-तरहका खाने का सामान ढेर-का-ढेर मिल जाता था. तब यह प्रिन्स श्रपने किसी साथीके स्थान पर (क्योंकि उसके पास कभी श्रपना रहनेको कोई कमरा होता ही न था) श्रपने सब दोस्तों श्रौर श्रपने तरफके लोगोंको बुलाकर वह शाही दावत देता कि श्राया सामान रत्ती-रत्ती उसी रोज खर्च हो जाता. ज्योर्जियन गीत गाये जाते, नाच होता, महफिल जमती, खूब बहार रहती श्रौर इस सबमें खुद नेजरस ही प्रधानता से भाग लेता. बात करनेमें वह एक ही था. गर्म हो श्राय तो एक मिनिटमें तीन सौ शब्द फर्राटे में बोल जाय. उसकी शैलीमें भाव बिखरे होते, श्रनुप्रासों की भरमार होती श्रौर विद्वत्ता से श्रोतप्रोत उसकी भाषा होती. पर वह कुछ भी कहे, कहीं से श्रारंभ करे, श्रंतमें वहीं श्रा पहुंचता था श्रपनी ज्योर्जिया की प्रशंसा पर. सर्व-सुंदर, वह शस्यदा, फलदा, वह श्रग्रणी, वही वीर प्रसूता, पर हाय, वह श्रभागिनी, दीना, हीना भूमि ज्योर्जिया! श्रौर श्रनिवार्य रूपमें ज्योर्जियन कवि इसाकेलाके एक गीतकी पंक्तियों से उसकी वक्तृताका उपसंहार होता. उसे निश्चय था कि तमाम शेक्सपीश्रर श्रौर तमाम होमरसे उसके ज्यार्जियन कविकी पंक्तियाँ ऊँची ही नहीं, कहीं-कहीं ऊँची हैं.

वह जरा चिड़चिड़ा श्रौर तेज़ मिजाज़ तो था पर मनमें उसके कीना न था श्रौर श्रपने व्यवहारमें वह रमणीकी भाँति कोमल, शिष्ट, सलज्ज श्रौर दिलचस्प था. हाँ, श्रपनी जन्मभूमिका गौरव हर जगह उसके साथ चलता था... ...बस एक बात थी जो उसके साथियोंको नापसंद

थी. वह, वामांगियों में उसकी लगन. स्त्रियोंकी ओर अवश, उत्कट, प्रवृति उसमें थी. उसमें अचल श्रद्धान था— ऐसा अचल कि उसे निरी जड़ता कहो, या अनुपम महिमा—कि रूपमें वह अजेय सुंदर है, कि सब आदमी उससे डाह करते हैं, कि संसारकी सब रमणियाँ उसके प्रेममें घुली पड़ती हैं और उन सबके पति उससे बेहद ईर्ष्या करते हैं. औरतों के सबंधमें उसका यह आत्मदंभ और स्वार्थवृत्ति उसे मिनट भरके लिए न छोड़ती थी. शायद नींदमें भी नहीं. सड़क पर चलते-चलते मिनट-मिनट में लखनपाल और सोमदेव को वह कोहनी मारता, और होठ चटका कर किसी पाससे निकली प्रमदाको दिखाकर गर्वसे उधर अपना सिर फेंक कर कहता, 'स्स्स्स···कहता', "वाह, बांकी औरत है. देखा, क्या निगाहसे मुझे देखती थी. चाहूँ, तो चुटकी बजातेमें वह मेरी है...".

उसकी यह उपहास्य कमज़ोरी सब पर विदित थी. सब खुल कर उसकी इस आदतका मज़ाक उड़ाते थे. लेकिन उसे इसके लिए क्षमा भी कर देते थे. किसीको दिये अपने वचनके निर्वाहमें वह पक्का था. कुछ हो, मित्रताका ऋण चुकाने और किसीके काम आनेसे वह विमुख न होता था. यह साहस और दृढ़ता की देन उसमें प्रकृतिदत्त थी. इससे उसे वह चरित्र की त्रुटि माफ थी. और कहना होगा कि औरतों के मामलेमें, दरअसल, वह खासा कामयाब था भी. टेलीफोन गर्ल्स, कोरस गर्ल्स, स्टोर में कामकरनेवालियाँ, सीनेवालियाँ, आदि-आदि, उसकी चमकीली नीली-नीली-आँखोंकी झपती-सी, गहरी मीठी स्निग्ध निगाह की टकटकी के तले कुछ खोई घुल-सी रहती थी.

"इस आश्रम के उन सब अधिवासियोंको जो निष्पाप और साधु-जीवन व्यतीत करते हैं..." "सोमदेव ने धर्माचार्य की भाँति बोलना आरम्भ किया और देखा बात बन नहीं रही है. कुछ झेंप और अचरजमें पड़ कर भी अपने असमाप्त परिहासको जारी रखनेकी कोशिशमें वह आगे भी बढ़ा, बोला, "उपस्थित महानुभावो—" पर सहसा उसके मुँहसे निकला,..."अरे···क्यों.... यह...यह तो सोनिया है...नहीं, मैं

भूला, मैंडिया...अरे नहीं-नहीं, हाँ, अन्नामरकानीकी लुवी...".

लुवी मारे लज्जाके गड़नेको हो गई. आँखोंमें आँसू भर आए और हथेलियों से उसने अपना मुँह ढँक लिया. लखनपालने यह देखा, इस लड़कीकी आत्माको मथने वाली क्रीड़ाको समझा और सहायता पर प्रस्तुत हुआ.

बिना लिहाज बीचमें ही सोमदेवको रोक कर बोला, "सही पहचाना, सोमदेव. ऐसे सही कि जैसे—किताब. यामकासवाली लुवी ही तो है. हाँ, पहले वेश्या थीं. पहले क्यों, कल तक वेश्या थीं—. लेकिन, आजसे मेरी साथिन हैं, मेरी बहना इसलिए जिसे मेरी इज्जत मंजूर है उसे इन्हें भी मानना होगा, इनका भी लिहाज रखना होगा. नहीं तो....".

भारी भरकम सोमदेवने झटपट खुले दिलसे लखनपालको कसकर आलिंगन में बाँध लिया. "बहुत ठीक है मेरे दोस्त. बिल्कुल सही, ऐन दुरुस्त. बस, बस. मुझसे जल्दीमें बेवकूफी हो गई. अब ऐसा न होगा. स्वागत बहन, स्वागत." कहनेके साथ उसने मेजके आरपार अपना हाथ बढ़ाया और कुतरे नन्हें नहोंवाली उसकी बारीक और छोटी अचेत-सी पड़ी लुवीकी उंगलियोंको पकड़ कर दबाया. "बड़ी खुशी है कि तुम हमारे इस बे सरोसामान और गरीब झोंपड़ेमें आई हो इससे हममें जिंदगी आएगी, और हम सलीका सीखेंगे. हममें अदब, इखलाक और इन्सानियत पैदा होगी. सिकन्दरा !" उसने चिल्लाकर कहा, "सिकन्दरा शराब···हम जंगली हो गए हैं. शराब में और काहिलीमें और, बकवास में, और तरह-तरह की खुराफात में दल-दलकी मानिंद हम फंसे हैं. वजह ? वजह यह कि हम महरूम हैं उसकी संगतसे जो हमारे बीच देवी हो. औरतोंकी सोहबतसे जो ताजगी, जबानी. जो तन्दुरुस्ती, और खुश-इखलाकी नीरोगता मिलती, हमें वह कहां मिली ! मैं फिर तुम्हारा हाथ दबाता हूँ, यह तुम्हारा सलौना खूबसूरत हाथ.······ऐ, शराब !"

"आ तो रही हूँ." दर्वाजेके दूसरी ओरसे सिकन्दरा की झनझनाती आवाज सुनाई दी, "आती तो हूँ, चिल्ला क्यों रहे हो? कितनी चाहिए?"

कितनी चाहिए यह बताने सोमदेव बरामदे की तरफ बढ़ा, कि

लखनपाल उसके प्रति कृतज्ञता पूर्वक मुस्कराया. यह देख जाते-जाते ज्योर्जियनने उसे कन्धे पर थपका कर धन्यवाद दिया. दोनोंने सोमदेव की इस, यद्यपि तनिक विलम्बित और सामान्य फिर भी, हार्दिक शालीनता को समझा.

लौटकर सोमदेव आया और सावधानीके साथ एक पुरानी कुर्सी पर बैठकर बोला, "अच्छा, अच्छा, अब कामकी बात हो. बताओ, मैं अभी तुम लोगोंकी क्या खिदमत कर सकता हूँ. आध घण्टे का वक्त दो तो जरा एक मिनट के लिये काफी हाउस की दौड़ लगा आऊँ. जो बढ़से बढ़ कर शतरंजका खिलाड़ी वहाँ होगा उन्हीं हजरतको दमभरमें खाली करके लौटता हूँ. यानी यों समझो कि सब तरह यह बंदा ताबेदार है और हाजिर है."

"आप तो खूब तमाशा आदमी हैं !" लुवी बोली. वह हंस रही थी और अपने आपमें विश्वस्त न थी. इस विद्यार्थीकी बातचीतकी शैलीको उसने पूरी तरह तो न समझा, पर कुछ था जिसने उसके अकृत्रिम हृदय को उसकी ओर सद्भावसे उन्मुख कर दिया.

"नहीं-नहीं, उसकी कुछ जरुरत नहीं," लखनपाल बीचमें बोला "पैसा तो अभी मेरे पास खजाने का खजाना है. मैं सोचता हूँ चलो, हम सब कहीं आसपास-खाने पीनेकी जगह चलें. मुझे कुछ चीजों के बारेमें तुम लोगोंसे जरुरी मशवरा भी करना है. तुम्हीं लोगों तक मेरी पहुंच है. और तुम लोग, ऊपरसे कुछ बनो और दीखो, मैं जानता हूँ, ऐसे मूरख और नातजुर्बेकार भी नहीं हो. उसके बाद मैं फिर इनके···इनके पास-पोर्टके बन्दोबस्त में लगूँगा. तुम इतने यहाँ ठहरना. बहुत देर न लगेगी... मुख्तसरन समझते तो हो कि इस सबके क्या मानी हैं ? और तुम अब फिजूल मजाकमें वक्त बरबाद न करना. मैं-मैं" उसकी आवाज भावातिरेक के कारण कांप गई, पर उसमें कहीं मिथ्याभावका संश्लेश भी न था. "मैं चाहता हूँ मेरी चिन्ताका कुछ भाग तुम लोग भी बांट लो. बोलो, पक्की ठहरती है ?"

"पक्की, बिल्कुल पक्की," प्रिन्सने कहा और अकारण, पर सकारण,

उसने लुवीकी तरफ देखा और उसके हाथ मूछोंके सिरे ऊपरी मरोड़ने लगे. लखनपालने आखोंके किनारोंसे उसे देखा. सोमदेवने साफदिलीसे कहा "सही बात है. तुमने कुछ भारी जिम्मेवरी उठा ली है. प्रिन्सने रात मुझे उसके बारे में बताया था. मैं कहता हूँ, तारुण्य क्या है ? अगर हम कोई इस तरहकी पवित्र मूर्खता नहीं कर सकते तो हम तरुण क्यों हैं ? इधर लाओ बोतल, सिकन्दरा. नही मैं खुद खोल लूँगा. तुम अपने कहीं मार न लो ··एक नवीन जीवनकी ओर–लुवी, क्षमा करना, क्या, ल्यूब··· ल्यूबोब ?···".

"निकोनवना. पर जो कहते हो, वही ठीक है, काफी है···लुवी ही कहो."

"अच्छा, हाँ लुवी. प्रिन्स अल्लावर्दी".

"वाह बहादुर", नेजरसने उत्तर दिया और अपने भरे गिलासको उसके साथ बजाया.

"और मैं यह भी कहूँगा, मित्र लखनपाल, कि तुम्हारे प्रति भी हम कृतज्ञ हैं, आभारी हैं, आनन्दित हैं". सोमदेवने गिलास मेज पर रखकर और मूछों पर जीभ फिराकर कहना जारी रक्खा "आनन्दित हैं और तुम्हारे सामने नतमस्तक हैं. तुम, तुम्हीं अकेले हो जो इस सच्ची रशियन उत्सर्ग वृत्तिको, आदर्शवादको, इस तरह सीधे सादे ढंग से, बिना शर्त, बिना दंभ, बिना प्रशंसा, यों कार्यमें परिणत कर सकते हो—".

"छोड़ो, छोड़ो....बलिदान उत्सर्ग की भला क्या बात है ?" लखनपालने खट्टा मुँह बना कर कहा.

"ठीक तो है" नेजरसने कहा,"तुम मुझे हमेशा कहते हो कि मैं बहुत बोलता हूँ. अब देखो, तुम्हीं कैसी बढ़-चढ़ कर हाँक रहे हो".

"अँह, सो क्यों ? इससे कोई फर्क नहीं पड़ता", सोमदेवने उत्तर दिया."शब्द बहुत शानदा रहें भी तो उससे फर्क क्या पड़ता है. अपने इस दरिद्रावासके संघके सबसे वयप्राप्त सदस्यकी हैसियतसे मैं घोषित करता हूँ कि लुवी अबसे पूर्ण अधिकारोंके साथ उसकी एक प्रतिष्ठित सदस्या है". वह खड़ा हो गया, हाथको दूरतक हवामें तैराया और भाव भरे

स्वरमें दुहराया—

> और आओ सुंदरी,
> मुक्त और निर्भय,
> घर तुम्हारा है,
> तुम्हारे स्वागत में प्रस्तुत.
> आओ—अंदर आओ.

लिखोनिनने भली भाँति याद किया कि आज ही सबेरे इसी पद्यको एक अभिनेताकी भाँति उसने भी दोहराया था और उसकी आँखें शर्मसे झिप आईं.

"बस-बस, तमाशा बहुत हुआ. हमें अब चलना चाहिए. कपड़े पहन लो, लुबी".

१४

रेस्ट्राँ 'स्पेरोज' वहाँसे दूर न था. यही कोई दो सौ कदम होगा. राहमें लुबाने औरोंके अनदेखे लखनपालके कोटकी आस्तीन पकड़कर अपनी तरफ खींचा. इस तरह जरा यह दोनों पीछे रह गए और सोमदेव और नेजरस आगे बढ़ गए. उसने अपनी काली प्रश्नवाचक आखें लखनपाल की ओर उठाकर करुण और अविश्वस्त भावसे पूछा, "तो प्यारे, तुम्हारा क्या सचमुच यह मतलब है, और तुम सचमुच मेरे साथ मजाक नहीं कर रहे हो ?"

"मजाककी बात क्या करती हो, लुबी. अगर मैं ऐसी मजाक करूँ तो मुझसे नीच आदमी और कौन होगा ? मैं फिर कहता हूँ, अपने मित्र भाई और अभिभावक से भी अधिक मुझे मानो. और छोड़ो, इन बातों को अब मत उठाओ. और जो आज सबेरे हममें हो गया है, तुम विश्वास मानो, अब फिर कभी न होगा, और मैं आज ही तुम्हारे लिए एक दूसरा मकान किराए ले लूँगा."

लुबी आह भर कर रह गई. यह नहीं कि लखनपालके इस पवित्र

संकल्प पर उसे शोक था. और सच तो यह है कि उसकी इस बातमें उसे कुछ कच्चा-पक्का सा ही भरोसा था. पर बात यह थी कि उसका अन्धेरा, संकीर्ण दिमाग किसी तरह भी पुरुष और स्त्रीके मध्य इन्द्रिय-विषयके सम्बन्धके अतिरिक्त कोई और सम्बन्धकी कल्पना तक नहीं कर सकता था. फिर, जिसका प्रेम स्वीकृति नहीं पा सका है वह, और जिसका प्रेम परिणय-बद्ध हो गया है वह भी, इन दोनों प्रकारकी स्त्रियोंमें जो सनातन भावसे एक असन्तोष विद्यमान रहता है वह भी इसमें था. यही असन्तोष जो अन्नामरकानीके यहाँ प्रमदाओंकी आपसकी चढ़ा बढ़ी और प्रति-स्पर्धा के रूपमें प्रगट होता था, अब जरा मद्धम पड़ गया था. वही यहाँ अब छिड़कर उत्तप्त हो गया. किसी अज्ञात प्रेरणासे लखनपालके शब्दोंमें उसे पूरी तरह विश्वास नहीं जमता था. उन शब्दोंमें जो कहीं असत् मिथ्या दंभका आभास था मानो अनायास वही उसके दुर्लक्ष्यकी पकड़में पड़ता था. जो कहीं सोमदेव होता तो उसके शब्दोंका लुबीको ज्यादा भरोसा हो सकता. यों तो सभी लड़के आपसमें, या स्त्रियोंको पास पाकर, या होटल और रेस्ट्राँके किसी कमरेमें इकट्ठे होकर एकसी ही अनर्गल सच-झूठ कहते, दूनकी हांकते और वैसाही व्यवहार करते थे. फिरभी सोमदेवका विश्वास वह कहीं आसानी और रजामन्दीके साथ कर सकी थी. चेहरे पर दूर-दूर लगी उसकी चमकीली भूरी आंखोंमें कुछ एक ऐसा ही निश्छल आनन्दका भाव खेलता रहता था.

'स्पेरोज' में लखनपाल अपनी नेकनीयती, भलमनसाहत, और जिम्मेदारीके एहसासके लिए माना जाता था. पैसेके मामलेमें उसकी बेदाग ईमानदारी का यहाँ सिक्का था. इसलिए आते ही अलहदा एक खास कमरा उसे दे दिया गया. लड़कोंमें बहुत कम थे जिनका ऐसा लिहाज वहां रक्खा जाता हो. इस कमरेमें दिनभर बत्ती जलती रहती थी, क्यों कि वहां रोशनी आनेका दूसरा मार्ग बस एक छोटी नीची खिड़की थी. वहाँसे बाहर चलते लोगोंके जूते, छतरियां या छड़ियां दीखा करती थीं.

अपनेमें उन्हें एक और विद्यार्थी सोम वास्तीको भी शामिल करना पड़ा. बाहरके कमरे में अचानक इन लोगोंकी उससे मुठभेड़ हो गई थी.

लुवीने सोचा, यह मुझे जैसे तमाशा-सा बनाकर लिए डोल रहे हैं. इसमें इनका मतलब क्या है ? मालूम होता है अपने को जरा दिखाना भी चाहते हैं. और अवकाश पाकर लखनपालके कानमें उसने कहा, "लेकिन प्यारे, यह इतने सारे और लोग यहाँ किस लिए है मुझे लाज आती है. इतने लोगोंके सामने मैं कैसे बैठूँ ?"

"ओह, यह कुछ नहीं, कोई बात नहीं. मेरी प्यारी लुवी" कमरेके दरवाजे पर ठिठक कर जल्दी-जल्दी लखनपालने उससे कहा, "कोई बात नहीं, मेरी प्यारी बहन. ये सब नेक आदमी हैं, मेरे अन्तरंग साथी हैं. वे तुम्हारी मदद करेंगे, हम दोनोंकी मदद करेंगे. कभी-कभी यह मजाक करें या कुछ अनकहनी कहें या डींगकी हाँकें तो बुरा न मानना. दिल उनका खरा सोना है, सोना".

"लेकिन यह मुझे अजब लगता है. मुझे तो शर्म आती है. और ये सब जानते हैं कि तुम मुझे कहाँ से लाए हो".

"ओह सो क्या बात है. कोई बात नहीं. जानते हैं तो जानने दो" लखनपालने स्निग्ध भावसे उत्तर दिया, "अपने अतीतसे घबराओ क्यों? उससे चुप-चाप बचकर चलना क्यों चाहो ? साल भरमें तुम देखोगी कि हिम्मतके साथ हर एक आदमीकी आँखोंमें सीधे भरपूर देखकर तुम कह सकती हो, जो गिरता है वही उठता है. गिरा नहीं वह कब उठा है ? आओ, लुवी आओ".

जब छोटी-मोटी यों ही शुरूआतकी चीजें मेज पर परसी जा रहीं थीं और हर कोई कुछ-न-कुछ फरमायश पेश कर रहा था, तब सोम वास्ती को छोड़कर और सब अन्दर ही अन्दर कुछ संकोचमें थे, प्रकृतिस्थ न थे. और सोम वास्ती ही किसी कदर उसकी वजह था. वह हमेशा क्लीन शेव्ड रहता था; बड़ी उठी लाल नाक पर पिंसनेज, सिर सतर और ज़रा पीछेको फिंका हुआ, और बन्द ओठोंके किनारे पर गंभीर उपेक्षाकी छाप. अपने साथियोंमें उसका कोई बेतकल्लुफ, हार्दिक और अन्तरंग मित्र न था. उसकी बात का वजन था और राय का महत्त्व. उसकी एक धाक थी. इसमें सन्देह था कि उनमेंसे कोई बता सकता था कि इस

धाकका कारण क्या है. जो और लोग चाहते और मानते हैं पर स्पष्ट नहीं कर पाते, उसीको रूप और शब्द देकर सामने रख देनेकी क्षमताके कारण यह बात थी, या इस वजहसे कि वह अपनी बातोंको ठीक उप-युक्त अवसरके लिए बचा छोड़ता था—यह कोई ठीक न जानता था. किसी भी सोसाइटीमें इस तरहके बहुत लोग मिलेंगे. कोई उनमें अपनी दोहरी, अहंपूर्ण आदतों से अपना असर पैदा कर लेते हैं, कुछ अपनी बात पर ज़िद करके; कुछ केवल ज़ोरसे डपट कर बोलनेकी वजहसे ही; चौथे औरोंको नीचे गिराकर और सबको बुरा भला कह कर; पाँचवें, सिर्फ मौनसे, जिसके पीछे लोग समझते हों, जाने कितना प्रौढ़ चिन्तन है; छठे वाचाल मुखर पांडित्य दिखा कर; कोई तीखी, विषैली जीभ से; और कुछ और अपने विरोधीकी बातों को उपेक्षापूर्ण क्लिष्ट मुस्कुराहट से टाल देनेकी आदतके कारण...कुछ लोग अपनी कार्यसिद्धि उस राह से करते हैं जिसमें घृणा ही अस्त्र है और उसकी व्यंजना ही भाषा है. कोई बात हो, वह अत्यन्त अनादर उपेक्षा पूर्वक उत्तर देंगे, 'अँह!' बात सच्ची हो, सही हो, सीधी हो, वह कहेंगे, 'ऊँह'. क्यों भई, यह 'अँह क्यों?' वह कन्धे उचका कर कहेंगे 'वह भी कुछ बात है? वाहियात, निकम्मी, अँह ! वाहियात निकम्मी शि:.'जैसे कि वह यह 'अँह' का गुम्मा पत्थर किसीके सिर पर देकर मारते हैं, तो उस पर बड़ा एहसान करते हैं. और भी इस तरहके बहुतसे लोग हैं जो विनयशील, संकोचशील निरभिमानी और कभी-कभी महान् विचारशील लोगों पर भी अपना बड़प्पन जमाये हुए समाजमें दिखाई देते हैं. इन्हींमेंसे एक सोम वास्ती था.

तो भी खाते-पीते संकोच कम हुआ और सबकी जबानें खुल गईं.बस लुवी ही चुप थी. 'हां' और 'ना' से अधिक वह कुछ न बोलती थी. और उसके सामनेका खाना ज्योंका त्यों पड़ा था. लखनपाल, सोमदेव, नेजरस सबसे ज्यादा बोल रहे थे. लखनपाल'निर्णायक भावमें काम-काजी आदमी जैसी बात कर रहा था. भीतरमें क्लेश देता हुआ, नुकीला वास्तव कुछ और था,जिसे शिष्ट और लच्छेनुमा शब्दोंसे वह मानो ढकनेकी चेष्टा कर रहा था. सोमदेव उत्सुक प्रसन्नतासे, पुष्कल अंग संचालनपूर्वक मेजको

मुक्कोंसे मार मार कर प्रतिपादन कर रहा था, और नेजरस जरा दुविधासे, मानो जानता तो है पर कहता नहीं, कहनेका मौका नहीं समझता, इस तरह रुक-रुक कर थम-थम कर बात कर रहा था. उस लड़कीके अनोखे भाग्य और उसके भविष्यके चिंतनको लेकर ये सब लोग व्यस्त और विवादग्रस्त थे. हर कोई अपनी बात कहते-कहते जाने किस कारण अनिवार्यरूपमें सहमति पानेकी आशासे सोम वास्तीकी तरफ मुखातिब होता था. पर, अपनी नाक पर चढ़ी पिसनेजमेंसे उन्हें एक-एकको देखकर वह अधिकतर मितभाषी ही बना रहता था, बोलता न था.

"सो-सो, सो" मेजको अपनी उंगलियों से बजाता हुआ, आखिरकार वह बोला, "लखनपालने जो किया उज्ज्वल है, आदरणीय, साहसपूर्ण. यह कि सोमदेव और प्रिंस हाथ बढ़ाकर उसमें मदद देंगे,यह भी धन्यवाद की बात है. आप जो करें उसके लिए अपनी ओरसे भी मैं अपना उद्यत सहयोग सहर्ष प्रस्तुत करता हूं. जितना बनेगा मैं साथ हूं. लेकिन क्या यह अच्छा न होगा कि अपनी सखा, इस रमणीको अपने प्रकृतिदत्त झुकाव और अपनी क्षमताके अनुरूप मार्ग पर हम चलने देवें और चलावें." लुवीकी ओर मुड़कर उसने कहा, "अच्छा, बताओ तो, तुम क्या-क्या जानती हो, क्या-क्या कर सकती हो. कोई किसी तरहका काम. सीना, पिरोना, बुनना, कुछ काढ़ना, या और कुछ ?"

"मैं कहां कुछ जानती हूं," लुवीने ओठों ओठों में कहा. उसकी आंखें नीचे झुक गईं. तमाम देहमें वह लाल पड़ गई. मेजके नीचे अपनी उंगलियोंको एक दूसरेमें उलझाकर उन्हें मलती हुई बोली, "मुझे आपकी बात समझ नहीं आ रही है."

"हाँ, ठीक तो है," लखनपालने बीचमें पड़कर कहा,"हमने ही बात ठीक तरहसे नहीं उठाई. उसकी उपस्थितिमें उसके सम्बन्धमें चर्चा चला कर हम उसे संकोचमें डालते हैं. देखो न, घबराहट में उसकी जबान नहीं खुलती. आओ, लुवी, मैं तुम्हें थोड़ी देरके लिए घर ले चलूं. वहांसे दस मिनटमें लौट आना. इधर हम तुम्हारे पीछे सोचे-साचेंगे कि कैसे करना, क्या करना. ठीक है न ?"

बहुत धीमेसे लुवीने कहा, "पूछते हो तो मैं अपने बारेमें कुछ नहीं जानती. जो तुम कहोगे, लखन, वही मैं करूंगी. पर मैं घर नहीं जाना चाहती."

"क्यों ? सो क्यों ?"

"अकेले वहाँ अच्छा नहीं लगता. अच्छा, इसमें तो कुछ हर्ज नहीं है कि मैं वहां बांधके पास दरवाजेमें पड़ी बेंचपर जाकर बैठ जाऊं. वहां मैं तुम्हारा इंतजार करूंगी."

"ओ हां, हां." लखनपालने सोचा, "सिकन्दराका, मालूम होता है, उसे डर बैठ गया है. चलकर मैं उस बुढ़ियाकी खबर लूंगा." कहा, "अच्छा, चलो लुवी."

कातर संकुचित लुवीने ज्यों त्यों अपना हाथ एक-एक करके सबकी ओर बढ़ाया और फिर लखनपालका हाथ थामकर चल पड़ी.

कुछ मिनटों में वह लौटकर आ गया और अपनी जगह बैठ गया. उसे अनुभव हुआ कि उसके पीछे उसके बारेमें कुछ बातचीत हुई है और उसने संदिग्ध दृष्टिसे अपने साथियोंके चेहरे पर निगाह घुमाई. तब फिर मेजपर हाथ रखकर उसने कहना शुरू किया, "दोस्तो मैं जानता हूं आप सब मेरे भलेके और मेरे अंतरंगके मित्र हैं." उसने एक निगाह सोम-वास्तीको देखा, "और कामके समय विमुख होनेवाले नहीं हैं. मैं दिलसे चाहता हूं कि आप इस वक्त मेरी मददको आएं. यह काम मैं कहूंगा, मुझसे जल्दीमें हो गया सही, लेकिन हृदयकी सत्य और पवित्र प्रेरणाके वशवर्ती होकर ही मैंने किया है."

"और यही मुख्य बात है," सोमदेवने बीचमें कहा.

"मेरे लिए सब एक जैसा है कि मेरे बारेमें अजनबी क्या कहते फिरते हैं, या परिचित लोग क्या चर्चा करते हैं. लेकिन, जो मेरा इरादा है, यह कि मैं एक पतित प्राणीको बचाऊँ—ओह इस दंभके शब्दके लिए मुझे क्षमा कीजिए, जो यों ही निकल गया—नहीं बचाना नहीं, इस लड़कीको सान्त्वना दूं, उत्साह दूँ, मौका दूँ. इस अपने इरादेसे मैं इंकार नहीं कर सकता, उससे विमुख नहीं हो सकता. हाँ, उसके लिए,

एक छोटासा मंदी लागतका कमरा अलग किराये ले दूँ, शुरूमें खाने-पीनेके लिए उसका बन्दोबस्त कर दूँ. यह में कर सकता हूँ. लेकिन आगे क्या होगा ?. यह सवाल है जहाँ दिक्कत आती है. बात दर असल पैसेकी उतनी नहीं है. पैसा तो हमेशा में उसके लिए कुछ न-कुछ जुटा ही सकता हूँ. लेकिन उसे लाचार करना कि वह खाए भी, पीए भी, रहे भी फिर भी कुछ न करे, यह तो उसे काहिल, सूने, निरानन्द और उपेक्षणीय हीन जीवनमें पटक देना होगा. और आप लोग यह भी जानते हैं कि इसका अन्तमें परिणाम क्या होगा. इसलिए हमें उसके लिए कुछ-न-कुछ काम ढूंढ लेना चाहिए और यही बात है कि जिसपर हमें सोचने की जरूरत है. आप लोग कोशिश कीजिये, कुछ सोचिये, सलाह दीजिए."

सोम वास्तीने कहा, "हमें पहले मालूम होना चाहिए कि वह किस कामके लायक है ! आखिर चकलेमें जानेसे पहले वह कुछ तो करती ही होगी".

निराश भावसे हाथ फैलाकर लखनपाल रह गया, कहा,"—यही समझिये कि कुछ भी नहीं. एक देहाती अपढ़ लड़कीकी तरह कपड़ोंमें दो-एक टांके बस लगा सकती है. अजी, वह पन्द्रह बरसकी तो थी ही जब उसे सरकारी मुलाजिमने ले बिगाड़ा. वह कमरा बुहार सकती है. कुछ धो माँज देगी. बहुत कहो, कुछ राँध वाँध लेगी. ज्यादा तो कुछ नहीं जानती मैं समझता हूँ".

"इतना तो कुछ नहीं है..." सोम वास्तीने कहा और जीभ टिटकाई. "और तिसपर वह एकदम अपढ़".

सोमदेवने पक्ष लेकर कहा, "लेकिन पढ़ना लिखना कोई बिल्कुल जरूरी बात तो नहीं है. अगर इसकी जगह कोई अच्छी पढ़ी लिखी होती या परमात्मा न करे कोई आधी पढ़ी होती, तब जो कुछ हम करनेकी सोच रहे हैं उसका कुछ फल न निकलता, साबुनके बबूलेकी तरह सब फूट जाता. और अब हमारे सामने अछूती बिन-बोई धरती की तरह क्वारी लड़की है".

"ही-ई-ई..." नेजरसने द्विविध भावसे हिनहिना दिया.

इस बार निरे मज़ाकमें नहीं, सत्संकल्पसे भरा हुआ सोमदेव यह बात कह रहा था. सच्चे गुस्सेमें झल्ला कर वह नेजरसपर टूट कर पड़ा, "सुनो प्रिन्स, हर चीज़ तुम बुरी बना सकते हो. हर पवित्र विचार, हर नए विचारका मज़ाक उड़ सकता है. उसे उपहास्य, उसे लांछनीय बनाया जा सकता है इसमें देर नहीं लगती. न यह कुछ बहुत चतुराईकी बात है. न इसमें बड़प्पन है. जो हम करने जा रहे हैं, अगर तुम उसे इसी गधेकी तरह समझ सकते हो तो जाओ, वह दरवाजा है. खुदा तुम्हारी खैर करे, हमसे दूर हो, जाओ".

अप्रतिभ होकर प्रिन्स बोला,—"और—और अभी हाल तुमने जो उस कमरेमें......",

"हाँ, मैंने भी" सोमदेव एकदम ठण्डा और मुलायम पड़ गया. "मैंने भी बेवकूफी की और मुझे अफसोस है. लेकिन अब,—मैं सहर्ष यह मानता हूँ कि लखनवीर आदमी है; बहादुर आदमी है, नेक आदमी है. और मैं अपनी तरफसे जो बने उसकी सहायता करनेको तैयार हूँ. और मैं फिर कहता हूँ, पढ़ना-लिखना गौण बात है. यह तो खेल-खेलमें आ जाता है और इस लड़कीके जैसे अविकृत मस्तिष्क व्यक्तिके लिए पढ़ना-लिखना और गिनती सीखना, और खास कर ऐसी हालतमें जब स्कूलकी पाबन्दी नहीं अपनी निजकी प्रेरणा ही अवलंब हो, ऐसा सहल है जैसा-जैसा कि एक चिकनी सुपारीको दाँतसे तोड़ कर दो कर देना. और दस्तकारीकी जो बात है, ऐसा कोई काम जिससे आदमीका गुजारा चल जाए और जीवन संभव हो जाए, सो क्या, सैंकड़ों छोटे-मोटे ऐसे व्यवसाय हैं जो दो हफ्तेमें अच्छी तरह सीख लिये जा सकते हैं.

"जैसे—?" प्रिन्सने पूछा.

"जैसे......जैसे ...जैसे यही समझो, नकली फूल बनाना. या इससे आगे, फिर—जैसे कहीं फूलवालेके यहाँ क्लर्कीका काम. क्या खूब काम है. साफ और सुथरा".

"इसके लिए टेस्ट चाहिए", सोमदेवने लापरवाहीसे कहा.

"टेस्ट कोई पैदा होते ही नहीं आ जाता. न कोई योग्यता जन्मसे हो जाती है. ऐसा हो, तो काबलीयत और प्रतिभा बस कुलीन और बड़े घरानोंमें ही हुआ करे. आर्टिस्ट फिर आर्टिस्ट कुटुम्ब-मेंसे ही हों, गायक गायकोंमेंसे. लेकिन ऐसा देखनेमें नहीं आता. खैर, मैं विवाद नहीं करूँगा. न फूलका सही और काम सही. जैसे अभी कुछ दिन हुए, जाते-जाते एक स्टोरकी बाहर की खिड़कीमेंसे मैंने देखा—कि एक मिस बैठी सामने मशीन रक्खे उसे पैरोंसे चला रही है—".

"वाह, फिर वही तुम्हारी मशीन आ गई" हंसकर लखनपालकी ओर देखकर प्रिन्सने कहा.

"चुप करो, नेजरस" संयत किन्तु दृढ़ भावसे लखनपालने उत्तर दिया, "तुम्हें शर्म आनी चाहिए".

'गधा !' सोमदेवने उसकी तरफ मानो फेंककर यह कहा और कहना जारी रखा "हाँ तो मशीन फिरती थी; आगे पीछे होती थी. उसके नीचे एक चौखूटा फ्रेम बिछा था जिसमें कपड़ा तना हुआ फैला था. मालूम नहीं कैसे क्या हो जाता था, मैं उसे ठीक तरह नहीं समझ पाया वह ऊपर चुटकीमें लोहेकी जाने क्या चीज पकड़े, जाने किस-किस तरह घुमाती थी कि नीचे रेशमी कपड़े पर वह रंग बिरंगी कढ़ाई खिंच आती कि वाह ! सोचो तो जरा देरमें देखते-देखते उस कपड़ेपर एक नीली झील ऊपर तैर आती है ! उस झीलमें फिर नीलोफरके फूल लहर रहे हैं और लाल कमल. और भी तरह-तरहके फूल खिले हैं. चारों तरफ पेड़ हैं, घास है, बनस्पति है. और झीलकी छातीपर दो सफेद हंस एक दूसरेकी ओर तैरते हुए बढ़ रहे हैं. और झीलके पीछे वह एक हरियाली घनी पाँतकी सड़क भी दीख रही है. और यह सब कुछ ऐसा-ऐसा बना है कि सच्ची जीती तस्वीर ही हो. मुझे उसमें ऐसी दिलचस्पी हुई कि मैंने भीतर जाकर पूछा, इसके दाम क्या हैं. और दाम कुछ भी खास ज्यादा न निकले. मामूली सीनेकी मशीनसे बस कुछ ही ज्यादा और वह किस्तों पर अदा कर सकते हो. और उसका सीखना भी कुछ नहीं, जो सीनेकी मशीन चलाना जाने, एक घण्टेमें इसे भी सीख सकता है. जनाब,

जितने चाहें एक-से-एक खुशनुमा डिजाइन आप उससे निकाल लीजिए. और सबसे बढ़ कर बात तो यह कि इस काम की माँग खूब है. परदों पर, रुमालोंपर, लेम्पके शेडोंपर, और इसी तरहकी चीजोंपर ये डिजाइन खूब ही फबते हैं और इस काममें उजरत भी खासी मिलती है."

"हाँ, वह भी है," लखनपालने सहमत होकर कह दिया और चिन्ता पूर्वक अपनी दाढ़ी खुजलाई. "लेकिन, अपनी कहूँ तो मैं कुछ और सोचता था. मैं उसके लिए एक ·· एक छोटी-सी दुकान खोलना चाहता था. एक उपहार गृह, काफे, एक ढाबा-सा. पहले पहल बहुत छोटा-सा हो. उसमें खाना सफाईसे मिले और सस्ता और बढ़िया, क्योंकि इससे लड़कोंको कुछ मतलब नहीं रहता कि वे कहां खाते हैं, क्या खाते हैं. और अक्सर लड़कोंके खानेकी जगह आजकल इतनी भरी मिलती है कि वहां चलना-फिरना तक दूभर होता है. इस लिए मैं समझता हूं अपने दोस्तों और साथियोंको सबको यहां खींचकर बुला लानेमें कोई मुश्किल हमें न होगी."

"है तो ठीक, पर," प्रिन्सने कहा, "अव्यवहारिक भी है. शुरूसे हमें उधार खाता खोलना पड़ेगा और जैसे भले कर्ज अदा करने वाले हम लोग हैं, तुम जानते ही हो. एक पक्का दुनियादार आदमी, अजी एक धूर्त ही ऐसे कामके लिए चाहिए. और अगर औरत हो तो ऐसी चाहिए कि जिसके दांत लोहेके हों. और फिर उसकी निगरानीके लिए एक आदमी ऊपरसे और भी चाहिए. सचमुच लखनपालके बसकी यह बात नहीं है कि वह काउन्टर पर खड़ा देखता रहे कि खूब छक-पीकर कोई आदमी बिना पैसा दिए तो कहीं नहीं खिसका जा रहा है ?"

लखनपालने रोषपूर्वक सीधे उसकी तरफ देखा, पर मुंह भींचकर और चुप थामकर रह गया.

सोम वास्तीने अपनी तुली और नपी आवाजमें उँगलियोंसे पिन्सनेज के शीशोंसे खेलते हुए कहा, "सज्जनों, आपका संकल्प शुभ है. निर्विवाद प्रशंसनीय है. लेकिन आपको प्रश्नके दूसरे, कहिये कि तनिक कम उजले पहलूपर भी ध्यान देना होगा. क्योंकि ढाबा, खोलना या और कोई काम

शुरू करना, इन सबमें पहले पैसेकी जरूरत है. और मददकी यानी बाहरी मददकी भी जरूरत है. पैसेपर हम लोग हाथ नहीं भींचते, यह ठीक है. मैं वहां लखनपालसे सहमत हूँ और उन्हें धन्यवाद दूंगा. लेकिन इस प्रकारके व्यवसायिक जीवनके आरम्भसे कि जब हर पगपर सब कुछ करा-कराया मिल जाता है, ऐसे आरम्भसे अन्तमें एक प्रकारकी अनिवार्य शिथिलता, लापरवाही, और पीछे जाकर काम धन्धेंके प्रति ही उपेक्षाका भाव तो व्यक्तिमें नहीं आ जायगा ? पचासों बार गिरे बिना बच्चा भी चलना नहीं सीखता. नहीं, अगर आप इस बेचारी लड़कीकी सचमुच सहायता करना चाहते हैं, तो आपको चाहिए कि उसे मौका दें कि वह अपने पैरों खड़ी हो. अपने उद्यमके बल वह बढ़े. रानी मधुमक्खीकी तरह रानीगिरी सिखानेमें उसका हित नहीं. मानता हूँ, प्रलोभन यहां बहुत है, परिश्रमका बोझ है, फौरी जरूरत है. और भी दस बात. लेकिन अगर वह उन्हें पार कर जायगी तो बाकी सब भी पार है.

"तो आपके लिहाजसे उसे क्या बनना चाहिए ?—बरतन माँजने वाली नौकरनी ?" अविश्वस्त सोमदेवने पूछा.

"हां, वह भी मुस्तकिल," सोम वास्तीने जबाब दिया. "मांजने वाली, धोनेवाली, खाना पकाने वाली, या और कुछ. सब श्रम मनुष्यको ऊँचा उठाता है."

लखनपालने अपना सिर उठाया,"सोनेके शब्द हैं तुम्हारे सोम वास्ती, सोनेके. स्वयं बृहस्पति तुम्हारे मुंहसे बोलते हैं. कहारिन, रसोईदारिन, नोकरानी, जो कहो···लेकिन पहली बात यह है कि इसीमें शक है कि क्या वह इस सबके लायक भी है ? दूसरे नौकरानी वह पहले भी रह चुकी है. तब दरवाजोंकी ओटमें और जीनोंके कोनोंमें या अकेले सुनसान में वह मालिकके कृपा-कटाक्ष और छेड़-छाड़ भी चख चुकी है. मुझे बताओ कि क्या यह मुमकिन है कि आपको नहीं मालूम कि नव्वे फी सदी वेश्यायें इन्हीं नोकरानियोंमें से बनती हैं ? इस तरह तो यह बेचारी ल्यूबा फिर पहलेके जैसे अन्याय और बलात्कारको भुगत कर, अगर कुछ उससे भी बदतर न बना तो आसानी और तैयारीके साथ वहीं पहुँच

जायगी, जहाँसे बाहर निकालकर उसे मैं अभी लाया हूँ. क्योंकि वह उसकी आदी हो गई है और वहाँका आतंक उसे नहीं है. और कौन जानता है मालिकके निपट दुर्व्यवहारके बाद चकला उसके लिए वांछनीय ही न होगा. इसके अलावा मैं पूछूँ कि इसमें कुछ भलाई है ? मतलब है ? एक गुलामीमें से निकलनेके बाद अगर किसी दूसरीमें ही उसे पटक देना है, तो मैं पूछना चाहता हूँ कि मेरे और हम सबके तकलीफ उठानेमें मतलब ? यहां हमारे सोचने विचारने और चिंचित होनेका अर्थ ? क्यों न हम सबको धता बताएं, यही बात तो हुई न ?"

"ठीक कहा"

सोमदेवने समर्थन किया.

सोम वास्तीने उपेक्षाकी जमुहाई ली और कहा,"–तो जैसा आप लोग चाहें".

"तो जहाँ तक मेरी बात है", प्रिन्स बोला "मैं दोस्त हूँ. और मुझे नया सब कुछ अच्छा लगता है. इससे इस प्रयोगमें सहायताके लिए मुझे प्रस्तुत समझें. मै जरूर शामिल होनेको तैयार हूँ. लेकिन जैसे आज सबेरे भी मैने कहा, मैं कहता हूँ कि ऐसे तजुर्बे पहले भी हुए हैं और सब बुरी तरह नाकाम रहे हैं. कम-से-कम वे तो नाकाम रहे ही जिन्हें हम जानते हैं. और जिनके बारेमें सुन कर जानते हैं, उनकी सफलता भी सन्दिग्ध है और प्रामाणिकता भी सन्दिग्ध है. लेकिन जब तुमने काम उठाया है—तो जरूर चलो और आगे बढ़ो. हम तुम्हारे साथ होंगे".

लखनपालने ज़ोरसे अपना खुला हाथ मेज़ पर पटका, "नहीं" उसने ज़िदसे कहा, "सोम वास्तीकी बातमें सचाई भी है. किसीकी गर्दनमें रस्सी डाल कर लिए चलनेमें बड़ा खतरा भी है. लेकिन मुझे और राह भी नहीं दीखती. शुरूमें मैं उसके लिए कमरे और खानेका बन्दोबस्त तो कर दूँगा और...और कोई आसानसा काम भी तलाश कर दूँगा. फिर हो जो होना हो. तब हमें धीरे-धीरे उसकी बुद्धिके विकासमें अपना हिस्सा लेना होगा. उसका हृदय सुन्दर है, आत्मा स्वच्छ. इसका मुझे निश्चय है. फतवा तो मैं इस बारेमें क्या दे सकता हूँ, लेकिन उस विषय

में मनमें मेरे बिल्कुल शक नहीं है. कह लो, मैं यह जानता हूँ. नेजरस भाँड़पन न करो" एकाएक पीला पड़कर उसने चिल्ला कर कहा, "मैं तुम्हारी बेहूदा हरकतोंपर कई बार तरह दे गया हूँ. गुस्सा आया है, पर जब्त करके रह गया हूँ. मैंने अब तक तुम्हें एक वैसा आदमी समझा जिसमें एहसास है, दिल है, अब कुछ बेजा मजाक तुमने की, तो, तुम्हारे बारेमें मुझे अपनी राय बदलनी होगी. और समझ लो कि हमेशा के लिए मेरी राय बुरी हो जायगी".

"क्यों ? मैंने क्या किया ? मेरा मतलब यह नहीं था, सच. . और मेरे यार, एकदम ऐसे चहकते क्यों हो ? तुम नहीं अगर पसन्द करते कि मैं हमेशा खुशदिल-परशाद बना रहूँ, तो लो मैं चुप हूँ. लाओ लखन, इसी बातपर अपना हाथ. आओ पीएं'.

"अच्छा, अच्छा. अब ठीक है. नहीं-नहीं, तुम वहाँ दूर ठीक हो. लो, यह तुम्हारी तन्दुरुस्तीके नामपर. बस, यह शरारती बच्चेकी सी आदत छोड़ो. सुना न, औंधे बैल ! अच्छा तो मैं क्या कह रहा था, सज्जनो ? अगर हम लोग कोई ऐसा काम पा सकें जिससे परिश्रमके सन्मानके बारेकी सोम वास्तीकी उपयुक्त सम्मतिकी भी रक्षा हो जाय और बाहरसे हमें कम-से-कम सहारा देनेकी जरूरत पड़े, तो मैं अपनी बातपर पक्का रहूँगा. ल्युबाको जितना हो सके सिखाऊंगा. थिएटरोंमें व्याख्यानोंमें, पब्लिक जल्सोंमें, अजायब घरोंमें उसे ले जाया करूँगा. किताबें पढ़ कर संगीत सुनाऊँगा; संगीत, समझमें आने लायक संगीत बहुत ऊँचा शास्त्रीय नहीं, सुननेका उसे अवसर दूँगा. अलबत्ता मैं अकेला यह सब नहीं कर सकूँगा. मैं चाहता हूँ आप लोग मेरी मदद करें. उसके बाद परमात्मा शुभ संकल्पका रक्षक है ही."

"हाँ, हाँ," सोम वास्तीने कहा, "काम नया है और रेखा गणितकी शक्ल-सा नपा तुला साफ भी नहीं है. फिर भवितव्यको कौन जान सकता है. लेकिन मुझे अचरज न होगा लखनपाल जब मैं पाऊँ कि, एक प्राणी तुम्हारे आध्यात्मिक स्पर्शसे उद्धार पा गया है और नेकीकी तरफ आ लगा है. मेरी खिदमत भी हाजिर है.

"और मैं"

"और मैं भी", शेष दोनोंने भी कहा और ठीक वहीं मेजपर बिना उठे चारों विद्यार्थियोंने मिलकर लुबीकी शिक्षा और-बुद्धि विकासके लिए एक विशद सम्पूर्ण अद्भुत कार्यक्रम रचकर खड़ा कर लिया.

लड़कीको व्याकरण और सुलेख सिखानेका काम सोमदेवने अपने ऊपर लिया. कठिन पाठोंकी भरमारसे वह एकदम थक न जाय, सो उसकी प्राथमिक सफलताओंके पुरस्कारस्वरूप वह रूसी और विदेशी भाषाओंके सुबोध सरल पर कलामय और उच्च उपन्यास पढ़कर उसे सुनाया करेगा. गणित भूगोल और इतिहासका अध्यापन लखनपालने अपने ऊपर रखा.

प्रिंसने इस बार सदाकी तरह मखौलमें नहीं प्रत्युत हार्दिक और तत्पर भावसे कहा, "और मैं, भाइयो, मैं तो आप जानते हैं, कुछ जानता नहीं. और जो जानता हूं वह बुरी तरह जानता हूं. मैं अपने ऊपर लेता हूं कि उसे महान ज्योर्जियन कवि इसाबेलाकी अनुपम रचना 'दी पेन्थर स्किन' पढ़कर सुनाया करूंगा, उसकी पंक्ति-पंक्ति अनुवाद करके समझाया करूंगा. मैं आप लोगोंके सामने मानता हूं कि किसी भी तरह बड़ा विद्वान मैं नहीं हूं. मैंने शिक्षक होना चाहा, लेकिन शिक्षणके दूसरे दिनसे मुझे निकाल बाहर किया गया. तो भी सितार और बांसुरी और दिलरुबा मुझसे अच्छा कोई नहीं सिखा सकता."

नेजरस पूरे मनसे और सचाईके साथ बात कर रहा था. इसलिए लखनपाल और सोमदेव दोनों तबियतके साथ हंसे. सबको अचम्भेमें डालकर सोम वास्तीने नितान्त अप्रत्याशित समर्थन किया, कहा, "प्रिंस का कहना ठीक है. संगीतसे व्यक्तिमें सौन्दर्य-बोधका भाव उन्नत होता है, शारीरिकता मंद होती है, रुचि परिष्कृत होती है. जीवनमें उससे सहायता भी मिलती है और मैं, सज्जनो...मैं अपने लिए सोचता हूं कि मैं उस लड़कीके साथ मार्क्सके केपीटल और मानव सभ्यताके इतिहासका पारायण चलाऊंगा. साथ-साथ रसायनशास्त्र, पदार्थ विज्ञान, विश्वविज्ञान और राजनीतिक अर्थशास्त्रका भी मैं उसे शिक्षण दूंगा."

अगर सोम वास्तीके व्यक्तित्वके प्रति एक प्रामाणिकता और धाकका भाव उनमें न होता और स्वयं उसने अपनी बातको इस गुरुता और महत्त्वपूर्णताके साथ अदा न किया होता तो दोनों उसके मुँहपर हंस ही पड़ते. अब वे उसकी तरफ आखें फैलाकर ताकते ही रह गए.

"हां, हां," बिना अप्रतिभ हुए सोम वास्तीने कहना जारी रखा, "मैं रसायनिक और वैज्ञानिक तरह-तरहके प्रयोग, उसके सामने उपस्थित करूंगा वे जो घरपर सरलतासे किये जा सकते हैं, और जिनसे तबियत भी बहलती है, मस्तिष्क पुष्ट होता है और भ्रान्त धारणाएं नष्ट हो जाती हैं. इसी तरह उसे मैं सृष्टिकी प्रक्रिया और उसके संगठनका रूप और परमाणुका महत्व समझाऊंगा और कार्ल मार्क्सकी जहां तक बात है आपको समझना चाहिए कि बड़ी-बड़ी किताबें भी, क्या विद्वान और क्या प्रारम्भ कर्ता, सबके लिए एक-सी सुलभ हैं बशर्ते कि समझानेवाला हो और सुबोधरूपमें उन्हें पेश कर सके. और क्या मैं कहूं कि महान विचार सदा सरल होते हैं."

लखनपालने लुबीको उसी निश्चित जगह बांधके पास बेंच पर पाया. अनमनी उसके साथ-साथ वह घर गई. जैसा लखनपालने समझा था, सिकन्दराके सामने पड़ते उसे डर लगता था, और उस बेचारीको इस तरहकी नित्य-नैमित्तिक अप्रियताओंको अंगीकृत करके चलनेकी आदत अब न रह गई थी. और फिर यह बात कि लखनपाल उसके अतीत जीवनको ढका नहीं रहने देना चाहता, उघाड़-उघाड़कर चलता है, उसे त्रास और आशंकासे घेरे रहती थी. लेकिन वह जो अन्ना मरकानीके आवासमें कभीसे अपनी निजकी इच्छा और अपने निजके व्यक्तित्वसे वंचित रक्खी जाती रही थी, और जो हर किसीकी माँगपर उसके पीछे चल देना ही सीखी थी, इस समय भी कोई प्रतिवाद या विरोधका शब्द मुँहसे निकाल न सकी और चुपचाप लखनपालके पीछे-पीछे चलती रही.

धूर्त सिकन्दरा इस बीच छात्रावासके सुपरिन्टेन्डेन्टके पास जाकर

खूब कह सुन आई थी कि लखनपाल एक लड़कीको ले आया है और रात भर उसीके साथ कमरेमें रहा है. और यह और वह. भला यह सिकन्दरा क्या जाने कि वह कौन है, कौन नहीं ? लखनपाल ही कहता था कि कोई बहन सहन है. लेकिन उसका पास-पोर्ट तो उसने दिया नहीं. इस सुपरिन्टेन्डेन्टको सब बातें इतने विस्तारसे कहना जरूरी यों भी था कि यह उद्धत, बदतमीज आदमी जो हवेलीके और रहने वालोंकी तरफ ऐसे पेश आता था जैसे विजयी सेनापति अपने पैरों तले पड़े विजित नगरवासियों के साथ पेश आए, इन विद्यार्थियोंसे जरा चौंक कर ही रहता था. क्योंकि ये लड़के उसे कभी कुछ दुरुस्त बनाते रहा करते थे.

लखनपाल उसके सामने हुआ तो उसे आखिर तभी शांत कर पाया कि, जब अलग एक छोटासा कमरा लुवीके लिए और लेनेका उसने वचन दे दिया.

"लेकिन मिस्टर लखनपाल, देखिये कल जरूर उसका पासपोर्ट आप मौजूद कर दीजिये," चलते वक्त सुपरिन्टेन्डेन्टने आग्रहपूर्वक कहा। "आप बाइज्जत आदमी हैं और मेहनती हैं और हम लोग आपसमें पुराने वाकिफ हैं। किराया वक्तपर दे दिया कीजिये। आपहीकी खातिर मैं यह कर रहा हूँ, नहीं तो आप जानते ही हैं कि क्या बुरा वक्त है आज-कल. किसीने मेरी शिकायत कर दी तो न सिर्फ मेरी खबर ही ली जा सकती है, मुझे शहरसे निकाल भी दिया जा सकता है. और आजकल बड़े अफसरोंकी कड़ी निगाह है".

शामको लखनपालने लुवीको प्रिन्स पार्कमें घुमाया, एक बड़े क्लबमें जाकर उसे बाजा सुनवाया और घर जल्दी लौटकर आ गया. लुवीको उसके घरके दरवाजे तक पहुँचाकर वहींसे उससे रुखसत ली. तो भी, मानो पिता ही हो, मस्तक पर सस्नेह चुम्बन लिए बिना वह न रह सका.

लेकिन दस मिनटके बाद जब वह कपड़े उतारकर विस्तरमें लेटा सरकारी कानूनकी किताब पढ़ रहा था, लुवी उसके दरवाजेपर बिल्ली

की तरह खसोट कर कुछ आहट करनेके बाद, अचानक उसके कमरेमें घुस आई.

"मेरे प्यारे, तकलीफके लिए मुझे माफ करना, तुम्हारे पास सुई धागा है ?...नहीं मेरे ऊपर गुस्सा मत होओ, मैं अभी चली जाती हूं".

"ल्युबा, मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ तुम अभी, नहीं इसी घड़ी चली जाओ. मैं तुमसे माँगता हूँ..."

"मेरे प्यारे राजा बाबू, मेरे देवता", करुण और कुछ परिहास भीनी वाणीमें वह बोली, "तुम मुझसे हमेशा यों चिल्ला कर क्यों बोलते हो ?" और क्षण भरमें मोमबत्ती को फूकसे बुझाकर अन्धेरेमें जोरसे हँसती और कूंजती हुई वह उसके बिस्तरमें ही आ दुबकी.

"नहीं ल्युबा, यह नहीं होगा. ऐसे नहीं चलेगा—" दस मिनट बाद कम्बलमें लिपटा दरवाजे पर खड़ा लखनपाल कह रहा था, "अब ज्यादा-से-ज्यादा कल में तुम्हें कहीं दूसरे मकानमें कमरा ले दूँगा. अबसे कभी ऐसा नहीं होने देना होगा. परमात्मा तुम्हारा भला करे. जाओ. जाओ, खुश रहो लेकिन मुझे वचन दो कि हमारा सम्बन्ध...बस सखा भावका होगा".

"मैं देती हूँ, मेरे पीतम, मं, देती हूँ, मैं वचन देती हूँ". वह हँसती हुई बोली और चट पहले उसके ओठोंपर और फिर उसके हाथपर उसने चूम लिया. यह उसका कृत्य बिल्कुल आन्तरिक, हार्दिक, स्वयं लुबी के लिए एक दम अप्रत्याशित था. अब तक जीवनमें एक पादरीको छोड़ उसने किसी पुरुषका हाथ नहीं चूमा था. शायद इस प्रकार लखनपालके प्रति, जैसे किसी लोकोत्तर पुरुषके प्रति हो, वह अपनी कृतज्ञता, अपना कृतार्थ समर्पण निवेदन करना चाहती थी.

१५

जैसा बहुतोंके अनुभवमें आया है एशियाके बुद्धिजीवी वर्गमें काफी संख्यामें ऐसे व्यक्ति मिलते हैं जो असाधारण होते हैं, बिल्कुल अद्भुत-

मातृभूमिके गौरवके खरे नमूने, उसकी संस्कृतिके पुंज. वे लोग माथे पर बल आए बिना साहसके साथ मौतके मुँहमें घुस जा सकते हैं. उनमें शक्ति है कि एक संकल्पके खातिर अकल्पनीय कष्ट और मुसीबतें झेल सकें, लेकिन ये ही एक दरबानकी त्यौरी देखकर दुबक रहेंगे, नौकरानी की झिड़क और डपटपर कांपने लगेंगे, और पुलिस थानेमें पहुंचते ही उनके दम खुश्क हो जायेंगे. इसी तरहका व्यक्ति था लखनपाल. अगले रोज (पहले रोज तो छुट्टी और देर हो जानेके सबब यह संभव न हो सका था) सबेरे उठकर और यह याद करके कि आज लुवीके पासपोर्टका बन्दोबस्त करना है, उसका वह हाल हुआ जो छुटपनके हाई स्कूलके दिनोंमें इम्तहानके लिए जाते वक्त हो जाता था. उसके मनमें धुक-धुक होता रहता था कि वह फ़ेल ही होगा. अब भी उसका सिर दुख आया. उसे लगा कि जैसे यह हाथ, यह पैर उसके नहीं किसी और के हैं. तिसपर बाहर सड़कपर सबेरे से लगातार कम्बख्त पानी बरस रहा था. सो धीमे-धीमें हठात् अपने कपड़े पहनते हुए लखनपालने मन में कहा कि देखो, मुसीबत हुई कि तभी ऊपरसे यह पानी बरसने लगता है ! क्या आफत है !

उसकी जगहसे याम्सकाया कोई खास दूर न था. यही पाँच छह फर्लांगसे ज्यादा न होगा. वह वहाँ बहुत ही कम जाता हो सो भी न था. लेकिन कभी खुले दिनमें वहां पहुंचनेका साबका न हुआ था. सो रास्तेमें जब कोई मिलता, कोई पुलिस वाला या गाड़ी वाला, तो उसे रह-रहकर यही ख्याल होता कि वह उसको बड़े गौरसे देख रहा है. उसे लगता कि जैसे सब जानते हैं कि वह कहां जा रहा है. जैसा अक्सर किसी मनहूस दिन बन जाया करता है, जो चेहरे उसके आखों आगे आए सब भद्दे, बेडोल जान पड़े. बार-बार कल्पनामें वह भीतर दोहरा रहा था कि वहां पहुँचकर क्या-क्या कहेगा और फिर पुलिस थानेमें जाकर कैसे क्या करूंगा. पर इस तरहकी कोशिशका परिणाम लगता कि उल्टा हो रहा है. अँह, तो पहलेसे आखिर ऐसा मैं क्यों सतर्क होऊँ ? ऐसी क्या आफत है? बलात् यह सोचता और अपनेसे ही नाराज बनकर

वह रास्तेमें ठिठक रहता.

एँह, तुम्हें पहलेसे सोचनेकी, पहलेसे मान रखने की, कि वहाँ यह कहोगें, यह न कहोगे जरूरत क्या है ? सब पहलेसे कुछ तैयारी नहीं की जाती, तब अक्सर जो बात निकलती है, ठीक निकलती है.······

पर, फिर उसके सिरमें वही कल्पनाजन्य अनुमानित वार्तालाप घूमना और धुनना शुरू हो जाता.

"तुम्हें उस लड़कीको उसकी मर्जीके खिलाफ रखनेका कोई हक नहीं है."

"जनाब, तो उसे अपने जानेकी मर्जी खुद जतलानी चाहिए. मैं उसीके कहनेसे यह कर रहा हूँ."

"माना. लेकिन तुम यह कैसे साबित कर सकते हो ?"

और मनही मन उलझकर मानो उत्तर सोचता हुआ वह फिर अटक जाता.

इसी तरह शहरकी वीरान पड़ी जमीन आई. गायें वहाँ खड़ी जुगाली कर रही हैं. घेरेके पासका लकड़ीका वही रास्ता आया, जो उसे याद है. नालियों और नालोंपर छोटे-छोटे पुल बने हैं जो उसके पैरों तले कांपसे उठते हैं. यहांसे वह याम्सकायाकी तरफ मुड़ गया. अन्ना मरकानीके यहाँकी सब खिड़कियां बन्द थीं. बाकी चकलोंमें भी सन्नाटा था. जैसे सब उजड़ गया है, सो गया है. सकम्प हृदयसे उसने बाहरसे घण्टीकी रस्सी खींची.

नंगे पैर दामन हाथोंमें उठाए हाथमें भीगा लत्ता थामे मुंह वाले बाल पर धूल लपेटे जवाबमें एक स्त्री आ मौजूद हुई. वह इस वक्त अन्दर फर्श साफ कर रही थी.

डरते हुए विनम्र भावसे लखनपालने कहा, "मैं जेनीसे मिलना चाहता हूँ".

"जी, मिस जेनी खाली नहीं हैं. उनके मुलाकाती अभी सोनेसे जगे नहीं हैं".

"अच्छा तो तिमिरा".

स्त्रीने तनिक अविश्वस्त दृष्टिसे उसकी ओर देखा, "मिस तिमिरा. मैं ठीक जानती नहीं ..मैं समझती हूँ, वह भी खाली नहीं है. लेकिन आपको क्या चाहिए ? मुलाकातके लिए आए हैं या ?"

"जो समझो । अच्छा कहो, मुलाक़ातके लिए आए हैं".

"मुझे मालूम नहीं मैं जाकर देखती हूँ. जरा ठहरिये".

लखनपालको उस धुँधले प्रकाशसे मैले ड्राइँग रूममें छोड़कर वह चली गई. रोशनदानोंके शीशोंमेंसे आती हुई रोशनीकी कुछ लकीरें इस भारी अन्धेरेको इधर-से-उधर भेद रही थीं. वहाँ रक्खा रंगा और चिकना फर्नीचर और जैसे पसीनेसे भीगी भारी तस्वीरें और अन्य सामान—सब मिलाकर मानो किसी व्यंतर लोकका आभास दे रहे थे. कोई जैसे भुतही जगह हो. वहाँ कलके तम्बाकूकी सीलनकी खट्टी बास सी भरी थी. और जाने कैसी एक मलिन अकथनीय अमानुषी गन्ध वहाँ से निकल रही थी. जैसे ख़ाली नाटक घर, नाच घर आदि होते हैं न. वहाँ यों आदमी रहते नहीं, पर मौके-ब-मौके सैकड़ोंकी भीड़ जमा हो जाती है ! तो सवेरेके बंद दर्वाज़ोंको खोलते वक्त अंदर पहुँचकर हब्स से कैसा दम घुटता सा मालूम होता है. वैसा ही यहाँ था. शहरमें कहीं दूर, रह-रह कर किसी जाती गाड़ीकी खड़-खड़ आवाज आ रही थी. दीवारपर घड़ी सोती टिक-टिक कर रही थी. उद्विग्न और उत्तेजित अवस्थामें, लखनपाल इस ड्राइँग रूममें दोनों हाथोंको रगड़ता और मलता हुआ टहलने लगा. जाने क्यों उसे वहाँ सर्दीसी लगी, और वह वहाँ सतर होकर नहीं चल सका.

'मुझे सच, यह सब ज़हमत उठानी ही क्यों चाहिए थी' झल्लाहटके साथ मन-ही-मन उसने कहा. 'यह कहनेसे अब क्या बनता है कि सारी यूनीवर्सिटीमें जहाँ देखो मेरी ही चर्चा है, सब शैतानकी कार्रवाही है. और कल-दिन तक भी क्या बिगड़ा था. वह कह ही रही थी मुझे वापस पहुँचा दो. मैंने पहुँचा क्यों न दिया? मुझे करना ही क्या था. उसे गाड़ी के पैसे दे देता, दो-चार ऊपरसे और. वह चली जाती और सब ठीक-ठाक हो गया होता. बखेड़ा टलता और किस्सा ख़तम. मैं इस वतक

अपने आज़ाद होता, स्वच्छन्द होता. यह बबाल, यह आफत, यह परेशानी तो सिरपर सवार न होती. लेकिन अब मुड़नेका वक्त कहाँ है ? और कल और भी नहीं, और परसों और भी नहीं, और फ़िर—बिलकुल नही. एक बेवकूफी कर गुजरे हो तो उसे फौरन रोक देना चाहिए। पर, अब वक्त निकल गया है. अब तो उधर ही बढ़े चलो, तब चले. एक झूठ किया हैं तो दो और, और उनके बाद बीस और, और.... लेकिन क्यों ? अभी ऐसा सब क्या बिगड़ गया है. वह बेचारी अनजान है. कच्ची बुद्धि, जैसे पगली ही न हो. जैसे उस जैसी और होती हैं, वह भी बिचारी जानवर है. बस खाकर पेट भर लिया और मर्दके साथ खाट पर लेट रहीं. पर ओह, मैं यह क्या सोचता हूँ ? मैं—'दोनों हाथोंके बीचमें लेकर जोरसे उसने अपनी कनपटी और माथेको दबाया और आँखें बन्द कर लीं, 'मैं अगर उस काम, पाप, भोग प्रलोभनसे बचता ? देखो', वह अपने आपसे कह रहा था, "देखो, अभी यह दो बार हो चुका है और फिर होगा, और फिर और फिर···".

और साथ-साथ इनके प्रतिकूल विचार भी उसके सिरमें दौड़ रहे थे.

''लेकिन क्यों ? मैं आदमीं हूँ. मैं अपने शब्दका स्रष्टा हूँ, भाग्यका विधाता हूँ. क्या वह प्रेरणा जिसने मुझे इस कृत्यकी ओर प्रेरित किया महान् न थी, प्रशस्त न थी, उज्वल न थी ? मैं जानता हूँ कैसा विमल आनन्द मुझे उस क्षण अनुभव हुआ जब यह सत्प्रेरणा कृत्यमें उतरी ? वह कैसी निर्मल, प्रबल, अनुभूति थी ..या वह सिर्फ मदसे उत्तेजित मस्तिष्ककी एक अतिरिक्त भ्रान्ति थी ? एक मरीचिका, माया ? या रातभर की लम्बी तात्विक चर्चाका और निन्द्राहीन रात और थकित शिथिलावस्थाका यह परिणाम था ?"

और तभी उसके सामने अनन्त दूर, कालके अवगाहनके पारमेंसे मानो उठती हुई लुबीकी मूर्ति उसके सामने आ ठहरती. संकुचित, स्नेहाकांक्षासे कातर सलौनी और सुन्दर वह लुबी, जो अविलम्ब उससे घनिष्ट और सन्निकट हो गई. चिरपरिचित, चिरप्राप्त. किन्तु तभी अकारण

और अविहित भावसे वह उसे कुत्सित और जघान्य भी लगी.

"क्या ? क्या यह है, कि मैं कायर हूँ ? निकम्मा हूँ?" भीतर उसके चीख उठी और उसने जोरसे अपने हाथ मले. 'मुझे किसका भय है ? किससे संकोच किसकी आशंका ? क्या मैंने स्वयं अपने भाग्यका मालिक होने का सदा गर्व नहीं किया ? मान लो एक स्वप्न, एक कल्पना एक सूझ ही थी ? मानवीय आत्माके साथ, एक मनस्तत्व संबन्धी प्रयोग—वैसे आश्चर्य कर विरल प्रयोगोंमेंसे एक प्रयोग जो सौमें निन्यानवे असफल होते हैं. मान लो वैसे प्रयोगकी ही बात मेरे मनमें उठी, तो भी क्या ? क्या यह जरूरी है कि इसका हिसाब मुझे किसी को देना ही हो? किसीकी ओर मुझे देखना ही हो ? किसीकी सम्मतिका लिहाज या डर मुझे करना ही हो ? लखनपाल, ऊँचे रहो. उच्चासीन हो मनुष्य जाति-को देखो".

जेनी कमरेमें आई. अस्त-व्यस्त, निंदासी, रातके ही कपड़ोंमें वह आई और जमुहाई लेते हुए उसने अपना हाथ लखनपालकी तरफ बढ़ाया, "कहो बाबू क्या हाल है ? अपने नए घरमें हमारी ल्युबा कैसी है ? कभी हमको दावत नहीं दोगे ? या चुपचाप अपने सुहागके दिन लूटनेका इरादा है, कि कहीं कोई बाँट न ले."

"बकवास छोड़ो, जेनी. मैं पासपोर्टके बारेमें आया हूँ".

"सो—पासपोर्टके बारे में?"

जेनी विचारमें पड़ गई, "यहाँ तो पासपोर्ट है नहीं. तुम्हें यहाँसे एक खाली फार्म ले जाना होगा. समझे न? हमारा वेश्या वाला तिकौना. फिर शहर कोतवालीमें उसे दाखिल करना होगा. एवजमें वहीं से तुम्हें सही पासपोर्ट मिलेगा. पर देखो इस काममें मैं तुम्हारी ज्यादा मदद नहीं कर सकती. क्या जाने वे मालिक लोग इस मामलेको सूँघ लें, और कुछ देखें, तो मारपीट बैठें. लेकिन मैं बताती हूँ सो करो. अच्छा हो, नोकरानीको संरक्षिकाके पास भेजो. उससे कहना कि कहे, कोई कामसे तुमसे मिलने आए हैं. कहे कि एक गाहक हैं, बंधे थोक गाहक हैं. और यह कि मिलना बहुत जरूरी है. लेकिन मुझे इसमेंसे दूर ही रहने दो. और

देखो, नाराज न हो. तुम खुद जानते हो भलाई घरसे शुरू होनी चाहिए. लेकिन यहाँ अकेले अन्धेरेमें क्यों खड़े हो, चलो, वहाँ कमरेमें चलो. कहो तो मैं तुम्हें वहाँ बीअर भेज दूँ. या शायद तुम काफी पसन्द करोगे ? और या"—उसकी आंखें व्यंग और शरारतसे चमक आईं, "या कहो, किसी नई नवेलीको भेज दूँ ? तिमिरा तो खाली है नहीं. लेकिन शायद नूरी या बर्कासे काम चल जाय—".

"चुप करो, जेनी. मैं यहाँ कामकी जरूरतसे आया हूँ और···".

"अच्छा-अच्छा, तो मैं नहीं कहती, मैं नहीं कहती. मैंने तो यूँ ही कह दिया था. देखती हूँ कि तुम पत निबाहोगे. यह बड़ी बात है. अच्छा, तो चलो—" वह उसे कमरेमें ले गई और भीतरसे खिड़कीको पूरा खोल दिया. दिनकी धूप जैसे खिन्न अलस चुपचुपाते भावसे सुनहरी और गुलाबी दीवारोंपर, फानूसोंपर, मुलायम, लाल और मखमली फर्नीचर पर छलक कर बिखर गई.

लखनपालने मनस्तापपूर्वक याद किया—कि यहीं, ठीक यहीं, उसकी शुरुआत हुई थी.

"मैं जा रही हूँ,"—जेनीने कहा,

"और देखना, उसके सामने बहुत झुकना मत. और यहीब ात साइमनके लिए भी याद रखना. उन्हें खूब खरी-खरी सुनाना. यह दिन का वक्त है और उन्हें हिम्मत न होगी कि तुमसे कुछ कहें या कुछ करें. अगर कुछ हो ही पड़े तो सीधे-सीधे उनसे कह देना कि मैं अभी गवर्नर के पास जाता हूँ, और सब रिपोर्ट करता हूँ. कहना कि चौबीस घण्टेके अन्दर-अन्दर उन्हें बन्द न करवा दिया और शहरसे बाहर न निकलवा दिया तो मेरा नाम नहीं. वे ऐसे ही हैं. उन्हें सेरकी सवासेर सुनाओ, और जोरसे डटकर, तो वह भीगी बिल्ली बन जाते हैं. अच्छा मैं जाती हूँ. परमात्मा तुम्हें सफल करें."

वह चली गई. दस-बारह मिनट गुजरनेपर वहां आई एमा-उडवानी नीले साटनसे ढकी स्थूलकाया, चौहरा चेहरा जो माथेसे नीचे उतारके साथ चौड़ेपर और चौड़ा हा होता गया था; विशाल ठोड़ी और

विशालतर वक्ष; छोटी, पैनी बन्नीहीन आँखें और पतले दबे दुर्वृत्त ओठ;—यह थीं उडवानी. लखनपालने उठकर अपने सामने फैले अँगूठियोंसे लदे मोटे और मूलायम हाथोंको दबाया और अकृत्रिम घृणाके साथ सोचा—अगर इस मोटी भेंस, इस फूली डायनमें कहीं दिल-जैसी चीज हो और वह दिल किसी तरह टटोला जा सके, तो राम जाने कितनी हत्याएं वहां छिपी हुई नहीं मिलेंगी.

यह कह देना होगा कि यामकास चलते वक्त लखनपालने पैसेके साथ एक रिवाल्वर भी पास रख लिया था. सड़कपर चलते चलते जेब में हाथ डालकर वह उसकी धातुकी ठंडी देहको छूकर जांच लिया करता था. सोचता था, जाने क्या मौका हो. आशंका थी कि कुछ गड़बड़ी कहीं न कहीं होगी. उसके पूरे मुकाबलेके लिए वह तैयार होकर चला था. पर अपने भयमें जो उसने पहलेसे सोच-साच रखा और गढ रखा था सब फिजूल निकला. उसे अचरज हुआ कि बात इतनी सीधी-सादी अति सामान्य और नीरस जैसी निकली. हाँ, उसमें अप्रियता और बदमजगी कम न थी.

लापरवाही और कुछ अतिरिक्त शालीनताके साथ एक नीची आराम कुर्सीमें बैठकर सिगरेट सुलगाते हुए उस प्रमदाने कहा, "कहिए महाशय, आप एक रातकी कीमत देकर गए और एवजमें लड़कीको उसके बाद भी और एक रात और एक दिन रक्खा. तिसपर अभी आप पर पच्चीस रुपया और बकाया है. हम एक रातके लिए लड़की उठाते हैं तो दस रुपए लेते हैं, और चौबीस घण्टेके पच्चीस रुपए. चुँगीकी तरह यहां तो बंधी दर है. लीजिए, सिगरेट लीजिएगा ?" उसने अपना केस आगे किया और लखनपालने बिना कुछ ठीक तरहसे समझे एक सिगरेट उठा ली.

"मैं कुछ बिल्कुल और ही कामकी बात करना चाहता था.'

"ओह, आप कहनेकी तकलीफ न कीजिए. मैं सब खुद समझती हूं शायद आप इस लड़कीको, यानि ल्युबाको, बिल्कुल अपने साथ लेकर —क्या कहते हैं उसे आप लोग ?-जमाना ?—जी हां, उसे जिंदगीमें

घर गिरिस्तीमें जमा देना चाहते हैं. हां, आं, वैसा होता है. मैं बाईस साल इस धन्धेमें हूं और मैं जानती हूँ. कुछ कच्चे,नातजुर्बेकार लड़के ऐसा कर बैठते हैं. लेकिन मैं आपको कहती हूं कि इसका कुछ नतीजा नहीं होगा."

"नतीजा होगा, या नतीजा नहीं होगा—वह अब मेरा काम है" लखनपालने काँपती टाँगोंसे, उँगलियोंके नहोंकी तरफ देखते हुए, मन्द भावसे उत्तर दिया.

"हाँ हां, वह तुम्हारा काम है, मेरे जवानो" और एमा उडवानीके फूले गाल और विशद ठोडियां नीरव हास्यसे कूदने लगीं. "मैं दिलसे तुम्हारी कामयाबी चाहती हूँ और तुम्हारा भला चाहती हूँ. मुझे तुमसे मुहब्बत है. लेकिन जरा तकलीफ करके मेरी तरफसे उस लड़की ल्यूबासे कह दीजिए कि जब वह आपके घरसे खदेड़कर निकाल बाहर की जायगी, तब खबरदार जो वह अपनी मनहूस सूरत लेकर यहां पहुँचे. वह चाहे तो कहीं पड़ी भूखी मर सकती है, या नहीं तो फौजी रंगरूटोंके लिए चवन्नी वाली जगह पहुँच सकती है."

"यकीन कीजिये, वह लौटेगी नहीं. मैं आपसे सिर्फ उसका सर्टी-फिकेट दे देनेके लिए कहता हूँ- देर न कीजिए".

"सर्टीफिकेट. ओह, लीजिए. जरूर लीजिए, इसी मिनट लीजिये. लेकिन जरा पहले आपको यह तकलीफ देनी है कि जो यहाँ का उसकी तरफ़ वाजिब निकलता है, वह अदा कर दिया जाय. देखिये यह उसकी हिसाबकी किताब है. मैं खयाल रख कर उसे साथ ले आई. जानती थी कि हमारी बातके आखीरमें जरूरत किसकी पड़ेगी". कहकर उसने अपने कुर्तीकी जेबमेंसे एक छोटी-सी काली जिल्दकी कापी निकाली और अपने विशाल पीत वर्ण मांसल वक्षकी निक झलक लखनपालको मिलने दी. किताब पर मोटे शीर्षकमें लिखा था—

अन्ना मरकानी द्वारा संचालित वेश्यावासकी नम्बर· · 'मिस ल्युबाके हिसाबकी कापी. नीचे लिखा था—याम्सकाया स्ट्रीट नम्बर...मेजके उस तरफसे लखनपालकी ओर कापी बढ़ आई. लखनपालने लेकर पहला

सफा पलटा और छपे नियमोंके चार-पाँच पैराग्राफ पढ़ गया. संक्षेपमें जरूरी शर्तोंमें दर्ज था कि इस हिसाबकी किताबकी दो प्रति होंगी. एक मालकिनके पास रहेगी, दूसरी वेश्याके पास. सब आमदनी और सब खर्च दोनों किताबोंमें दर्ज होगा. शर्तोंके मुताबिक वेश्याको यहाँसे खाना, रहनेकी जगह, जाड़ोंके लिए कोयले, रोशनी, बिस्तर, बाथ वगैरहका बन्दोबस्त होगा और एवजमें वेश्याको अपनी आमदनीका दो तिहाई तक, ज्यादह नहीं, मालकिनको देना होगा. बाकी पैसेमेंसे जरूरी है कि वह साफ कपड़ोंमें और ठीक तरीके पर रहे. कम-से-कम बाहर जानेके लिए दो ड्रेस उसके पास होना लाजमी हैं. आगे इसका भी जिक्र था कि पैसेकी अदायगी स्टाम्पकी मददसे होगी, जो कि मालकिन पैसा लेकर उन्हें मुहय्या करेगी. हिसाब हर महीनेकी आखिरी तारीखको सही किया जायगा. अंत में यह भी था कि कोई वेश्या किसी वक्त चकला छोड़ सकती है ; अगर उसकी तरफ कुछ बकाया लेना रहता है तो ऐसे कर्ज़को कानूनके मुताबिक अदालतसे मंसूख़ या चुकती करानेका जिम्मा उसे उठाना होगा.

लखनपालने इस नुक़्ते पर उंगली रखकर ग़ौरसे देखा और किताबको रक्षिकाकी तरफ घुमाकर विजयी भावसे कहा, "जी, देखती हैं आप, उसे हक है कि वह यह जगह जब चाहे छोड़ सकती है. चुनांचे वह किसी भी वक्त तुम्हारी इस बदनसीब और कम्बख्त नरककी नालीको जिसमें तुम...." लखनपाल इस तरह बढ़-बढ़ कर कहता रहा.

लेकिन संरक्षिकाने शान्त भावसे उसे बीच ही में रोक दिया. बोली, "ओह, इसमें मुझे शक नहीं है, वह चली जा सकती है. लेकिन अपना कर्ज़ पहले अदा कर जाय".

"दस्तावेज़ हो तो ? काग़ज वह लिख दे सकती है".

"शि, उसका काग़ज ! पहले तो वह अनपढ़ है. फिर उसके प्रोमिजरी नोटकी कीमत क्या है, थूक जितनी भी नहीं. हाँ, कोई उसका जामिन हो, जिसका ऐतबार मैं कर सकूं तो मुझे कोई शिकायत न होगी".

"लकिन कायदोंमें तो कोई जमानतकी बात लिखी नहीं है".

"बहुतेरी बातें होती हैं जो लिखी नहीं जातीं. कायदेमें तो यह भी नहीं लिखा कि लड़कीको यहाँसे मालिकोंको बिना खबर दिए ले जाया-जा सकता है".

"खैर, कुछ हो तुम्हें मुझे उसका ब्लेंक देना ही होगा".

"तो जनाब मैं ऐसीं बेवकूफ नहीं हूँ कि यों ही दे दूँ. किसी मुअज्जिज शख्सको लाइये, हमराह पुलिस हो और पुलिस सिफारिश करे कि आप के दोस्त बाइज्जत हैं, और वह आदमी फिर आपकी जमानत दे, और इसके अलावा पुलिस गवाह हो कि आप लड़कीसे पेशा नहीं करायेंगे, या किसी और जगह न बेच देंगे, तब जो आप कहें मैं हुकमकी ताबेदार हूँगी."

"ऐसी-तैसी तुम्हारी !" लखनपालने कहा, "अगर जामिन मैं होऊँ, मैं खुद ? और तुम्हारे प्रोमेजरी नोटपर यहीं दस्तखत कर दूं ?···."

"मेरे जवान दोस्त, मुझे नहीं मालूम तुम्हारी यूनिवर्सिटी में क्या सिखाया जाता है ? लेकिन क्या तुम सचमुच मुझे ऐसा बेवकूफ समझते हो ? खुदा करे, जो पहने हो उसके अलावा भी तुम्हारे पास और कुछ कपड़े हों. खुदा करे कलके बाद परसों भी तुम्हारा कुछ खानेका ठिकाना हो. लेकिन प्रोमिजरी नोट ! उसकी क्यों बात करते हो. जाओ, मेरा सिर और न खाओ."

लखनपाल बिल्कुल बिगड़ उठा. उसने जेबने मनीवैग निकाला और जोर-से मेजपर पटका.

"तो मैं अभी हाल सब नकद देता हूँ."

"ओह, तो यह दूसरी बात है." मीठी पड़कर, फिर भी तनिक अविश्वाससे संरक्षिकाने कहा, "मैं आपको तकलीफ दूँगी कि जरा सफा बदलकर देखिए कि आपकी माशूकापर क्या बकाया आता है."

"बक मत, कुत्ती"

"मैं बक नहीं रहीं हूँ, जाहिल," स्थिर भावसे संरक्षिकाने उत्तर दिया.

लकीर खिंचे किताबके पन्नेमें दाँई तरह आमद दर्ज थी, बाई तरफ खर्च.

"स्टाम्पमें वसूल. पन्द्रह अप्रेल," लखनपालने पढ़ा, "दस रुपए. सोलह तारीख—चार रुपए. सत्रह—बारह रुपए अट्ठारह—बीमार. उन्नीस—बीमार. बीस—छ रुपए. इक्कीस—चौबीस."

"हे राम! संताप और खीज और ग्लानि और अवश क्रोधके भावसे लखनपालने सोचा, "एक रातमें बारह आदमी !

महीनेके अंतमें लिखा था, "जोड़—तीनसौ तीस रुपए !"

"ओ भगवान् ! यह क्या मैं कयामत देख रहा हूं ? या सपना ? महीनेमें एकसौ पेंसठ आदमी." अनायास मनमें हिसाब मिलाकर लखनपालने सोचा और उसी भाँति सफे पलटता रहा.

"लाल रेशमकी ड्रेस बनाई, गोटेदार, चौरासी रुपए. ड्रेसमेकर हेलेन, सबेरे पहननेके कपड़े पैंतीस रु०. ड्रेसमेकर हेलेन, रेशमी मोजे छः जोड़ी, छत्तीस रुपए. गाड़ी भाड़ा, टायलेट, सेंट और इतर इत्यादि जोड़ दो सौ पाँच रुपए. उसके बाद तीन सौ तीस रुपएमेंसे दो सौ बीस घटाये गए. ये दो सौ बीस रुपए, रहनेकी जगह और खाना देने वाली मालकिनके हिसाबके थे. इस तरह एक सौ दसकी रकम शेष रही. माहके आखिरमें हिसाबके गोशवारेमें लिखा था. ड्रेसमेकरको और अन्य खर्चको चुकता करनेके बाद एक सौ दस रुपए बकाया बचे. पिचानवे रुपए लुवीके उसकी तरफ वाजिब हैं और चारसौ अठारह रुपए पिछले सालके उसकी तरफ चले आ रहे हैं. कुल मिलाकर पाँच सौ तेरह रुपए".

लखनपालके दम खुश्क हो गए. पहले तो उसने कोशिश की कि बिलोंके बेहद तूल–तवील होने और खर्चकी अन्धा धुन्धीपर आपत्ति करे. लेकिन रक्षिकाने साफ कह दिया, कि उससे हमारा कोई सरोकार नहीं है. हमारे यहाँकी तो इतनी भर माँग है कि हर लड़की साफ कपड़े पहने और ऐसे रहे जैसे भले घरकी लड़कियाँ रहती हैं. हम कसूरवार हैं तो इसके कि हमने उसके खर्चोंके लिए सिरपर कर्ज़ ओढ़ लिया है.

"लेकिन, यह तुम्हारी ड्रेसमेकर पूरी ठग है. आदमीकी शकलमें मक्खी फंसाने वाली मकड़ी है". लखनपाल आपेसे बाहर होकर चिल्लाया, "और तुम सबकी सब एक थैलीकी चट्टी-बट्टी हो, एक कुनबेकी ठग. बेहया कपटिनो, तुम्हारे दिल भी है कि नहीं ?"

जितना-जितना वह गर्म होता था, एमा उडवानी उतनी ही ठण्डी पड़ कर कँटीले ताने कसती थी. "मैं फिर कहती हूँ कि जनाब यह मेरा काम नहीं है. और देखो ऐ जवान दोस्त, इस तरीकेसे बकना शुरू न करो. नहीं तो चपरासी आयगा और तुम्हें इसी दम दरवाजेसे बाहर उठाकर फेंक देगा".

लखनपालको लाचार इस हृदयहीन औरतसे सौदेमें पड़ना पड़ा. बहुत देर तक झक-झक-चिक-चिक हुई, तब जाकर वह राजी हुई कि अच्छा, ढाइसौ रुपए नक़द ले लेगी, बाकी ढाइसौका दस्तावेज. और राजी भी तब हुई जब अपने टेस्टके सर्टीफिकेट दिखा कर लखनपालने उसके सामने यह प्रमाणित कर दिया कि इस साल वह अपना कोर्स खतम कर लेने वाला है और अगले साल वकील बन जायगा.

रक्षिका टिकट लेने गई, इधर लखनपाल उठ कर कमरेमें टहलने लगा. वह दीवारों पर लगी सब तस्वीरें देख चुका था. हंसके साथ क्रीड़ा करती रम्भा को; समुद्र-तटवर्ती स्नानके मनोरम दृश्यको; किसी एशियाई देशके हरमकी बहारको और उस दानव देवताको जो एक निर्वस्त्रा अप्सराको अपनी बाँहोंमें भर कर उड़ाए जा रहा था—इन सब को वह देख चुका था. फिर भी उनपर एक निगाह घूम गई किन्तु तभी सहसा एक छोटे छपे प्लेकार्डने उसकी निगाह खींची. शीशके पीछे मढ़ा हुआ वह लटका था. उसका कुछ हिस्सा ढंका था पर काफी दीखता था. पहली बार यह लखनपालकी नजर पड़ा और उसे ज़रा पढ़कर वह भौंचक रह गया. पुलिस थानोंकीसी कानूनी भाषामें लिखी छपी उन बेलाग, बेलाज, बेजान लकीरोंको पढ़कर एक बुझी ग्लानिसी उसमें हुई. वहाँ व्यावसायिक सर्दरूही और बेहयाईके साथ वर्णन और हिदायत लिखी थी कि किस विध और किन उपायोंसे योनि रोगोंसे बचना चाहिए,

अपने शरीरको खूब आरास्ता रखनेके सब यत्न और तरीके भी दिए गए थे. और साप्ताहिक डाक्टरी निरीक्षणकी और आगाहीके लिए दीगर जरूरी हिदायतें भी थीं. लखनपालने यह भी पढ़ा कि कोई चकलाघर गिरजा घरों, शिक्षालयों, और अदालतोंकी बिल्डिगोंसे सौ कदमसे पास नहीं बन सकेगा. स्त्रियाँ ही ऐसे चकला घरोंकी संचालिका होंगी· यह भी कि उसके रिश्तेदारोंमेंसे स्त्रियाँ ही, और वह भी सात वर्षसे अधिक की नहीं, उस संचालिकाके साथ ठहर और रह सकेंगी. और यह कि मकान मालकिन और सँचालिका और उस चकलेमें रहने वालियां आपसमें और महमानोंके साथ हमेशा शिष्टता, नम्रता, शांति और अदब से पेश आएँगी, किसी तरहकी गाली गलौज, तू-तू-मैं-मैं, नशा और झगड़ा नहीं करेंगी. यह भी लिखा था कि वेश्या नशेकी हालतमें किसी पुरुषका आलिंगन स्वीकार न करेगी, न किसी मदमस्त पुरुषको स्वीकार करेगी. इसके बाद खास-खास पर्व त्योहारोंका उल्लेख था, जिन दिनों यह वृत्ति निषिद्ध बताई गई थी. गर्भपात अथवा भ्रूणघातके विरुद्ध कड़ी ताकीद की हुई थी. 'क्या पक्का, दुरुस्त, धार्मिक प्रबन्ध है, और नैतिकताकी रक्षाकी क्या गंभीर चिन्ता है ?' लखनपालने कटु व्यंगसे सोचा.

आखिर एमा-उवडानीके साथ मामला तय हुआ. रसीद लिखकर इधरसे उसने अपने हाथसे लखनपालकी ओर बढ़ाई कि उधर लखनपाल-ने मुट्ठीमें पैसे लेकर उसकी ओर किये. इस व्यापार सम्पादनमें दोनों सशंक तत्पर एक दूसरेकी आँखों और हाथोंको घूर कर देख रहे थे. स्पष्ट था कि दोनोंमें परस्पर कोई बहुत श्रद्धा अथवा सद्भाव नहीं है लखनपालने रसीद लेकर अपनी मनीबेगमें रक्खी और चलनेको उधर हुआ. रक्षिका देहलीज तक उसके साथ गई और विद्यार्थी जब सड़कपर पहुँच गया वह जीनेपर से ही लपकके पुकार उठी "बाबू, ओ विद्यार्थी बाबू".

वह रुका और पीछे मुड़कर देखा "क्या है" ?

"सुनो एक बात और है. मुझे तुम्हें बतलाना था कि तुम्हारी लुवी निकम्मी है, चोर है, बेईमान है. उसे सिफलिस है. हमारे यहाँ कोई

भी बढ़िया मेहमान उसे नहीं लेते थे. और अगर इस तरह तुम उसे न ले जाते तो कल हमें उसे वैसे ही निकाल बाहर करना था. मैं यह भी कहूँगी कि वह पल्लेदार, पुलिसके सिपाही, उचक्के, चोर, उठाई गीरे इन सबकी वह भोगी-भागी है. और तुम दोनोंके वैध विवाहपर मैं तुम्हें बधाई देती हूँ."

"ओ पापिष्ठा, मायाचारिन," लखनपालने उसकी तरफ दहाड़कर कहा.

"जा, जा, भोन्दू गधे !" रक्षिकाने कहा और जोरसे किवाड़ भेड़ लिए.

लखनपाल गाड़ीमें बैठकर पुलिस स्टेशन चला. रास्तेमें उसने सोचा कि इस ब्लेंकको, इस मशहूर 'पीले टिकट' को, जिसके बारेम उसने इतना सुन रक्खा है अभी ठीक तरह देख नहीं पाया है. वह एक मामूली सफेद कागज एक डाकखानेके लिफाफे जितना बड़ा, एक तरफ बाकायदा नाम, बापका नाम और अल्ल लिखी थी और उसका पेशा—'वेश्या'. और सामने दूसरी तरफ जिस प्लेकार्डको वह पढ़ चुका था उसीमेंसे कुछ जरुरी बातें उद्धृत थीं. वही व्यवहार-चलन अपने शरीरकी ऊपरी और भीतरी सफाईके बारेमेंकी वीभत्स, छल और दंभ भरी रीति-नीतिकी बातें. 'हर एक मुलाकाती' उसने पढ़ा 'चाहे तो पहले उस वेश्यासे पिछले डाक्टरी मुआयनेका सर्टीफिकेट तलब कर सकता है.' यह पढ़कर फिर लखनपालका हृदय भावुकतापूर्ण करुणासे भर आया.

खेउसने दके साथ सोचा, 'ओह, वे बिचारी औरतें ! उनके साथ कानून क्या कुछ नहीं करता ? उन्हें लांछित करनेमें उसने क्या उठा छोड़ा है ? यहाँ तक तुम्हें पामाल कर दिया गया है कि तुम पट्टी बंधे कोल्हूके बैलकी तरह, सब कुछकी आदी हो गई हो.' पुलिस स्टेशनपर जिला इंस्पेक्टर-बर्केश सामने मिला. वह रातभर ड्यूटीपर रहा था, पूरी तरह सो न सका था और गुस्सेमें भरा था. उसकी खूबसूरत पंखा नुमा लाल-दाढ़ी इतस्ततः फहरा रही थी. उसके तैयार युवा चेहरेका दाहिना आधा हिस्सा किसी सख्त सिराहनेके दबावसे अब भी लाल-लाल चमक

रहा था. लेकिन उसकी नीली भूरी आंखें, ठण्डी और चमकदार नीली चीनीकी तरह आबदार साफ और सख्त थीं. रातके घेरे हुए आदमियोंके उस कूड़े करकटके ढेरको जो बदमस्त हालतमें यहाँ ला पटका गया था, और अब जिनको होशमें सीधे हो आने और दिन निकल आने पर अपनी अपनी जगह रवाना किया जा रहा था, उनकी भीड़पर बक-झककर झल्लाकर बेहूदा गालियाँ बककर और जिरह करके अपना रिकार्ड और अपना फर्ज पूरा करनेके बाद बर्केश जरा कमर पीछे फेंककर लेट गया. बाहें गर्दनके पीछेकी ओर, टाँगे सतर फैलाकर बुरी तरह अकड़ अपने सारे बदनको ऐसे ताना कि जोड़ चट-चट कर उठे.

लखनपालको देखा, जैसे किसी पदार्थको देखते हैं, पूछा, "आप भी कहिए मिस्टर स्टूडेन्ट, क्या चाहिए ?"

लखनपालने अपनी बात थोड़ेमें कह दी. "और इस तरह मैं चाहता हूँ," उसने उपसंहारमें कहा कि "उसे मैं वहाँसे उठाकर साथ रखने की···यहाँ आप लोग उसे क्या कहते हैं···यानी, काम करने वालीकी हैसियतसे या कहिये एक सम्बन्धी नातेदार या ··आप क्या कहेंगे ··?"

"कहेंगे ? कहेंगे, रखेली या माशूका या औरतकी शक्लमें," अनपेक्षा से बर्केशने कह दिया, और हाथमें लगे एक सिलवर सिगार केसको, जिसपर छोटी छोटी मूरतें और मोनोग्राम बने थे, घुमाने लगा. "मैं आपके लिए कुछ नहीं कर सकता हूँ—यानी अभी बिल्कुल कुछ नहीं कर सकता हूं. अगर आप उससे निकाह करना चाहते हैं तो अपनी यूनिवर्सिटीकी तरफसे अफसरानका जरुरी इजाजतका खत पेश कीजिए. अगर आप यों ही उसे पालनेके लिए उठाते हैं—तो सोचिए उसमें मतलब कहाँ है—क्या है ? फायदा क्या है ? आप उसे एक दोजखके घरसे निकाल रहे हैं, इसलिए कि आप उसके साथ फिर वही शहवत-परस्ती—क्या विचार है ?—का ताल्लुक जोड़कर बैठें."

लखनपालने कहा, "नहीं—नहीं. तो आप नौकर समझिए."

"अच्छा, तो नौकर सही, ऐसी हालतमें मैं आपको तकलीफ दूँगा कि आप अपने मकान मालिकका इस किस्मका इजाजतनामा पेश करें. क्यों

कि मुझे कामिल उम्मीद है आप खुद ही मालिक मकान नहीं हैं. तो बस जनाब, अपने मालिक मकानका सिफारिशनामा ले आइये कि आप एक नौकरनीको जगह दे भी सकते हैं. और उसके साथ वे कागज़ात भी लाना न भूलिएगा जिनसे साबित हो कि आप वही शख्स हैं जो कि आप कहते हैं, आप हैं. मसलन, अपने जिले और अपनी यूनिवर्सिटीके सर्टीफिकेट वगैरह. या कुछ उसी किस्मकी चीज़ें. क्योंकि मुझे उम्मीद है आप रजिस्टर्ड हैं या शायद आप······आपकी वल्दियत मशकूक है."

"जी नहीं, मैं रजिस्टर्ड हूं," लखनपालने उत्तर दिया, पर उसका धीरज खो रहा था.

"तो बस यह बिल्कुल दुरुस्त है. लेकिन, वह मोहतरिमा खातून जिनके बारेमें आप इतनी तकलीफ गवारा कर रहे हैं."

"नहीं, वह अभी तक रजिस्टर्ड नहीं है. लेकिन उनका ब्लेंक यह मेरे पास है. उसके एवजमें मुझे उम्मीद है उसका असली पासपोर्ट मैं आपसे पाऊँगा. तब मैं फौरन उसे रजिस्टर्ड करा लूंगा."

बर्केशके हाथ फिर उसी तरह सामने फैलकर सिगार केस से खेलने लगे. "अफसोस है, मैं कुछ आपके लिए नहीं कर सकता, मिस्टर स्टूडेन्ट बिलकुल कुछ नहीं, तावक्ते कि आप जरुरी कागजात पेश न करें. जहाँ तक लड़कीका ताल्लुक है, क्यों, उसमें दिक्कत न होगी. चूंकि मकान लेकर बसनेका उसे अखत्यार नहीं है इससे यकीनन उसे पुलिसमें जगह देनी होगी. वहां वह तब तक रहेगी, जब तक कि अपनी मर्जीसे वापिस वहीं न जाना चाहे जहाँसे तुम उसे लाए हो. अच्छा, इजाजत दीजिए. आदा बअर्ज."

दोनों हाथोंसे अपना हैट नीचे आखों तक खींच लखनपाल उठकर दरवाजेकी तरफ चला. लेकिन तभी उसके सिरमें एक सूझ उठी. उससे खुद उसको शर्म मालूम हुई, पेटमें उसके मिचली सी होने लगी, हाथ ठण्डे होकर सुन्न पड़ने लगे; पैरोंमें कंपकंपी-सी हुई. पर, वह फिर लौटकर मेजपर आया और मानो लापरवाहीके साथ, फिर भी आवाजमें झिझक थी, कहा, "माफ कीजिए थानेदार साहब. एक जरुरी बात मुझे

फरामोश हो गई,एक आपके दोस्त हैं, जो मुझे भी जानते हैं. आपकी उनपर कुछ रकम वाजिब है. उन्होंने कहा था कि वह मैं आपको पहुँचा दूं."

"हुऊँ, दोस्त," अपनी बड़ी गुलाबी आखें फैलाकर बर्केशने पूछा, "वह कौन ?"

"बार······बारबरीसाव"

"ओह, बारबरी ! हाँ, हाँ मुझे याद आ गया. ठीक है."

"तो क्या आप यह दस रुपए कबूल करेंगे ?"

बर्केशने सिर हिलाया, लेकिन उस कागजके नोटको लिया नहीं, "लेकिन यह आपका दोस्त बारबरीसाब यानि हमारा दोस्त, बिल्कुल गधा ही है, जी नहीं, दस रुपए नहीं, उसे पूरे पच्चीस मुझे देने हैं. क्या बदकार आदमी है वह. जनाब, पच्चीस रुपए और ऊपरसे कुछ आने और. खैर, आनोंकी बात छोड़िये, क्या ओछीसी बात है. उसका जिक्र मैं नहीं करुँगा. खुदा उसपर महरबान हो. आपको मालूम है ?—यह एक बिलियर्डका कर्ज है. लेकिन कहना होगा, वह अव्वल बेईमान आदमी है. खेलमें चालाकी करता है···तो जनाब पन्द्रह और निकालिए."

"अच्छा, लेकिन मिस्टर इन्सपेक्टर, तुम हो पूरे पाजी," लखनपाल ने रुपये निकालते हुए कहा.

"अजी, क्या पूछिये," अब तक बर्केश बदल गया था. हार्दिक सौजन्य से वह बोला, "अजी, बीवी है बच्चे हैं. तुम जानो, हमारी तनख्वाह ही क्या है, यह लो दोस्त, पासपोर्ट लो. रसीद बना दो.···अच्छा, तसलीम."

विचित्र रूपमें मात्र इस बोधसे कि पासपोर्ट आखिर उसकी जेबमें है, जाने किस विध उसमें चैतन्य और सदवृत्तिकी स्फूर्ति हो आई. लखनपालकी रगोंमें फिर सदावेग भर गया. तेजीसे सड़क पार करते हुए, उसने सोचा, 'बस अब क्या है. अनुष्ठान हो ही गया, नींव पड़ ही गई है. जो असल मुश्किल थी वह पार हुई. अब, लखनपाल, देखो मजबूत रहो. तबियत को झुकने न दो. जो तुमने किया है, उज्वल है, महान् है, मैं इस सदनुष्ठानमें आखेट ही सही, मात्र उपादान ही सही, फिर भी, अब बात एक सी है.—बात एक ही है? एक सत्कर्म करके सीधे उसके पुरस्कार

पानेका लोभ होना, लखनपाल, लज्जाकी बात है. मैं सर्कसका कुत्ता नहीं हूँ, सधा ऊँट नहीं हूँ, स्कूलसे निकला हुआ कच्चा बच्चा नहीं हूँ. मैं जिम्मेदार हूँ, दायित्व लेकर टूटूंगा नहीं. बस कल जो अकरणीय कर गया, जो अपनेपरसे मेरा वश खो गया, यही बात खोटी हुई. यही ग़लती, जल्दबाजी, बेवकूफी हो गई. लेकिन जिन्दगीमें बिगड़ा क्या सुधर नहीं सकता ? बड़े-से-बड़े पतन पर भी व्यक्ति संभले हैं. और भारी-से-भारी बुरे-से-बुरे कर्म आदमीसे बन जाय और आदमी उसे धैर्यसे सहार ले, तो वक्त टल जाता है, और समय गहरे-से-गहरे घावको भर देता है और घोर तर बात भी समय निकलते मात्र चिन्ह रूप छोटी हो जाती, और कहानी बनकर रह जाती है.

पर जब घर आकर यह संवाद दिया तो उसे अचरज हुआ जब पाया कि लुवी इससे कुछ बहुत प्रभावित नहीं हो गई, एक दम खुशीसे उछली नहीं, उसने विजय भावसे पासपोर्ट दिखाया, लेकिन लुवी पासपोर्टकी तरफ उपेक्षित ही दीखी. पास तो नहीं, वह तो लखनपालको फिर पानेसे खुश थी. शायद यह आदिम अकृत्रिम स्त्री हृदय, अपने रक्षकको पाकर उसी पर समस्त अवलंब डाल कर, शिथिल गात, सम्पूर्ण रूपसे उससे चिपट कर अपनेको छोड़ देनेको उत्कंठित वाचित था. वह उसकी गर्दनसे लगकर चिपट गई. लेकिन लखनपालने उसे रोका, धीमेसे उसके कानमें पूछा—"लुवी, मुझे बताओ...सच-सच कहनेमें मुझसे डरो नहीं, चाहे, कुछ हो...मुझे अभी वहाँ बताया कि तुम्हें...तुम्हें कुछ रोग है... तुम जानती हो उस गन्दे रोग को क्या कहते हैं. अगर तुम, प्यारी, मुझमें ज़रा भी विश्वास रखती हो तो कह दो, यह सच है कि नहीं ?

वह लाल हो गई. हाथोंसे मुंह ढक लिया. वहीं पलंगपर गिरकर फूट-फूट कर रो उठी. "मेरे प्यारे, मेरे लखन ! ओ, लाखन. परमात्मा की सोगन्ध मैं खाती हूँ. परमात्मा मुझे देखता है. मैं कहती हूँ कभी कोई ऐसी बात मुझे नहीं हुई. मैं पहलेसे होशियार रहती थी. मैं उसके नामसे डरती थी. मैं तुम्हें इतना प्रेम करती हूँ, प्यारे, कि कुछ होता तो क्या किसी तरह तुमसे उसे बिना कहे मैं रह सकती थी ?" उसने उसके

हाथोंको पकड़कर धीमे-धीमे अपने गीले चेहरे पर फेरा, गालोंपर दबाया. अभियुक्तापर निर्दोष, निरपराधी बच्चेकी सी आर्द्र सच्चाई और उपहास्य भावुकताके साथ हिलकी बाँधकर वह उसके हाथोंको अपने गालोंके नीचे दबाए रोती रही, रोती रही.

उस समय लखनपालको सम्पूर्ण रूपसे उसकी आत्माकी सत्यतामें विश्वास हो गया.

"मैं विश्वास करता हूँ, मेरी बच्ची, मेरी बेबी" उसने हल्के-हल्के उसके केशोंमें हाथ फेरते हुए कहा, "उद्विग्न न होओ, रोओ मत. बस हम फिर उस तरहकी कमजोरीमें न पड़ें, इतना ही चाहिए कुछ हो भी गया है तो खैर; हो ही गया सही. लेकिन अब हमको उसे फिर न होने देना होगा".

"जैसा कहो" लड़कीने अनायास कह दिया. "जो तुम कहो मेरे राजा" पहले लखनपालके हाथ और फिर उसके कोटका छोर लेकर उसे चूमा, और बोली, "अगर नहीं चाहते मुझे, या उतना नहीं चाहते. तो ठीक है जैसा कहते हो वैसा ही सही".

लेकिन उसी रात फिर वह लोभको रोक नहीं सका और गिरे बिना न रहा. फिर आये दिन ऐसा ही चला. यहाँ तक कि उन घड़ियोंमें अब उसे न शर्म सताती, न निन्दा व्यापती. फिर तो यह लगी बान बन गई, जिसमें पछतावेका सब भाव ऐसा डूब गया कि पता न लगा

१६

लखनपालके हक़में यह कहना होगा कि उसने भरसक वह सब किया जिससे लुवीकी जिंदगी आराम और चैनसे बसर हो सके. उसने जान लिया था कि उसे यह ठिकाना छोड़ना होगा. जगह दूर शहरके ऊपर घोंसलेके मानिन्द थी; पर छोड़नेकी मजबूरी इस वजह से न थी कि जगह वह बेआराम और तंग थी. बल्कि वजह थी सिकन्दरा जो दिनपर दिन चिड़चिड़ी, बदमिज़ाज और ख़ौफनाक होती जा रही थी. आखिर उसने छोटा-सा मकान किराये पर ले लिया. वह शहरके छोरपर था,

और उसमें दो कमरे थे और रसोईके लिये कोठरी थी. जगह महंगी न थी. नौ रुपये महीने किराया था. जिसमें गर्मीके लिये लकड़ीका खर्च शामिल न था. इसमें बेशक उसे दिक्कत थी. जगह-जगहकी ट्यूशनके लिये उसे लम्बी-लम्बी दूर जाना पड़ता था. पर उसे अपनी तन्दुरुस्तीका भरोसा था और अपने धीरज और अध्यवसायमें विश्वास था.

अकसर कहता, "मेरी टाँगें मेरी अपनी हैं, उनके लिये मुझे किसीके पास जाकर जवाबदेही तो नहीं करनी है". और सच ही पैदल चलनेमें वह एक ही था. एक बार मजाकके तौरपर जेबमें वह एक चालघड़ी रखकर निकल पड़ा. शाम तक जो घड़ीमें हिसाब किया तो सोलह मील वह चला था. इसमें यह ध्यान रक्खा जाय कि टाँगें उसकी मामूलसे लंबी थीं तो उसके सोलह मील असल बीस मीलसे कम नहीं बैठते थे. और उसे दौड़ना-धूपना भी काफी पड़ता था. कारण, लुवीके पासपोर्टके सिलसिले में और घरमें कुछ सामान असबाब मुहैया करनेकी जरूरतकी वजहसे ताशके खेलमें जब-तब जो उसने जीतकर जमा किया था सब स्वाहा हो चुका था. उसने फिर ताशकी बाजी लगाना शुरू किया, जो शुरूमें मामूली तौरपर, पर जल्दी उसे यकीन हो गया कि ताशके खेलमें अब उसका सितारा नीचा हो गया है और नतीजा भयंकर हो सकता है.

अब तक लुवीके साथ उसके सम्बन्धके बारेमें उसके दोस्तोंमें कोई दुराव-छिपाव नहीं रह गया था. फिर भी उसके सामने वह यही जताता रहा, और ऐसे ही बरतता रहा कि मानो लड़कीके साथ उसका सम्बंध हमदर्दी और भाईचारेका है. जाने वह यह न समझ पाता था, न समझना चाहता था कि उसके लिए कितना संगत और सही यह होता कि वह बहाना न भरता और झूठ न बरतता. या शायद वह यह समझता तो था लेकिन एक बँधी आदत को कैसे बदले यह उसे न सूझता था... लुवीके साथ अपने सम्बन्धोंमें वह दोयम हो रहता. मानो सिर्फ भुगत रहा हो. पहल लुवीकी होती. स्नेह और प्रेमको लेकर वही उसके प्रदर्शन में आगे बढ़ती. वह लुवी ही बनी रही और लखनपाल मानो यह बिल्कुल भूल गया था कि पासपोर्टमें उसने उसका असली नाम इरीना देखा है.

यह लुवी जो अभी हालतक सैंकड़ोंको अपना शरीर एक उदासीन उपेक्षासे या हदसे हद दिखावेके चावसे देती थी, लखनपालके प्रति प्राएपएसे आसक्त हो आई थी. उसमें अनुराग था और ईर्ष्या थी. वह अपने विचार, भाव और अपने शरीरसे सम्पूर्ण निर्भर भावसे लखनपाल से चिपटी थी. उसने उसके मित्रोंको सहज भावसे स्वीकार कर लिया. जौर्जियन प्रिंस मजेदार और दिलचस्प आदमी था. खुली तबियतका सोमदेव उसके और नजदीक था. वह ताजा था और खुशमिजाज. लेकिन सोमवास्तीके गुमानभरे बड़प्पनसे जाने कैसा एक डर लग आता. और लखनपाल उसके लिए स्वामी था, उसका देवता था. वह अनुभव करती थी, यद्यपि बात यह बुरी थी, कि वह उसका स्वत्त्व है, उसकी सम्पत्ति है. लखनपालको अपना स्वत्त्व बनाकर समझनेमें उसे रस मिलता था.

यह सदाकी देखी परखी बात है कि व्यक्ति जो भरपूरताके साथ प्रेममें रह चुका है उसकी वासना और आवेगके दाँतों तले आकर नोंचा और कुचला जा चुका है, जो इस तरह निचुड़ गया है, वह फिर कभी तीव्र और उत्कट उस प्रेममें नहीं पड़ सकता जो एक साथ पवित्र प्राएदायी और आत्मार्पएसे पूर्ण होता है. लेकिन इस विषयमें स्त्रीके लिये न नियम है न मर्यादा. लुवीके सम्बन्धमें तो यह खास तौरसे प्रमाणित हुआ वह लाखनके आगे खुशीसे उसकी बांदी बनकर चाकरीमें धरती पर रेंगनेको तैयार थी. लेकिन उसीके साथ चाहती थी कि वह लुवीका इससे ज्यादा बनकर रहे कि जैसे मेज है, नन्हा वह कुत्ता है या रातकी उसकी पोशाक है. लेकिन लाखन सदा इसमें कम उतरता. वह उस आकस्मिक प्रेमकी मांग और प्रहारके समक्ष जो एक नन्ही धारसे इतनी तेजीके साथ बाढ़ भरी नदीके समान तटोंको तोड़ता हुआ भर निकला था, वह हमेशा अपनेको हेठा पाता. और अक्सर एकाधिक बार खीज और कड़वाहटके साथ वह मनमें कहता, हर शाम मुझे उस हसीन युसुफ का पार्ट अदा करना पड़ता है. लेकिन आखिर वह युसुफ तो विभोर प्रेयसीके हाथों अपना अधोवस्त्र देकर कम-से-कम बच तो निकला था. लेकिन मैं इस जूयेसे कब छुटकारा पा सकूंगा.

इसके अलावा लखनपालका मन इस बातसे भी दबता था कि उसके विद्यार्थी साथियोंके उसके और लुवीके तरफ रुखमें कुछ-कुछ दुविधा और फरक हो चला है. अभी हाल तक तो वे उसके घरकी तरफ ऐसे टूटकर पड़ते थे जैसे प्रकाशपर पतंग. घर वह शानदार तो न था, पर उसके दरवाजे सदा खुले रहते और वहां स्वागतका भाव रहता. अब उन साथियोंमें, लुवीके प्रति उनके शब्दोंमें, लहजेमें हावभावमें किसी तरह उस स्वीकृत आदर और मानका भाव नहीं चीन्ह पड़ता था जो उन युवक मित्रोंके अपने साथीकी पत्नी या प्रेयसी या बहन या मित्रके प्रति बर्तावमें ना चाहिये. अपने दोस्तोंके मामलेमें ऊपरी तौरपर लुवीके प्रति उनका लिहाज भरी बर्ताव देखकर लखनपाल अनुभव करता कि वे सोच रहे हैं:

"तुम वही न हो जो चकलेमेंसे उठा लाई गई हो कि कम खर्च या बिन खर्च भोगी जा सको. तुम पैसेके खातिर बीसियों सैकड़ों आदमियों-को अपनेको देती रही हो. अब भी सबके बावजूद तुम आखिर हो वहीकी वही पेशेवर. तुम्हारे पहले पेशेका दाग किसी तरह धुला नहीं है. तुम्हें कोई रातके लिए बिना पसोपेश माँग सकता है और तुम बिना सोच-विचारके उसकी माँगपर पेश हो जाओगी, हुए बिना रह न सकोगी."

और एक अवसाद और वितृष्णाके भावसे, जिसको वह पकड़ न पाता था, लखनपाल सोचता कि अपने साथियोंके ऐसे विचारमें उसका अपमान गर्भित है. यानी, वे इस तरह उसे भी लुवीके धरातलपर ही ले आते हैं!

लखनपालके भावमें एक उदासी आ रही थी, एक उतार लुवीके प्रति एक प्रकारकी प्रच्छन्न शत्रुताने उसके मनके किनारोंको कुतरना शुरू कर दिया था. उससे छुटकारा पानेकी टेढ़ी मेढ़ी तरकीबें अकसर उसके मनमें उठतीं. इनमें कुछ तो इतनी भद्दी और बदनीयत होतीं कि वह अन्दर ही अन्दर जब भी उनके बारेमें पीछे सोचता, तो घबरा उठता.

"मैं मनसे और नीतिसे दोनों तरह गहरा डूबता जा रहा हूं." वह कभी सोच उठता और अपनी ही दहशतमें हो आता. "वह जो मैंने किसीसे सुना या कहीं पढ़ा है सच ही है. कि एक पढ़े लिखे मोहज्जब

आदमी और एक अपढ़ औरतमें वास्ता हो जाए तो औरत मर्दके दिमागी सतह तक तो लाई ही नहीं जा सकती. हमेशा मर्द ही औरतकी नीचाई पर आ जाता है."

दो हफ़्तोंके अन्दर लुवीका आकर्षण उससे हटने लगा. उसके प्रेमके निवेदनपर उसे अरुचि होती. बहुत दबावपर मानो वह मानता और ऐसे जैसे कि तरस खा रहा हो!

इधर लुवीके जीवनमें मानो पहली बार पांव तले थिर धरती आई थी और उसको चैनसे बैठना मिला था. इससे बहुत जल्दी ही मानो भरकर वह खिल आई. रूप उसका निखर आया. मानो कली हो जो कलतक मुरझाई थी, लेकिन झुलसती गर्मीके बाद बारिशकी बूँदे जो पड़ी कि पंखुड़ियाँ खोलकर वह खिल आई. मुलायम चेहरेपर से झुर्रियोंकी झाईं ग़ायब हो गई. खोया बेगाना-सा भाव वहांसे उड़ गया. अब वह सशंक और चकित न दीखती थी. दृष्टि अब उसकी साफ थी और आंखोंमें चमक आ गई थी. देह उसकी अब भर आई और ताजा हो उठी. ओठ सुर्ख लगने लगे. लखनपाल जो हर रोज उसे देखता था इधर ध्यान न दे सका. अगर्चे अन्तर उसे भी अनुभव होता था, पर उसके मित्र जो सराहनामें लुवीको जाने क्या क्या कहते तो लखनपाल सोचता कि कुछ नहीं, यूंही मजाक है. नाराज होता कि लड़के नाहक उसे सताने छेड़नेको कहते हैं.

गृहरक्षिकाके तौरपर लुवी सन्तोषप्रद न साबित हुई. यह सही है कि वह बढ़िया मसालेदार सब्जी बना सकती थी. गोश्त छोंकना भी उसे आ गया था, रोटी भी बना लेती थी और लखनपालकी देखरेखमें चाय बनाने और परोसनेका ढंग भी उसे आ गया था. मगर इससे आगे वह नहीं जा सकी. वजह शायद यह कि हर हुनरमें हर आदमीके लिए कुछ मियाद है कि उससे आगे नहीं जा सकता. पर फर्शको धोनेका उसे शौक़ था और वह उसे बहुत साफ रखती. यह वह इस कदर इतनी बार करती कि कमरेमें सील रहने लगी और एकाध बार दीमक लगनेके आसार दीख आए.

एक बार अखबारमें लखनपालने इश्तहार देखा. उससे मालूम होता था कि तीन रुपये रोज घर बैठे बखूबी उससे कमाया जा सकता है. किश्तोंपर मोजा बुननेकी मशीन झट खरीद ली गई. उसके चलानेमें ज्यादा होशियारी दरकार न थी. लखनपाल,सोमदेव, नेजरसने आसानी से उसपर काबू पा लिया. बस लुवी रह गई जो उसकी जुगत न साध पाई. वह कहीं अटकती, या धागा कहीं हिलगा रह जाता, या कुछ भी खराबी होती तो उसे मर्दोंकी मददके लिये देखना होता. लेकिन दूसरी तरफ नकली फूल और गुलदस्ते बनानेका काम वह चुटकियोंमें सीख गई. उन्हें वह ऐसा सुघड़ और खूबसूरत बनाती कि महीने भरके अन्दर वहाँके जनरल और कोऔपरेटिव स्टोर और दूसरी दूकानोंसे उसके कामकी मांग होने लगी. अचरजकी बात यह कि सीखनेको उसने एक सिखानेवालेसे सिर्फ़ दो सबक लिए थे, बाकी अपने आप एक किताबके सहारे-सहारे सीख गई थी. उसमें नमूने बने होते और वैसे ही वह बना चलती. यों हफ्तेमें एक डेढ़ रुपयेसे ज्यादेके फूल वह न बना पाती, पर इस पैसेसे उसका मन मानसे भर आता और वह बड़ी खुश होती. पहली कमाईके रुपयेसे उसने जाकर लखनपालके लिए एक सिगरेट-होल्डर खरीदा.

कई बरस बाद लखनपालने अपने मनमें यह स्वीकार किया कि उसके जीवनका यह समय शायद सबसे शान्त, सुन्दर और सुखका रहा. था. वह याद करता, और उसे सच्चा पछतावा होता. एक उदास अभिलाषा करबट ले उठती. रहता. तब वह विद्यार्थी था, फिर वकील हुआ, लेकिन वे दिन फिर न आये. लुवी अनघड़ थी, शाइस्ता नहीं थी. शायद गवांर थी और मूरख भी. लेकिन गिरिस्तनका भाव उसमें महज समा चला था. आस-पास सेवासे चैन और शान्तिका वातावरण उसे बनाना आता था. यह गुण उसमें जन्मजात था. इसीके कारण था कि लखनपालका घर जल्दी मित्रोंके लिए केन्द्र बन गया. वहाँ पहुंचकर मानो तनाव उनसे उतर जाता, वे चैन पाते और खुल आते. जीवनके कठोर यथार्थ और दुर्द्धर्ष संघर्षमें,जिसमेंसे कि वे गुजर रहे थे, उसके अभावों, परेशानियों और

परीक्षाओंमेंसे, यहाँ तक कि भूखको झेलते हुए वे हारे थके आते और यहाँ ठंडक पाते. लखनपाल कृतज्ञ, उदास, संस्मरणोंमेंसे याद करता कि कैसे लुवी सहानुभूतिलीन सेवामें दत्तचित्त हो रहती. जब सब समोवारके चारों तरफ बैठकर बात करते, बहस करते, एक दुसरेके सपनोंमें भाग बँटानेकी कोशिश करते, तो वह चुप बनी रहती और सबकी आवश्यकताओं पर उसका ध्यान रहता.

अक्षर-शिक्षाकी गति मगर धीमी थी. ये अपने आप बने हुए अध्यापक लोग अलग-अलग और साथ-साथ विवाद करते कि मानव मस्तिष्कका शिक्षण और उसकी आत्माका विकास आंतरिक प्रेरणाओंमें से प्राप्त होना चाहिए. लेकिन वे ही लुवीके दिमागमें उन तत्त्वोंको भरने की कोशिश करते जिन्हें वे आवश्यक और अपरिहार्य समझते थे. वे उसके साथ उन वैज्ञानिक प्रश्नोंकी चर्चाका प्रयत्न करते और उन्हें समाधान तक ले जानेका आग्रह रखते जिनको किनारे ही रहने दिया जाता तो हर्ज न था.

मसलन गणित सिखाते समय लखनपालको लुवीकी अपनी आदिम देहाती जंगली, बल्कि कहो बचकीली, गिनतीकी पद्धतिसे चिपटा रहना सह्य न था. वह एक दो तीन और पाँचको जानती और उन्हींकी उलट पलटसे अपना काम चलाती. जैसे कि बारह उसके लिये थे, दो तिये दो बार. ग्यारह उसके लिए तीन तिये और दो हुए. यह तो लखनपालको भी मानना होता था कि इस अपने तरीकेसे वह आन-फाननमें मजेमें सौ तक गिन ले जाती थी. मगर इससे आगे बढ़नेको वह तैयार न थी. और सच पूछिये तो उसकी कोई खास जरुरत भी न थी. लखनपालने दहाईकी पद्धतिसे गिनती गिनना उसे सिखाना चाहा. पर सब कोशिश बेकार रही. वह किसी तरह भी यह सीख ही न सखी. इस पर वह अपना धीरज खो रहता और उसपर चिल्ला आता. तो वह चुपचुपाती उसके चेहरेको देख उठती. आँखें फटी-सी होती और उनमें अचरज भरा होता. फिर उनमें अपराध लिख आता. और पलकें भरते आसुँओंसे भारी हो आतीं और मिलकर वे फिर बड़े काले तीरके मानिन्द

बन्द हो आतीं.

साथ ही जाने दिमागकी किस अजब लहरके अधीन हिसाबमें जोड़ गुणाको तो उसने अपेक्षाकृत आसानीसे सीखकर काबू कर लिया, लेकिन घटा और भाग उसके लिये दीवारकी ऐसी अड़ बन गये कि खुलते न थे. लेकिन हैरतकी तेजी और सूझ-बूझसे वह हर तरहकी टेढ़ी मेढ़ी दिमागको चकरानेवाली पहेलियां जबानी सुलझा डालती. देहातोंमें हजारों वर्षोंसे चलनमें चलती हुई बहुतेरी पहेलियां उनमेंसे उसे स्वयं याद थीं. जुगराफियाकी तरफ वह बिल्कुल अनबूझ थी. यह सच है कि उसे मुहल्लेके, बागके, घरके बारेमें पूरी सुध और जानकारी थी. कहना चाहिये कि लाखनसे सैकड़ों गुनी ज्यादे. यों कहिये कि उसमें धरतीके किसानकी सहजबुद्धि और उसका चमत्कार था. लेकिन धरतीके गोल होनेकी बात उसे कतई मंजूर न थी. न वह क्षितिजको समझनेको तैयार थी. जब बताया जाता कि पृथ्वीका ग्रह गेंदकी तरह आकाशमें घूमता है तो सुनकर वह हंसीमें फूट पड़ती. जुगराफियाके नक्शे उसे तरह-तरहके रंगोंसे रंगी कोई ऐसी चीज जान पड़ते कि जिसमें सूरत हैं पर मतलब नहीं है. लेकिन अलग-अलग चीजोंको वह जल्दी और सही सही ध्यानमें ले लेती और उन्हें याद रखती. लखनपाल उससे पूछता कि इटली कहां है ? लुवी फौरन बताती "यह तो है जो बूटकी तरह है." स्वीडन और नोरवे कहां है ? विजयके भावसे फौरन हाथ रखकर कहती—"यह रहा, छतसे कूदता हुआ कुत्ता बना तो है." बाल्टिक सागर ? "घुटनोंके बल बैठी बुढ़िया यह रही." काला सागर ? "यह जूता." स्पेन ? "टोपीदार मोटूमल ये हैं"....इत्यादि. इतिहासमें हालत कुछ बेहतर न थी. लखनपालने ध्यानमें यह तथ्य नहीं लिया कि लुवीका मन शिशुकी तरह कल्पना-जगतमें रमता है, इतिहासके सारको रस और साहससे भरी नाना कथाएं सुनाकर बड़ी आसानीसे अवगत कराया जा सकता है. लेकिन वह तो इम्तहानोंके तरीकेको जानता था और चौथी पांचवीं क्लासोंमें होनेवाली पढ़ाईके ढंगसे परिचित था. इससे नामों और तारीखोंपर वह लुवीका और अपना मगज फोड़ता रहता. इसके

अलावा वह बहुत बेसब्र था. बेकाबू हो जाता और झुँझला पड़ता. जल्दी थक जाता. और सच यह कि चाहे दबी कितनी हो लेकिन उसमें उगती और बढ़ती एक गुप्त घृणा उस लड़कीके लिये जिसने अचानक और अतर्क्य ढंगसे उसके जीवनको इस तरह उलझनमें घेर डाला था, सबक देनेके इन घंटोंमें रह-रहकर और वेगके साथ फूटे बिना न रहती.

नेजरस उनमें गुरु शिक्षकके तौरपर ज्यादे सफल था. उसका सितार और मेंडोलिन खानेके कमरेमें रिबनके सहारे खूँटियोंसे टंगे रहते. सितारके तारोंकी कोमल गूँज लुवीको ज्यादे खींचती. मेंडोलिनकी धाक की आवाज उसे चोट देती सी लगती और उसे मानो चिढ़ा देती थी. ज्यों ही नेजरस आया—और हफ्तेमें तीन या चार बार शामके समय वह आता था—झट बढ़कर दीवारसे वह सितार उतारती, अपने रुमालसे झाड़कर वह उसे पोंछती, और उसके हाथोंमें थमा देती. उसके तारोंको कुछ मिनटोंमें एक सुरमें मिलाकर वह खखारकर गला साफ करता और आरामसे पीछे कमर टेककर बैठ जाता. तब वह टांगपर टांग रखे अपने भरे गलेसे गाना शुरू करता. उसका गला खुशगवार था और आवाज़ किसी कदर भारी और भरपूर थी.

चुंबन की यह लुभावनी आवाज़
रात की सुन्न हवा में थिरकी आ रही है
मनों को छीने ले जा रही है।
प्रेमियों को संदेसा है—
रात है और प्यार है
प्यार है और रात है।
... ...
मिलन की एक घड़ी के लिये
जिया मेरा अकुला रहा है
अरे, धड़-धड़ धड़क रहा है
आओ ना, आओ ना, आओ ना।

लगता कि वह अपने गानेसे छा गया है. आँखें उसकी बन्द होतीं.

गानेमें भावपूर्ण जगहोंपर गर्दन हिल आती थी, आरोह अवरोहके बीच समपर वह तारोंसे एकाएक अपना दायाँ हाथ अलग खींच लेता, पल भर सुन्न और शान्त बैठा रहता जैसे कि मर्मरकी मूरत हो. तब वह आँखें खोलता और अपनी अस्पष्ट सी निगाहसे लुवीको मानो भेदता हुआ देखता. उसे जाने कितने लोकगीत याद थे, और भजन और तरह-तरहके हलके गीत.

लेकिन सबसे अधिक जो लुवीको लुभाते पद थे आर्मिनिया प्रदेशके प्रसिद्ध लोकगीतके ये छन्द:—

वह शकल है भोली भाली
पर गालों पर गोलाबी
औ अधरों पै गुल्लाली
वाहे वाह, वाहे वाह !

इस तरहके बेशुमार छन्द प्रिंसको याद थे. लेकिन अंतकी टेक करीब सबकी एक ढंगकी होती थी.

वाह वा री ओ शरबतिया
तो से कहूँ री यह कनबतिया
काहे गाल पै मोहे चूमे
चूमे तो चूम मेरा मन रसिया।

हल्की विनोदकी चीज़ जब वह गाता तो चेहरा उसका खुला और सीधा रहता और लुवी इतनी हँसती, इतनी हँसती कि दर्द होने लगता, यहां तक कि आँसू आ जाते और दोहरी हो हो रहती. एक बार गानेके सुरमें बहनेके बाद वह रुक न पाती और खुद भी उसमें शामिल हो जाती. और दोनों जने एक सुर एक तानमें गाते रहते. हलके-हलके लुवी नेजसरकी आदी हो गई और किसी तरहका असमंजस बीच न रहा और अकसर वे साथ मिल कर गाते. लुवी की आवाजमें घेर ज्यादे न था पर वह कोमल थी और मीठी. जाने किस प्रकार संभव हुआ पर उसके पेशेकी पिछली ज्यादतियोंका अभावोंका और शराबोंका उसके गलेपर असर न पड़ा था.

और खासकर भगवानकी यह एक देन ही कहिये कि उसमें एक जन्मजात सहज क्षमता थी कि वह बेहद रूही तौरपर खूबसूरतीके साथ मानो अपना ही हो वह किसी रागकी संगत अदा कर देती. फ़िर तो उनकी संगतमें वह वक्त भी आ गया कि जब प्रिंसको कहनेके बजाय खुद प्रिंस ही लुवीसे गानेकी फरमाइश करता. लुवीको ऐसे लोक-गीत जो हर किसीको मन भा सकते थे अनेकानेक याद थे और वह कोहनी मेजपर टिकाये हथेलियोंमें सिर लेकर देहातकी किसान स्त्रीकी तरह संगतमें गा उठती. आवाज मद्धम होती, सावधान और कोमल.

ओह, रातें मुझे भारी हो गई हैं
काटे कटती नहीं
साजन से बिरहा, प्रीतम से बिछोह
ओ री नारि, मूरख तैंने क्या किया
अपने प्यारे को क्यों कहा सुना ?
ले, वह रूठ गया और आता नहीं !

"...आता नहीं" प्रिंस इन आखिरी शब्दोंको लुवीके साथ दोहराता और अपने घुँघराले बालों वाले एक तरफ झुके सिरको डुला उठता. तब दोनों कोशिश करते कि गीतको ऐसे समाप्त करें कि सितारके काँपते तारोंकी क्रमसे क्षीण होती हुई ध्वनिके साथ ही उनकी वाणी भी शनैः-शनैः गिरती हुई शांत होती जाय. यहाँ तक कि मालूम न हो पाय कि ध्वनि कहाँ समाप्त हुई और निःशब्दता कहाँ शुरू हुई.

लेकिन जोर्जियाके प्रसिद्ध कवि रुस्तावेलीकी पदावलीके संबंधमें प्रिंसको बुरी तरह मुँहकी खानी पड़ी. सच ही उन कविताओंका सौंदर्य मूल भाषाकी ध्वनि और नादका था. लेकिन वह अपने सधे गलेसे तरन्नुमके साथ उन पदोंको तनिक गाना शुरु करता कि लुवी शुरुमें तो आती हुई हँसीको बहुत देरतक दाबनेकी कोशिशमें काँपती रहती, फिर खिलखिलाहटमें फूट कर ऐसी पड़ती कि सारा कमरा उसकी लहरोंसे देरतक गूँजा करता. तब नेजरस गुस्सेमें उन श्रद्धेय कवि गुरुकी पदा-

वलीकी पुस्तकको जोरसे बंद करता और लुवीको खूब सख्त सुस्त कहता. कहता कि वह गधी है गधी, खच्चर ! लेकिन उसके बाद जल्दी दोनोंकी बन भी जाती.

नेजरसकी तबीयतमें कभी-कभी शरारतके भी दौर आया करते थे. तबीयत मचल उठती और खेल आना चाहती. तब वह ऐसे देखता मानो उसे अपने आगोशमें ले लेना चाहता है. उस दृष्टिमें अतिशयता होती, इशारे होते और मानो लबालब भरा प्रेम होता. और वह मानो नाटकीय ढंगसे दिल थामकर कहता, "ओ मेरे जहानकी मलिका ! अल्लाहके बहिश्त ! ऐ रोशन गुलाब ! तेरे लबोंकी शराबो शहदसे मीठा जहानमें कुछ नहीं. तेरी साँसके साथ जहान उठता और गिरता है ! ला, अपने इन लबेलालींसे मुझे मस्तीका एक घूंट दे तू कि जिसका सानी कायनातमें कोई नहीं".

लुवी हँस पड़ती, झिड़कती और उसके हाथोंको थपकसे अलग करती और कहती कि लखनपालसे कह दूँगी !

"व्हा:" प्रिंस अपने हाथ फैलाकर कहता, "लखनपाल क्या है, वह मेरा दोस्त है, वह मेरा भाई है, जिगरी यार है. लेकिन क्या उसे मालूम है कि 'लाफ़े' क्या चीज है. क्या यह मुमकिन भी है कि तुम उत्तरके लोग 'लाफे' को समझ तक सको. यह तो हम हैं जोर्जियाके वासी जो 'लाफे' के लिए सिरजे गए हैं. तो देखो लुवी मैं अभी दिखाता हूं कि 'लाफे' क्या है." कहकर वह एकाएक अपनी मुट्ठियां भींच लेता, सारे बदनको आगे झुका लाता और आंखोंको भयावनी बनाकर उसकी पुतलियोंको घुमाना शुरू कर देता, दांतोंको मिसमिसाता. शेरकी तरह दहाड़ना शुरू कर देता. लुवी यह जानते हुए भी कि यह आखिर मजाक ही है डरसे कांपे बिना न रहती और बचनेके लिए ताबड़तोड़ कमरेसे बाहर भाग जाती. तो भी यह कहना होगा कि इस युवकमें जो यों छोटेमोटे मामलोंमें खुला और निर्बन्ध था कुछ विशेष नैतिक निषेध बद्धमूल थे जो कि जोर्जियन माताके दूधके साथ ही उसने प्राप्त किए थे.

जैसे यह कि मित्रकी पत्नी सदा वर्जनीय और आदरणीय है. और शायद वह जानता था कि लुवीके साथ एक बार एक क्षणके लिए भी वह अवैध संबंधमें आया तो फिर हमेशाके लिए वह एक तरह इस घरेलू शांत और प्रसन्न संध्याओंसे निर्वासित हो जाएगा जिनका वह आदी होता जा रहा है. यह इस तरहकी सहजबुद्धि चाहे आप कुछ कहिए पूरबके आदमियों-में बहुधा पाई जाती है. देखनेमें चाहे वे सीधे-भोले लगें तो भी, पर शायद उसी कारण, उन्हें यह अंतस्थ प्रज्ञा मानो सिद्ध होती है, और ब्रेजरसकी जहांतक बात है वह बिश्वविद्यालय भरमें अगरचे सभीके साथ तूसे बात करनेतक वास्ता बनाए हुए था पर वास्तवमें इस अजनबी शहर और अबतक अजनबी बने हुए देशमें वह अपनेको भीतर बहुत अकेला अनुभव करता था.

लुवीको पढ़ानेके काममें सबसे ज्यादा आनन्द सोमदेव लेता. यह तगड़ा खासा जवान तबियतका लापरवाह था. उसे खुद मालूम न था, पर किसी तरह अनजाने वह स्त्रीत्वके असरमें खिचा आ रहा था. यह आकर्षण अलग ही होता है. उसे बांधना मुश्किल है, रोकना मुश्किल है. स्त्रीत्व वह बाह्य अनाकर्षकता और अकोमलतामेंसे भी काम कर जाता. शिष्या अग्रणी थी, अध्यापक अनुगामी. लुवीकी प्रकृतिके सहज गुण—आदिम पर अविकृत, गहन और मौलिक उसे अपनी ही निराली राहकी खोजपर लिए जाते थे. बताई रीति वह न ले पाती थी. इस तरह जैसा कि अकसर बच्चोंके मामलेमें होता है, उसने पहले लिखना सीखा फिर पढ़ना. स्वभावसे वह आज्ञानुवर्त्ती थी और नम्र, पर मस्तिष्क में कुछ उसके ऐसा निरालापन भी था कि जब पढ़ती तो व्यंजनके साथ स्वरको या स्वरके साथ व्यंजनको रखनेसे वह एकदम इंकार कर देती. हां लिखनेमें वह यह आसानीसे कर लेती थी आरम्भिक विद्यार्थियों की आदतके प्रतिकूल उसे लिखना पसन्द था, और लिखने बैठती तो वह कागजपर दुहरी होकर झुक आती. सांस जोरसे चला करता, मालूम होता जैसे आयासके श्रमसे हांफकर मानो कागजपर पड़ी किसी कल्पित

धूलको उड़ा रही हो. रह रहकर जीभ होठोंपर फेरती और फिर उसे अन्दर लेकर कभी इस गाल तो कभी उस गालको ठेलकर फुला रहती. सोमदेवने भी इसमें विघ्न नहीं डाला. जिधर उसकी वृत्ति गई उसी ओर चलनेको वह राजी हुआ. कहना होगा कि सवा डेढ़ महीनेके अर्से में वह इस निरीह प्राणीके प्रति अनुराग रखने लगा था जो संयोगसे उसकी राह आ गया है और फिर जिसे मिलना नहीं होगा. सबके लिए बन्धुभावसे भरा उसका विशाल हृदय एक कोमल भावसे भर आया. एक विशाल हाथीमें नन्ही-सी एक आहत चिड़ियाके प्रति सहानुभूति हो तो क्या हो ? कुछ वैसी ही करुणा और विस्मयसे भरा भाव उसमें दर्द दे आया था.

यह पढ़ाई दोनोंको ही छुट्टी देती. यहां भी विषय और ग्रंथका चुनाव लुवीकी रुचिके अनुसार निश्चित होता. सोमदेव उसकी तरंग और उसके रूझानपर ही चलता. मिसालके लिए जैसे लुवी 'डान क्विकजोट' पर काबू नहीं पा सकी, जल्दी थक आई और आखिर उससे मुंह मोड़कर वह 'रोबिन्सन क्रूसो' की तरफ झुकी. वहां उसका बहुत मन लगा और खासकर जहां रोबिन्सन अपने रिश्तेदारोंसे मिलता है उस दृश्यपर वह आंसू बहाए बिना न रहती और खुलकर रो उठती. डिकन्स उसे पसन्द आता और उसके सूक्ष्म सुन्दर व्यंग वह बड़ी आसानीसे समझ लेती. लेकिन अंग्रेजी तौर तरीकोंके बहुतसे नियम उसके लिए विदेशी रहते और खाक समझ न आते. उन दोनोंने एकसे ज्यादा बार चेखबको पढ़ा और लुवी बिना किसी कठिनाईके स्वतन्त्र भावसे उसके शिल्पकी सुघरता उसकी उपमाएँ उसकी भाव-व्यंजनाकी सुन्दरता गह लेती. बच्चोंकी कहानियाँ उसको हिला देतीं. वे उसे इस हदतक छूतीं कि उसे उस समय देखनेसे ही अच्छा लगता और खुशीसे हंसे बिना न रहा जाता. एक बार सोमदेव ने उसे चेखबकी कहानी 'दौरा' पढ़कर सुनाई. उस कहानीमें, जैसा कि मालूम ही है कि, एक विद्यार्थी पहले पहल अपनेको वेश्यालयमें पाता है. अगले दिन फिर उसको पछतावेका एक ऐसा गहरा दौरा पड़ता है कि मानो रेशे-रेशे उसे धून डाला गया हो. पापकी चेतनाकी तीव्र मनोवेदना

मनका चैन खा जाती है. सोमदेवको स्वयं आशा न थी कि इस कथानकका उसपर इतना जबरदस्त असर होगा. वह रोई, अपने उसने हाथ मले, हा हा करके सौगन्ध खाई और बराबर कहती जाती थी कि हे भगवान! लिखनेवालेने यह सब लिया कहांसे और लिखा किस तरहसे, अरे यह तो हूबहू सच है. यही तो है, जो हम सबके साथका सच है. एक बार वह अपने साथ ऐबे प्रीवास्टका प्रसिद्ध उपन्यास लेकर आया. कहना होगा कि सोमदेव खुद उस असाधारण पुस्तकको पहली बार पढ़ रहा था. लेकिन तो भी लुवीने उसे कहीं ज्यादा सराहा और समझा. इस पुस्तक में प्लाटका अभाव था, वर्णनमें अनोखापन न था, भावनाका अतिरेक था, शैली पुरानी थी. इस सबसे सोमदेवका उत्साह कुल मिलाकर मंद होता था. लेकिन लुवी उस अनोखे अमर उपन्यासकी सुख दुखकी गाथाओं को उसके मार्मिक अथवा कि अनावश्यक ब्यौरोंको मानो कानोंसे ही ग्रहण नहीं करती थी बल्कि जैसे अपनी आंखोंसे और पूरी तरह खुले अपने अकृत्रिम हृदयसे उन्हें उपलब्ध करती जाती थी.

"सेंट डेनिसपर हमारी स्वीकृतिका विचार हमें भूल गया." सोमदेव सुनहरे बेतरतीब बालोंके सिरको जिसपर लेंपके शेडका प्रकाश था किताब पर झुकाये पढ़ रहा था. "हमने धर्मके नियमोंका उल्लंघन किया और उसका बिना विचार किए आपसमें विवाहित हो गए."

"वे कर क्या रहे हैं ? यानी सिर्फ अपनी मर्जीसे ? बिना पादरी पुरोहितके ? यही ना ?" लुवीने अपते कृत्रिम फूलोंको झपटकर अपनेसे अलग करके बेचैनीके साथ पूछा "यह सब क्या है ?"

"क्यों, क्याकी क्या बात है ? मुक्त प्रेम है. बस इतनी सी बात है और ठीक बात है. जैसे कि समझो तुम और लखनपाल."

"ओ दैया, यह तो बिल्कुल दूसरी बात है. तुम जानते हो कि मुझे कहाँसे लाए हैं. लेकिन यह तो मासूम, इज्जतदार कुनबेकी युवती कन्या है. यह तो उसके लिए जरूर ही नीच और हीन काम हुआ. और मैं कहती हूं सोमदेव, पीछे जाकर वह उसे छोड़े बिना न रहेगा. ओह, बेचारी लड़की ! अच्छा, अच्छा, अच्छा आगे पढ़ो."

लेकिन कुछ पृष्ठोंके बाद लुवीकी सब सहानुभूति और करुणा पुरुष की तरफ़ हो गई थी जिसे छला गया था.

"तो भी महाशय—का गुप्त आना जाना मुझे हैरतमें डालता था, मुझे उन खरीदी गई छोटी मोटी चीजों और उपहारोंकी याद आई जिनका खरीदना हमारे बितसे बाहरकी बात थी. इस सबमें एक नये प्रेमीकी उदारताकी झलक मिलती थी. लेकिन मैं अपनेको दोहरा दोहरा कर कहती—नहीं नहीं यह असम्भव है कि मैनन मुझसे छल करेगी. उसे मालूम है कि मैं उसीके लिए जीती हूं. खूब जानती है कि मैं उसकी पूजा करती हूं."

"आह, नन्हीं मूरख बेचारी" लुवीने ममतासे कहा—"क्यों क्या तुम सीधे ही नहीं देख सकते कि उसे यह रईस साहब रक्खे हुए हैं. आह, बदज़ात ही जो न हो."

और उपन्यास जैसे-जैसे आगे बढ़कर खुलता जाता लुवीका रस भी उसमें उतना ही गहरा और उत्कट होता. मैनन अपने आगे होनेवाले मेहरबानो और चाहने वालोंको अपने प्रेमी और भाईकी मददसे जो चूसती और लूटती है सो उसके खिलाफ लुवीमें कोई भावना नहीं है. लेकिन हर नये छल और विश्वासघातकी घटना उसमें क्रोध उत्पन्न करती है. जब कि पति महाशयके दुख और वेदनाके प्रति, जिसे भूलनेके लिए वह क्लबमें ताशमें जमे रहते हैं. लुवीमें आंसू उठते और गिरते है. एक बार उसने पूछा:—

"सोमदेव, यह था कौन लिखनेवाला ?"

"वह कोई फ्रांसीसी पादरी था."

"तो रूसी नहीं था वह !"

"नहीं, कह तो रहा हूं, फ्रांसीसी था. देखो सब उसी तरह है. शहर फ्रांसीसी हैं और लोगोंके नाम फ्रेंच नाम हैं."

"और तुम कहते हो वह साधु पादरी था. तो यह सब उसने जाना कैसे ?"

"बस यह समझो कि जानता था, और क्या ! और यह भी बात है

कि वह हम सबकी तरह दुनियादार था. एक रईस सरदार, और साधु तो पीछे जाकर बादमें हुआ. उसने जीवनमें बहुत कुछ देखा भोगा था. बादमें फिर उसने साधुपन भी छोड़ दिया. लेकिन छोड़ो, किताबके इस पन्ने पर उसके बारेमें खुलासा सब लिखा तो है."

ऐबे प्रीवास्टके चरितके बारेमें लिखा उसने लुवीको पढ़ सुनाया. लुवी ध्यानसे सब सुनती गई. बीचमें साभिप्राय सिर हिलाती जाती. कहीं कुछ ठीक समझमें न आता तो पूछ पूछकर साफ कर लेती. आखिर वह पूरा हुआ कि कुछ सोचते हुए लुवी बोली—"तो यह है जो वह थे. लेकिन सच बहुत ही अच्छा लिखा है. लेकिन वह इतनी नीच और हीन क्यों बन गई. आदमी तो उसे इतना जी और जानसे प्यार करता था. लेकिन वह है कि हमेशा उसको धोखा ही दिये जाती है."

"लुवी मेरी, तुम्हीं सोचो क्या हो सकता है. प्यार तो पतिको वह भी करती है. लेकिन मानिनी स्त्री है और बहिर्मुख. उसे जो चाहिए वे हैं कपड़े और घोड़े और हीरे और—."

लुवी भड़क पड़ी और हथेलीपर दूसरे हाथकी मुट्ठी मारकर बोली—"मैं उसको चूर-चूर कर दूंगी, बदजात फ़ाहिशा. सो इसको कहते हो तुम कि प्यार करती थी. अगर पुरुषको प्यार किया जाता है तो जो उससे आता है वह सब भी तुम्हें प्यारा हो जाता है. वह जेलखाने जाता है तो तुम उसके साथ जेल जाना चाहती हो. वह चोर बनता है, तो हां, तुम उसे मदद करती हो. वह भिखारी है तो भी तुम उसका साथ देती हो. क्या इससे आता जाता है कि तुम्हारे पास रोटीका बस एक वासी टुकड़ा है बशर्ते कि जब तक प्यार है. वह नीच है, निकम्मी है, बदकार है और क्या. लेकिन मैं पतिकी जगह होती तो उसे छोड देती और आह भरने और रोनेकी जगह उसकी ऐसी खबर लेती कि महीनेभर दाग उसके बदनपरसे न हटते बदकार कहींकी"

उपन्यासका अन्त वह क़िसी तरह बहुत समयतक समाप्तितक नहीं सुन सकी. कारण, वह सदा ही सुनते सुनते टूट जाती. सच्ची समवेदनाके आंसू आँखोंमेंसे बहने लगते और पढ़ना रोकना पड़ता. इस तरह अभी

वही अध्याय चार बारमें करके कहीं पूरा किया जा सका,

जेलखानेमें उन प्रेमियोंपर आई विपदाओं और आपदाओंकी कथा और मैननके जबरदस्ती अमरीका भेजे जाने और साथ स्वेच्छासे और त्यागपूर्वक पति महाशयके भी संकट उठाकर उसके पीछे पीछे जानेके इतिवृत्तने लुवीकी कल्पनाको इस तरह छा लिया और मनको ऐसा झकझोर डाला कि वह अन्तमें कुछ भी कहना भूल गई. मैननकी मृत्युके विवरणपर वह विभोर हो आई. कैसी सुन्दर और शान्त वह मृत्यु थी. विस्तृत एकान्त मरुप्रदेश है और वह है. हिलडुल नहीं रही है. छाती पर दोनों हाथ जुड़े रक्खे है और निगाह एकटक दूर प्रकाशपर स्थित है. यह वर्णन सुनती है कि लुवीकी फैली आंखोंमें आंसू बरबस भर आते और तार-तार झड़ीके मानिन्द मेजपर गिरने लगते. लेकिन जब उसके पति महाशय शिवेलियर अपनी प्रिय पत्नीके शवके साथ दो दिन रात पड़े रहनेके बाद अंतमें अपनी तलवारकी मूठसे उस मृत देहके लिए कब्र खोदना शुरू करते हैं तब तो लुवी इस तरह बिसूरकर रो उठी कि सोमदेव घबरा गया और पानीके लिए दौड़ा. लेकिन कुछ स्वस्थ और शांत होनेपर भी वह रह रहकर अपने सूजे और कांपते होठोंसे सुबकती ही रही और बड़बड़ाती जाती.

"ओह, कैसा उनका अभागा जीवन रहा. कैसा कठिन और दुखभरा. प्यारे सोमदेव, क्या यह मुमकिन है कि विधाताका यही विधान हो कि जैसे ही स्त्री और पुरुष एक दूसरेके प्यारमें पड़ें, कि जैसे वे पड़े थे, तो भगवान इसकी सजा देता ही देता है. लेकिन प्रिय, ऐसा क्यों है ? क्यों, क्यों ?

१७

इस प्रकार लुवीकी शिक्षा चल रही थी. आशा थी कि उसका मस्तिष्क और उसकी आत्माका इससे विकास होगा. पद्धति उसकी बीहड़ थी प-

दुनियाबी समझदारीके कांटोंके खिलाफ मानो जौर्जियन प्रिंस और सहृदय सोमदेव बचाव थे. मानो वे हर दबावको अपनेमें जज्ब कर लेते थे. उधर वह लखनपालकी गुरुआईसे भी अप्रसन्न न थी. कारण कि जीवन में पहली बार उसके प्रति उसने अमित, असीम सच्चा प्यार अनुभव किया था. उसके विद्वत्ताके दम्भको उसने ऐसे साफ कर दिया जैसे कि वह उसकी गालियोंको, उसकी मारको, यहांतक कि घोर अपराध तक को क्षमा कर देती. पर सोम वास्तीके हाथों जैसे उसको पढ़ाया जाता वह उसके लिए शुद्ध त्रास था. दिमागपर हर वक्त वह बोझके मानिंद सवार रहता. इन आत्मनियोजित शिक्षकोंमेंसे एक वह था जो गोया क़सदन सबसे ज्यादे वक्तका पाबन्द था. तनख्वाहदार ट्यूटर भी जितना नियमित होता उससे ज्यादे ही नियमित वह था.

अपने मतमें दृढ़ और अडिग, विश्वासमें कठिन, भाषामें स्पष्ट और वक्तव्यमें उपदेशात्मक. वह ऐसे चलता कि लुवीकी गति मति हर रहती. उसकी सुध-बुध खो जाती. नये आए विद्यार्थियोंकी सभामें वह अक्सर इसी तरह उनके कच्चे और संकोची दिमागोंपर छा रहता. वह अक्सर विद्यार्थी-सभाओंमें बोला करता. भाषणोंके छापने बांटनेमें वह अक्सर हिस्सा लेता, अक्सर वह मानीटर चुना जाता और छात्र-फंड आदिके मामलोंमें बहुधा वह सक्रिय दिखाई देता.

वह उन लोगोंकी गिनतीमें था जो विद्यार्थी अवस्थासे निकलकर पर्टियोंके नेता बना करते हैं. वे स्वार्थ-त्यागी और पवित्र अंतःकरणके निर्बाध विधाता होकर. कहीं किसी छोटे-मोटे प्रदेशमें अपने राजनीतिक मंचका निर्माण करते और देशभर का ध्यान अपनी पराक्रमपूर्ण पर दयनीय दशापर खींचना चाहा करते हैं. तब फिर अपनी व्यतीत सेवाओंकी दुहाई देते हुए किसी बड़े नेताका सहारा थामे, या डेपुटेशनके बलपर, या किसी सुभीतेकी शादीके सहारे छोटी-मोटी प्रभुता और सम्पत्ति आसपास खड़ी कर लेते और उसमें रम रहते हैं. उन्हें जैसे स्वयं नहीं मालूम होता, और ऊपरसे देखनेवाली निगाहोंको भी मालूम नहीं होने पाता. और वे ढलकर किनारे खड़े हो जाते हैं. या ज्यादे सही यह कहना

चाहिये कि श्लथ और शिथिल वे अपना पेट बढ़ा चलते हैं और फिर बीमारियां उन्हें अजीर्णकी और जिगरकी हुआ करती हैं. तब वे सारी दुनियापर खीजते और खिजलाते हैं. कहते हैं कि उन्हें सही समझा नहीं गया और समय उनका था कि जब आदर्शोंका मूल्य और महत्व था. दूसरी ओर वे ही लोग परिवारोंमें हाकिम बनकर रहते और अक्सर सूद-बट्टेपर रुपया चढ़ाया करते हैं.

लुवीकी शिक्षा विधिका ढंग उसके मस्तिष्कमें साफ था यों जो भी योजना वह बनाता उसकी हर चीज उसके सामने साफ होती और निश्चित और अनिवार्य. उसका निर्णय था कि पहले लुवीको पदार्थ-विज्ञान और रसायन शास्त्रके प्रयोगोंका ज्ञान मिलना चाहिए.

उसने सोचा, एक किशोर स्त्री-मस्तिष्क उन विज्ञानोंके समक्ष चकित हुए बिना रह न सकेगा और इस प्रकार में उसका ध्यान एक ओर खींच सकूंगा. छोटे-छोटे प्रयोगों और युक्तियोंसे में उसे जगतके ज्ञानके एकदम केन्द्रमें ले जाऊंगा कि जहां कोई मिथ्या विश्वास नहीं है, न दृढ़ मान्यतायें. बल्कि जहां प्रकृतिको सीधे समझने का विस्तृत क्षेत्र फैला है.

कहना होगा कि वह अपने शिक्षाक्रममें नियमित न था. लुवीमें अचरज पैदा करनेको उसे जो हाथ लगता वही साथ खींच लाता. एक बार खुद-का बनाया हुआ एक बड़ासा सांप ही ले आया और एक गत्तेकी बनी हुई लंबी नलकी जिसमें बारूद ठूंसकर भर रक्खी थी और उसे मोड़तोड़कर बाजेकी शकल दी हुई थी, चारों ओरसे उसपर पट्टी बंधी थी. आकर इस बाजेमें उसने बत्ती दिखाई और सांप बहुत देर तक हिसहिसाता हुआ खानेके कमरेमें, सोनेके कमरेमें, उछल कूद मचाया किया. सारेमें पटाखेकी सी आवाजें छूटती रहीं और गंध और धुंआ भर गया. लुवीको इससे कोई खास अचरज नहीं हुआ. बल्कि उसने कहा कि यह तो सीधी-सादी आतिशबाजीकी चीजें हैं. यह सब उसका देखा हुआ है और तुम इस तरह उसे अचम्भेमें नहीं ला सकते. आखिर उसने कहा कि अच्छा खिड़की तो खोल दूं. उसके बाद वह एकब ड़ी सी शीशी लाया, कुछ और

इधर उधरकी चीजें जमा कीं और एक शिगूफा तैयार किया. उससे कोई बहुत जोरका तो नहीं ताहम कुछ न कुछ धमाका हुआ.

लुवीकी कन्नी उंगलीमें वहाँसे छूटी एक चिंगारी छू गई और लुवी चिल्लाई—'ओह दैया, तुझे मौत ले जाय'.

तदनंतर रेतीसे मिलाकर मेंगनीज पेरोक्साइडको गरम किया गया. दवाखाने जैसी एक काँचकी नली ली, पिचकारीमेंसे गटापार्चा वाला सिरा निकाला, एक चिलमचीमें पानी भरा और अचार मुरब्बे वाला काँचका अमृतबान खाली किया. ऐसे आक्सीजन खींची गई. अमृतबानके अन्दर वह लाल सुर्ख डाट और कोयला और फोस्फोरस इस कदर रोशनी देकर जल आये कि आँखें चौंधिया पड़ीं. लुवी ताली बजा उठी और खुशीके मारे चिल्लाई. "प्रोफेसर साहब जरा और, थोड़ा और प्रोफेसर साहब".

लेकिन जब एक खाली बोतलमें आक्सीजन और हाइड्रोजनको मिलाकर एहतियातके तौरपर उसे फिर तौलियेमें लपेटकर लुवीके हाथमें दिया और सोम वास्तीने कहा कि इसके मुँहको जलती-मोमबत्तीकी लौके पास लाकर खोलो तो वह झिझकी. खोलना था कि जोरका धमाका हुआ. ऐसा कि तीन चार तोपें एक साथ छूटी हों. उस धमाकेसे ऊपर छतका प्लास्तर उपड़कर नीचे गिरा तब लुवी मारे डरके काँप गई और फिर जैसे तैसे पूरी सुध पाकर काँपते होठोंसे, मगर रौब रखते हुये बोली.

"माफ कीजिये, लेकिन चूँकि अब मेरा अपना घर है, मैं यूंही एक लड़की नहीं हूं, बल्कि इज्जतदार स्त्री हूँ. इससे मैं कहूँगी कि मेहरबानी करके आप मेरी जगह इस किस्मकी कार्रवाई न करें. मुझे खयाल था कि पढ़े लिखे और सलीकादार आदमी होकर आप जो कीजियेगा मुनासिब और मुबारक होगा. लेकिन आप बेवकूफीकी बातें करने लग गये. उसके लिये किसीको जेल तकमें बिठाया जा सकता है".

पीछे हां बहुत बार उसीने बताया कि पहले एक तालिब इल्म दोस्त था जिसने उसके सामने डायनेमाइट तैयार करके दिखाया था. निश्चय

ही यह सोम वास्ती आखिरकार कुछ मोटी अकलका आदमी रहा होगा. वही कि जो अपनी तरुण मंडलीमें इतना प्रभावशाली था जहाँ ज्यादेतर सिद्धान्त और तत्वकी बातोंसे काम पड़ता था. इसे पहेली ही कहना चाहिये कि जब उसीके हाथों व्यावहारिक प्रयोगके लिये एक जीता जागता जीव पड़ा तो वही तीन तेरह हो रहा. फिर भी इस अकृतार्थताको उसने प्रगट नहीं होने दिया इसको खूबी ही कहना होगा.

विज्ञानके इन वस्तुगत प्रयोगोंकी असफलताके बाद वह तुरंत मनोविज्ञान और आत्मविज्ञानकी तरफ बढ़ा.

एक दिन उसने ऐसी निश्चयात्मक वाणीमें कि जिसका प्रतिशोध सम्भव ही नहीं है कहा, कि कहीं कोई ईश्वर नहीं है, और देखो यह मैं पाँच मिनटके अन्दर साबित कर दे सकता हूँ. लुवी यह सुनकर अपनी जगहसे उछल आई और मज़बूतीसे बोली कि पहले वेश्या रही है तो क्या, ईश्वरमें उसका विश्वास है और अपनी मौजूदगीमें किसीको उनका अपमान नहीं करने देगी. आगे कहा कि अगर तुम ऐसी ही बेहूदा बात करते रहे तो वह लखनपालसे शिकायत कर देगी.

"मैं यह भी उनसे कहूँगी," आँसू भरे लहजेमें वह कहती गई, "कि पढ़ाने और सबक सिखानेके बजाय तुम वाहियात बातोंके सिवाय कुछ नहीं करते. और ऐसी गन्दी बकवास करते हो और हर वक्त अपना हाथ मेरे घुटनोंपर रखे रहते हो और यह सही और मुनासिब बात नहीं है." और यह कहकर लुवी, जो आम तौर पर बेहद डरी सी रहती थी, इसके साथकी जान पहचानके कालमें पहली बार तेज़ीसे उससे परे हट गई.

इन कुछ अकृतार्थताओंके बावजूद सोम वास्तीका प्रयास जारी ही रहा. लुवीके मन और मस्तिष्कपर प्रभाव लानेका प्रयत्न उसने तोड़ा नहीं. उसने प्राणीकी उत्पत्ति और विकासका सिद्धान्त समझानेकी चेष्टा की. कैसे आरम्भ अमीबासे हुआ और नेपोलियन तक विकासका चरम पहुँचा. लुवी ध्यानसे उसे सुनती गई. इस सारे काल उसकी

आँखोंमें जैसे कि याचना थी. मानो वह मूक भावसे जानना चाहती है कि आखिर यह सब तुम खत्म कब करोगे. उसने रूमाल मुंहके आगे लेकर जमुहाई ली और अपराध भावसे कहा—माफ़ करना जरा थकावट हो गई है. मार्क्सको भी उसी तरह सफलता नहीं मिली. माल, मूल्य, मूल्यका रहस्य, मालिक, मज़दूर जो कि सिर्फ़ अंक बन गये हैं—यह सब शब्द थे जो हवामें बनते और गूंजते रह जाते थे और लुवी बेचारी सीधी और भोली सुनती सुनती एकाएक खुशीसे उछल पड़ती—जब पता पाती कि दाल अंगीठीपर उबलकर छलक पड़ी है या लगता कि दरवाज़ेपर कोई आकर खटखटा रहा है !

यह तो नहीं कहा जा सकता था कि स्त्रियाँ सोम वास्तीको पसंद नहीं करती थीं. उसका अमित् आत्म-विश्वास उसकी सशक्त निश्चयात्मक वाणी साधारण नारियोपर सदा प्रबल प्रभाव उत्पन्न करती. खासकर वे जो कोमल वय की होतीं और सरल भावसे विश्वासी स्वभाव की. वह लम्बी देर तक चलनेवाले प्रेम-व्यवहारोंसे बाहर निकल आने में कुशल था. या तो वह जतलाता कि उसके ऊपर बड़े महत्त्वके काम का दायित्त्व डाल दिया गया है जिसके कारण प्रेम वग़ैरहकी फ़ुरसत उसे नहीं है. या दिखलाता कि वह तो पुरुषोत्तम है कि जिसपर बन्धन नहीं और जिसे सब जायज़ है. लुवीका प्रतिरोध यों प्रत्यक्ष न था और कुछ निष्क्रिय भी था, पर था वह निश्चित और निरन्तर. पर यह रुख उसको उभारता और चहकाता था. खास तौरसे जो उसे क्षुब्ध और उद्दीप्त करती यह बात थी, कि लुवी जो हर किसीके लिये ऐसी सुगम और सुलभ थी, जो हर दो रुपये फी कस देने वाले कई कई आदमियोंको अपना शरीर हठात् सौंपती रही है, वही उसे यह दिखानेकी कोशिश करे कि लखनपालके लिए उसका प्यार स्वार्थहीन और पवित्र है, नहीं नहीं!

आत्मापरसे पतत और पापकी लकीरें पूरी तरह कभी भरती नहीं हैं और यौन व्यवहारकी वीभत्सतायें स्मृतिसे पूरी तरह धुलकर कभी साफ़ नहीं हो पातीं.

'झूठ, बेकार !' वह सोचता, 'यह सच हो ही नहीं सकता. वह तो बस नाटक रच रही है..........और मालूम होता है कि मैं अभी उसके मनके सही सुरपर हाथ नहीं रख सका हूँ.'

दिन गुज़रनेके साथ उसकी माँगका दबाव बढ़ता गया. उसकी सख़्ती बढ़ती गई. वह अधिकाधिक दोष निकालने लगा. शायद यह वह जान-बूझकर नहीं, आदतवश करता था. उसे जैसे अपने प्रभुताके प्रभाव की टेव थी जिससे सामनेवालेका विचार दब रहता और इच्छा-शक्ति अधीन हो रहती. उसे इस स्वभावमें पराजय शायद ही कभी मिली थी.

एक दिन लुवीने लखनपालसे इसकी शिकायत की. "लखनपाल, वह मेरे साथ सख़्ती बरतते हैं, और जो वह कहते रहते हैं उसका एक शब्द मेरी समझमें नहीं आता. अब और पाठ मैं उनसे नहीं लेना चाहती."

लखनपालने उसे समझाकर शान्त किया और फिर सोम बास्तीसे बात की. उसने कुछ अतिरिक्त स्थिर भावसे कहा, "जैसी तुम्हारी इच्छा हो बन्धु ! अगर तुम और लुवी मेरी शिक्षा पद्धतिसे सहमत नहीं हो, तुम्हें वह रुचिकर नहीं है, तो मैं उसे स्थगित करनेको उद्यत हूँ. मेरा कर्त्तव्य बस यह था कि उसकी शिक्षामें मैं शिस्त और संयमका प्रवेश करूँ. अगर मेरी भाषा वह नहीं समझती है तो मेरा प्रयत्न होगा कि वह उसे ज्योंका त्यों याद रख ले. आगे यह आवश्यक न होगा. पर अभी तो अनिवार्य है. तुम्हीं याद करो बन्धु लखनपाल कि हमें अंक-गणितसे बीजगणितपर आना हुआ, सीधे-सादे अंकोंकी जगह अक्षरोंको हमें स्वीकारना पड़ा, तो हमें कितनी कठिनाई हुई थी. तब हम क्या उसका कारण समझ पाते थे. या क्यों हमको व्याकरण सिखाया जाता है, सीधे क्यों नहीं कह दिया जाता कि कहानियाँ लिखो और कविता लिखो. क्यों, है न बन्धु ?"

और अगले ही रोज़ लुवीके ऊपर काफ़ी झुककर उसके वक्ष भागसे लगभग समतल बैठा वह उसके शरीर सौरभका आस्वाद लेता हुआ कह

रहा था, "एक त्रिभुज खींचो – हाँ, यह ठीक है. अब मैं इसके उत्तर कोए पर अक्षर लिखता हूं—'प'. 'प' यानी 'प्रेम'. दूसरे दो कोणोंपर अक्षर हैं, म और स. यानी मनुष्य और स्त्री. कुलका मतलब हुआ मनुष्य और स्त्रीका प्रेम."

फिर एक परम गुरुके भावसे निश्चल और अतर्क्य वह जाने मिथुन प्रेमकी कितनी ही और क्या क्या बातें कहता चला गया. और अन्तमें अकस्मात् मानो परिणाम निकालता हुआ बोला, "अब सुनो लुवी, प्रेमकी कामना ऐसी ही है जैसे भोजनकी, जलकी कामना. सांस लेना आवश्यक है वैसे ही आवश्यक यह भी है. और कहकर उसने घुटनेके ऊपर उसकी जाँघको दबाया. लुवी अचकचा आई, पर वह चोट नहीं देना चाहती थी इससे उसने हल्केसे और धीरे-धीरे अपनी टाँगको अलग हटा लिया.

"अब यह देखो," उसने कहना जारी रखा, "क्या सोचती हो कि अगर एक रोज संयोगसे तुम घरपर न खा सको तो क्या तुम्हारी बहिन या तुम्हारी मां, या तुम्हारे पति इस बातपर बिगडेंगे कि तुम उस रोज किसी रेस्टोरांमें या दूसरी जगह खाना खाकर अपनी भूख शान्त कर लेती हो. यही प्रेमके बारेमें सच है. वह भी शरीरके एक रसका आस्वाद है, एक आवश्यकता है, न कम न ज्यादा. शायद दूसरे रसोंसे यह प्रबल है, आवश्यकता वेगवान है. बस, हो तो यही फर्क है. उदाहरणके लिए मैं—यह—तुम्हें स्त्रीके रूपमें चाहता हूं जब कि तुम..."

"ऐ मिस्टर", बीचमें ही लुवी छिड़ी हुई-सी बोली, "यह सब छोड़िए. आप उसी सुरमें गाए जा रहे हैं, जैसे और बात न हो. कितनी दफे मैं मने कर चुकी हूं. फिर कहती हूं. आप समझते हैं, मैं नहीं जानती आप किधर लिए जा रहे हैं. मैं हरगिज बेवफा न हूंगी. क्योंकि लखनपालने मुझे सहारा दिया है, मेरा उपकार किया है, मैं सारे दिलसे उन्हें प्यार करती हूं...पूजा करती हूं, और आप—आपकी बात-चीत सबसे मुझे नफरत, हिकारत होती है."

एक रोज़ सोम वास्तीने लुवीको गहरी चोट पहुंचाई और उसे बेहद

मुसीबतमें डाल दिया. और सब यह अपनी असूली धारणाओंकी वजहसे. जबसे लखनपाल लुवीको घर लाया तभीसे यूनिवर्सिटीमें उसके चकलेसे एक लड़कीको बचाने और उसका नैतिक उद्धार करनेकी चर्चा थी. स्वाभाविक ही था कि स्त्री विद्यार्थी भी इस चर्चाको सुनें और यह सब सोम वास्तीके हाथों बदा था कि वह चार लड़कियोंको लेकर लुवीसे मिलाने जा पहुंचा. दो उनमें मेडिकलकी छात्रा थीं, एक इतिहासकी विद्यार्थिनी थी और चौथी उदीयमान कवियित्री थी जो आलोचनात्मक निबन्ध भी लिखा करती थी. उसने अति-गम्भीर और बेहद वाहियात तरीकेसे उनका परस्पर परिचय कराया.

"लीजिए", संकेतसे पहले अभ्यागतों और फिर लुवीकी ओर संकेत करके उसने कहा, "आइए, परस्पर परिचय हो जाए. लुवी, इन लोगोंमें तुम्हें सच्ची सखियां मिलेंगी. ये तुम्हें जीवनके इस नए और प्रशस्त मार्गपर बढ़ते जानेमें बड़ी सहायक होंगी. और आप लोग,—जी, आपसे ही कह रहा हूं—लीजिए, नादिया, साशा और ऐशा ! इस प्राणीको आप अपनी बड़ी बहिनकी तरह मानें. क्योंकि अभी वह उस भयावने अंधियारेमें से निकलकर आई है जहां कि सामाजिक व्यवस्थाके दोषने आधुनिक स्त्रीको बिठा रखा है."

शब्द शायद उसके यही न थे, लेकिन आशय यही था. लुवी सुनकर चुकन्दरकी तरह लाल हो गई. उसने असमंजससे मिलानेके लिए हाथ आगे बढ़ाया. उंगलियां उसकी आपसमें उलझी-सी रह गई थीं, खुल न पाई थीं. ये शहरी लड़कियां तरह तरहके छपे ब्लाउज पहने थीं और चमड़ेकी पेटियां कसे थीं. उसने उन्हें चाय पेश की और साथके लिए कुछ दूसरी चीजें भी रखीं. जल्दी जल्दी उनकी सिगरेटके लिए जलाकर दियासलाई सामने की और उनके कितने ही कहनेपर भी बैठी नहीं. उसकी बोलती बन्द हो आई थी, और बस 'हां' या 'ना', या 'जी अच्छा' में ही जवाब देकर रह जाती थी. और जब आगन्तुकोंमेंसे एकका रुमाल नीचे गिर पड़ा तो लुवीने दौड़कर झट उठाया और उसे दे दिया.

एक उनमें स्थूलकाया थी. उसकी आवाज भारी, गहरी और चेहरा सुर्ख था. गाल बाहरको फैले हुए थे जिनपर दबी-सी नाक उभरकर अजब दृश्य उपस्थित करती थी. और उसकी छोटी काली आंखें अपनी गहरी वादियोंमेंसे बटन की भांति चमकती थीं. वह लुवीको सिरसे पाँव, पाँवसे सिरतक देखती रही. मानो दूरबीनसे मुआयना कर रही हो. उसकी दृष्टिमें अवहेलना थी. उस निगाहके नीचे लुवी अपराधिन अनुभव कर आई. 'ऐसे यह मुझे क्या ताक रही है. मैंने कोई उसका प्रियतम तो उससे छीन नहीं लिया है.' दूसरी लड़कीने सवाल पूछना शुरू करके बड़ी अभद्रताका परिचय दिया. उसके लिए यह पहला अवसर हो सकता था. पर लुवीके लिए तो यह सवाल असंख्य बार आ चुके थे. पूछा कि तुम वेश्या बनी कैसे. पूछनेवाली लड़की सुन्दर थी, पीत वर्ण, तनिक चंचल और चेहरेपर सूक्ष्म-अस्थिरताका भाव था. बाल उसके हलके थे, और कुल मिलाकर बिगड़ी बिल्लीकी बच्ची-सी जान पड़ती थी. यहां तक कि गर्दनके चारों ओर पड़े गुलाबी रिबन तक से यह भाव फूटता था.

"मगर यह बताओ कि वह बदमाश था कौन, यानी वह पहलेवाला—समझती हो न ?"

लुवीकी आंखोंके सामनेसे उसकी पुरानी सखी जेनी और तिमिराके चेहरे घूम गये. कितनी निर्भीक, कितनी मानिनी और कितनी व्युत्पन्न. ओह ! इन लड़कियोंसे वे कितनी न चतुर थी. और इतने अकस्मात् कि खुद उसको अचरज हो आया. वह काटती सी बोली.

"कितने तो थे······मैं भूल गई···· कौल्का, मिशका, वौलोटका सेरेश्का, जोज़ेफ, कौश्का, पेट्का और उनके बाद मुन्का और बुश्का और उनके क़ई दोस्त—क्यों, आपको उनमें दिलचस्पी है ?"

"ऐं, नहीं······मैं चाहती थी······एक तुम्हारे, समझो हमदर्दकी तरह······.

"तुम्हारा कोई आशिक है ?"

"माफ कीजिये ? मैं समझी नहीं—तुम यह किस तरहकी बात कर रही हो ? लड़कियों, आओ अब चलना चाहिए."

"क्या मतलब तुम्हारा, यानी मैं नहीं जानती कि मैं क्या बात कर रही हूं ? पूछती हूं, कभी तुम मर्दको लेकर सोई हो ?"

"सोम वास्ती महोदय, मैं नहीं समझती थी कि आप हमको कभी इस तरहकी औरतसे भी मिलाने ला सकते हैं, बहुत धन्यवाद है आपका. बड़ी कृपाकी आपने."

लुवीके लिये अपने भय और कातरताको जीतना और बातचीतमें आगे बढ़ना मुश्किल होता था. वह उन स्वभाववालियोंमें थी जो धीरज और सन्तोषसे देर तक सहती जा सकती थी. लेकिन जो फिर कभी एकाएक फट भी पड़ी कि फिर जो हो थोड़ा है !

"लेकिन मैं जानती हूं" वह घृणा और द्वेषसे चीखती सी बोली, "जानती हूं कि तुम मुझसे कोई घटकर नहीं हो. तुम्हारे बाप है, मां है, तम्हारे लिये घर-बारका इन्तजाम है, और जरुरत हो तो गर्भ गिरानेका प्रबन्ध हो जाता है. तुम बहुतेरी ये करती हो, पर अगर तुम मेरी जगह होतीं जहाँ खानेको कुछ हो नहीं, बच्ची, नासमझ और अपढ़—क्योंकि मैं अपढ़ हूं—और चारों तरफ तुम्हारे आदमी ऐसे घिरे होते जैसे मौसम में कुत्ते—तो क्यों, क्या तुम भी चकलेमें ही न बैठी होतीं ? क्यों, तुम्हें एक गरीब लड़कीकी पत उतारते शर्म नहीं आई ?"

यह झमेला देखकर, जो उसीके कारण पैदा हुआ था, मानो झंझटसे निकलते हुए सोम वास्तीने उसे निरर्थकसे मीठे उपदेश भरे शब्द कहे जैसे कि पुराने नाटकोंमें परम मान्य गुरुजन आदि कहा करते हैं, और वह महिलाओंको साथ ले गया.

लुवीकी आजाद जिन्दगीमें इस सोम वास्तीको और भी भाग लेना बदा था. वह कमीना और बेहयाईका भाग था. लुवीने लखनपालसे कई बार शिकायतकी थी कि सोम वास्तीके आनेपर वह घबरा-सी आती है. लेकिन उसने इस तरहके स्त्रियोचित वहमों पर ध्यान देनेकी जरूरत

न समझी. वह सोम वास्तीकी दूनकी बातोंके जादूमें था. यह आदमी सोम वास्ती गुमानसे भरा था और बोलता तो बढ़ चढ़कर प्रभावशाली तरीकेसे बोलता था. लखनपाल उसके रोबमें था. कुछ प्रभाव ऐसे होते हैं कि उनसे छूट पाना मुश्किल होता है, यहाँ तक कि असम्भव ही कहिए. दूसरी तरफ़ हर दिन और हर रात लुवीके साथ रहने सोनेसे वह तंग था और थक गया था. अकसर सोचता, 'वह मेरी जिन्दगीको बरबाद कर देगी. मैं नीच निकम्मा और कुन्द बनता जा रहा हूँ. मैं एक बेवकूफ़ीकी परोपकारितामें डूबा जा रहा हूं ..... और अन्तमें दीखता है, होगा यह कि मुझे उससे ब्याह करना होगा. फिर या तो महकमा आबकारीमें या किसी अदालती दफ्तरमें जाकर मुलाज़मत करूँगा, या मुदर्रिस बन जाऊँगा. रिश्वत लेना शुरू कर दूँगा और यहाँ वहाँकी हाँका करूंगा. एक मामूली कस्बेके सड़ियल चकँफिरनेकी तरह जुएमें जुता घूमा करूंगा. और सब मेरे सपने...मस्तिष्ककी शक्तिके, जीवनके, सौंदर्यके, मानव-प्रेम और विश्व-प्रेमके, क्रान्तिके और पराक्रमके . तब ये सपने मेरे क्या होंगे, कहाँ रहेंगे ?'

कभी वह अपने आपसे ही ज़ोर ज़ोरसे बोल आता और बालोंमें उंगली डालकर सिरको झिझोड़ता इस तरह लुवीकी शिकायतोंपर ध्यान देनेकी जगह वह उसकी बातपर उलटे झुंझला पड़ता, चीख़ चिल्लाने लगता, और पैर पीट आता. ऐसे समय विचारी लुवी सहमी और डरी चुप हो रहती और जाकर अपने रसोई घरके एकान्तमें अकेली आंसू बहा लेती.

ऐसे आपसी झगड़ोंके बाद तनिक मेल होनेपर वह और भी निरन्तरता से कहता, "प्यारी ल्यूबा ! तुम देख ही रही हो कि हम दोनों एक दूसरेके अनुकूल नहीं पड़ते. देखो ये सौ रुपये हैं, लेकर तुम अपने गाँव चली जाओ. तुम्हारे रिश्तेदार तुम्हें वापिस देखकर खुश होंगे. वहाँ अपने कुछ रोज़ रहो, और दुनिया देखो भालो. दो महीनेमें मैं तुम्हें लेने पहुंच जाऊँगा. इस बीच तुम आरामसे रहोगी और जो कुछ गन्दा

गलीज शहरने तुम्हारे अन्दर डाल दिया है झर जायेगा और गायब हो जायेगा. तब तुम नई जिन्दगी शुरू कर सकोगी. तब तुम अपने अवलम्ब पर रहोगी, सहारेकी जरूरतसे दूर. अपने स्वाभिमानमें स्वाधीन और स्वतन्त्र."

लेकिन उस स्त्रीके साथ क्या किया जा सकता है जो पहली बार प्रेम में पड़ी हो. और जैसा कि वह समझती थी, आखिरी बार. उसे क्या कभी मनाया जा सकता है कि बिछुड़ना जरूरी है? वह कभी तर्ककी सुन भी सकेगी ?...... और लुवी रह गई.

लखनपाल यों सोम वास्तीके रोबमें था. उसके पुष्ट आश्वासनोंका आदर करता था. उसके निर्णय और वक्तव्योंका मान करता. तो भी मन ही मन असलियतका उसे अनुमान था. वह अन्दरसे अनजाने ही अनुभव करने लगा था कि उसके मित्रका लुवीके प्रति क्या भाव और झुकाव है. फिर वह स्वयं लुवीसे छुटकारा चाहता था. उस सम्बन्धका बोझ उसे भारी लगने लगा था. ऐसी अवस्थामें उसने पाया कि उसमें दुष्टता उठ रही है और वह सोच रहा है. 'सोम वास्ती उसे चाहता है. ल्यूबाके लिएइस में क्या अन्तर है कि मैं हूँ, या वह है, या कोई दूसरा है. मैं उससे खुलकर बात क्यों न कर लूँ जैसे दोस्तसे दोस्त करता है और उसे ल्यूबाको ले लेने दूँ. पर वह मूरख, कम्बख्त मानेगी जो नहीं. वह तो आससान उठाने लग जायेगी."

"अगर कहीं मैं दोनोंको साथ पकड़ पाऊँ ?" उसके ख्याल आगे बढ़ते गये, "किसी खास सबूतकी हालतमें.....तो मैं बस ढकना उघाड़ दूँ......तब मैं एक दृश्य खड़ा कर सकता हूँ और फिर आरामसे, कृपाके भावसे .. हाथमें लेकर कुछ रुपया सामने करूँ—और छोड़कर चल दूँ."

वह कई कई दिन घरसे बाहर रहने लगा. लौटकर घर पहुंचता तो जिरह पर जिरह होती. दृश्य बनते, आँसू ढरते और कभी हिस्टीरियाके दौरे भी पड़ जाते. वह घरसे बाहर निकलता तो लुवी पीछे-पीछे जाती. जिस मकानके दरवाजेमें घुसता वह सड़क पार उसके सामने ही खड़ी

रहती. मुद्दत देर तब तक खड़ी रहती जब तक कि उस दरवाजेसे वह वापिस न आ जाता. और तब खुली सड़कपर ही जोर जोरसे सुबककर रो-रोकर वह उसे प्रेमके उलहनोंकी बौछारसे छा देती. उसके खतोंको वह बीचमें रोक लेती पर वह खुद ठीक तरह पढ़ना अभी जानती न थी. न मददके लिए सोमदेव या नेजरसके पास जानेकी हिम्मत कर सकती थी. वह उन पत्रोंकोअ लमारीमें ही जहाँ तहाँ कभी चीनीके साथ, तो कभी चायके डिब्बेके पीछे या नींबुओंमें छुपा देती. आखिर वह इस हालत तक पहुंच गई कि अपनेपर वह तेजाब छिड़कनेकी धमकी दे बैठी.

लखनपाल जब बचावकी कोई शैतानी भरी तदबीर सोच पानेकी जुगतमें उलझा था, तभी विचार आया कि मरे कम्बख्त ! सोम वास्ती और उसके दोनोंके बीच कुछ न भी हो तो भी क्या फ़र्क पड़ता है. बखेड़ा ही जो करना हुआ. मैं वह सीन खड़ा करूँगा, वह हैवतनाक......और इल्ज़ाम दोनोंपर डालूँगा.

और वह ध्यानपूर्वक दोहराता और मानो सिद्ध करता कि ऐसे समय वह क्या क्या कहेगा. विस्मयसे कहेगा, 'आह! तो यह बात है. मैंने तुम्हें अपने दिलसे लगाया और मुझे ही यह देखना बदा था. नीच बेवफा !.. और तुम, तुम मेरे नजदीकी दोस्त! तुमने यह मेरी खुशीपर डाका डाला. पर नहीं, नहीं...मैं तुम्हें जुदा न करूंगा. अपनी आंखों-में आंसू लेकर मैं चला जाऊंगा. मेरी यहां जरूरत नहीं है. मैं तुम्हारे प्रेममें विघ्न न बनूंगा... ..." इत्यादि, इत्यादि, इसी तर्जमें.

और होनहारकी बात, उसकी यह आशाएं, यह गुप्त योजनाएं पूरी उतरीं. मनके अन्दर उठनेवाली ये चीजें बिखरी-सी थीं, सूत्रहीन, आकृतिहीन और सिद्धान्तसे हीन. ये होती हैं, पर ऐसे कि आदमी पीछे मान सकता है—नहीं भी थी. लखनपालके साथ वह पूरी हो आई. उस दुर्भाग्यके दिन सोम वास्ती जब पहुंचा तो ल्यूबाका दिल निराशासे छलनी हुआ पड़ा था. उसने मुँह बिचकाकर स्वागत किया. यह विद्याके गर्वसे प्रमत्त अध्यापक और गर्वोन्मत्त नर-पुरुष इधर उसे बहुत अरुचि-

कर हो गया था.

इस बार उसने आकर अपने सिद्धान्तका प्रतिपादन शुरू किया, सिद्धान्त यह कि नियम नहीं होते, न अधिकार, न कर्त्तव्य, न धर्म न पाप. कारण कि मनुष्य एक पूर्ण इकाई है. वह स्वयं है. हर किसी और हर कुछसे स्वाधीन और स्वतन्त्र! मनुष्य देव है, वह ईश्वर हो सकता है. शेष सब दशाएं हैं. उनसे अन्तर नहीं पड़ता.

आगे वह प्रेम भावनाओंके तत्त्वविज्ञानके विवेचनमें जाता. पर दुर्भाग्यसे वह इतना अधीर हो आया था कि उसके बजाय उसने अपनी बाहोंको लुवीके परिवेष्ठनमें डाल लिया और उसके शरीरको जहां तहाँ पर हथियाने लगा. उसकी हिसाबदां आत्माने सोचा कि उसमें हल्के हल्के उद्दीपन आ जाएगा और वह आत्म-समर्पण कर देगी. वह उसके अधरोअष्ठको लेना चाहता था, पर वह गुस्सेसे हांफ रही थी और चीख चिल्ला रही थी. शिष्टताका सब आवरण उससे दूर हो गया था. "दूर हो, चंडाल, सुअर, कुत्ते, ! मैं तेरी यह गंदी थुथनी झाड़ दूंगी."

चकला घरोंका शब्दकोष उसे फिर प्रस्तुत हो गया था. सोम वास्ती का फैन्सी चश्मा गायब हो चुका था. उसका मुँह बिगड़ आया था और मदसे लाल आंखोंसे ल्यूबाको देखकर जो मुंहमें आया बके जा रहा था.

"मेरी प्यारी .. क्या बात है...खुशीका एक जाम, एक पल...हम उसमें एक हो जाएं...किसीको पता न हो. मेरी रानी, मेरी—"

इसी समय लखनपालने कमरेमें प्रवेश किया. निश्चय है कि उसने मनमें नहीं माना कि वह भारी नीचता करने जा रहा है. एक तटस्थ दूरगत रूपमें केवल यह सोचा कि उसका चेहरा पीला होना चाहिए और शब्द दुखसे, व्यंगसे और व्यथासे भारी होने चाहिएं.

नाटकके चौथे अंकमें उपस्थित अवस्थामें हो इस तरह हाथोंको दोनों ओर निराशामें गिराकर अपनी छाती तक झुके सिरको धीमेसे हिलाकर उसने जड़ीभूत आवाजसे कहा, "हां, मैं सोचता तो था. डर भी था, पर यह...तुम्हें मैं कुछ न कहूंगा ल्यूबा. तुम अभी आदिम हो, अबोध

हो लेकिन तुम सोम वास्ती, हमेशा मैं तुम्हें समझता था और अब भी समझता हूं कि तुम ईमानदार वफा जानते हो पर अब समझा . उन्माद, विवेकके सब तर्कोंसे जबर्दस्त होता है ये पचास रुपए हैं. इन्हें ल्यूबाके लिए छोड़े जा रहा हूं. चाहो तो पीछे लौटाते रहना. उस बारेमें मुझे शक नहीं है. इस बिचारीके लिए तुम कुछ करना चाहते हो? तुम समझदार हो, होशियार हो, सहृदय हो, और ईमानदार हो. और मैं ? ('एक दुष्ट—'कहीं अपने अन्दरसे किसीके बोलनेकी स्पष्ट शब्दों में उसने आवाज सुनी.) मैं जा रहा हूं, क्योंकि यह दृश्य, यह छल, यह वेदना और मुझसे सही नहीं जाती. खुश रहो..."

यह कहकर उसने जेबसे बटुआ खींचा और एक अदाके साथ सामने मेजपर फेंक दिया. फिर उसने बाल हाथोंमें लिए और कमरेके बाहर झपट गया. दरवाजेमेंसे फिर भी वह कहता गया, "पासपोर्ट तुम्हारा, मेरे डेस्कमें है"

छुटकारेका यह उपाय उसके लिए सर्वोत्तम हुआ और पात्रका जो दृश्य उसने अभी खेला था हूबहू उसी तरह घटा जैसा उसने सपनेमें देखा था.